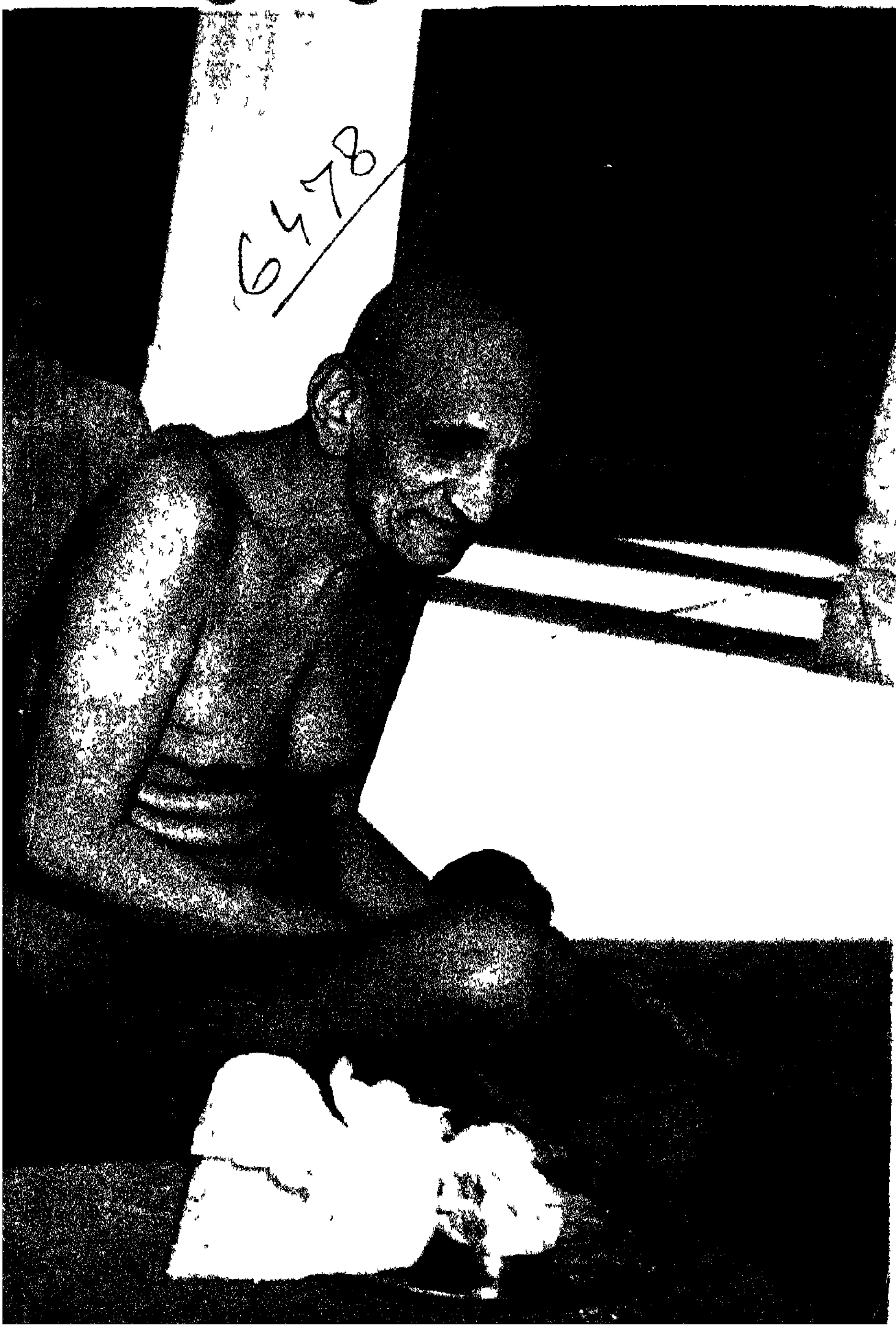
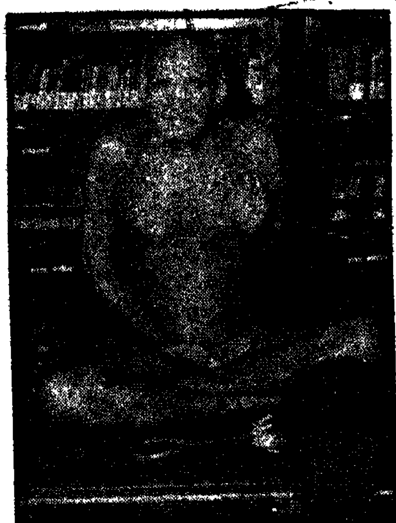
कुन्दकुन्द वाणी



कुन्दकुन्द वाणी

मासिक पत्रिका

सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव विशेषांक



79 वाँ जन्मोत्सव

प्रकाशक

कमल कुमार जैन बाकलीवाल

श्री कुन्दकुन्द प्रकाशन

803 A मढ़ाताल जबलपुर (म.प्र.)

दूरभाष– 341288

साज-सज्जा– संजय चौधरी जबलपुर

परमपूज्य उपाध्याय मुनि श्री गुप्तिसागर जी महाराज
के शुभाशीष से प्रकाशित

श्रमण संस्कृति दर्शन एवं विचार की अनुपम मासिक पत्रिका

कुन्दकुन्द वाणी

सृजन यात्रा सेतु

अतिथि सम्पादक
डॉ. राजकुमार सुमित्र
दैनिक नवीन दुनिया, जबलपुर

प्रबंध सम्पादक एवं प्रकाशक
कमल कुमार जैन बाकलीवाल, जबलपुर

सम्पादक
डॉ. देवकुमार जैन, रायपुर

प्रधान उपसम्पादक
आनन्दकुमार सिंघई, जबलपुर
गुलाबचन्द जैन बाकलीवाल, इन्दौर

प्रचार सम्पादक
सिंघई प्रभात जैन, जबलपुर
विनोद हर्ष, अहमदाबाद
हीराचन्द बड़जात्या, अजमेर

कम्पोजिंग
सी-बेस, राईट टाउन,
जबलपुर. दूरभाष. 316112

मुद्रक
सिंघई आफसेट
६६९, सराफा, जबलपुर
दूरभाष - 341006

प्रकाशकीय कार्यालय
श्री कुन्दकुन्द प्रकाशन
853 (अ) मढ़ाताल, जोन्सगज पुराना पोस्ट आफिस के पास, जबलपुर (म प्र.) 482002 फोन- 341288

हमारी प्रसार योजना

कुन्दकुन्द वाणी मासिक विगत पाँच वर्षों से अविराम प्रकाशित हो रही है। यह श्रमण संस्कृति/ दर्शन एवं विचार की अनुपम मासिक प्रकाशन है। इसके प्रचार-प्रसार में हर श्रावक रत रहे यह भी हमारा ध्येय है। प्रचार-प्रसार हेतु आप सभी श्रावकों से विनम्र निवेदन है कि अपने सम्बन्धियों/मित्रों एवम् परिचितों के दस सम्पूर्ण पते लिखकर हमें भेजें जिससे हम उन्हें इस मासिक के अंक प्रेषित कर प्रचार का माध्यम बना सकें।

आपका स्नेह ही हमारा सम्बल है।

कमल कुमार जैन बाकलीवाल
प्रबंध सम्पादक एवं प्रकाशक
श्री कुन्दकुन्द प्रकाशन
853 (अ) मढ़ाताल, जोन्सगंज
पुराना पोस्ट आफिस के पास
जबलपुर (म.प्र.) पिन-482002
✆ 341288

सहयोग संकेत

परम सरक्षक	-	रू	2501.00
संरक्षक	-	रू	1501 00
आजीवन	-	रू.	551 00
तीन वर्ष	-	रू.	190 00
एक वर्ष	-	रू	65 00

परमपूज्य उपाध्याय मुनिश्री गुप्तिसागर महाराज
के शुभाशीष से प्रकाशित
श्रमण संस्कृति–दर्शन एवं विचार की अनुपम मासिक पत्रिका

कुन्दकुन्द वाणी के पृष्ठों पर

सितम्बर – 1994

अंक - 51

वर्ष-प्रथम

कुन्दकुन्द वाणी के पृष्ठों पर
सितम्बर – 1994
अंक - 51
वर्ष-सप्तम

अंक - 51

सितम्बर - 1994

रंगीन पृष्ठों पर......

विज्ञापन

सम्पादकीय

कमल कुमार जैन बाकलीवाल
प्रकाशक एव प्र सम्पादक.

णमो अरिहंताणम् ● णमो सिद्धाणम्
णमो आइरियाणम् णमो उवज्झायाणम्
णमो लोए सव्व साहूणम् ।

ऐसे पंच णमोकारो, सव्व पापप्पणासणो।
मगलाणां च सब्वेसिं, पढ़मं हवइ मंगलम् ।।

उपरोक्त महामंत्र जैनागम का अनादि निधन मंत्र है । इस मत्र मे **अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय एव सर्व साधु** को नमस्कार किया गया है। अतिम दो लाइनों मे अनादि निधन महामत्र का महात्मा वर्णित है जिसमें कहा गया है कि **यह णमोकार मंत्र सभी पापो को नासने वाला है, इसके नित्य प्रति पढ़ने से मगल होता है** । प्रकार उपरोक्त पच परमेष्ठी नित्य प्रति सदा और सदा पूज्यनीय है वदनीय है।

आगम मे यद्यपि **सिद्ध परमेष्ठी का स्थान सर्वोपरि** है किन्तु ये अशरीरी होने से दिखाई नहीं देते है। अत इस महामत्र मे **अरिहंत** द्वारा, जीवों को उपदेश का लाभ मिलने तथा अपना आत्मकल्याण करने का मार्ग लक्षित होने के फलस्वरूप उन्हे सिद्धों से ऊपर प्रथम स्थान दिया गया है। अर्थात् अरिहत से प्राप्त ज्ञान से आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है और तभी सिद्धावस्था की प्राप्ति हो सकती है। यहीं कारण है कि प्राय. सभी जिनालयों मे अरिहत परमेष्ठी की प्रतिमा प्राथमिक एवम् बहुतायत से मिलती है।

तीर्थंकरों ने हमे समय-समय पर सम्यक् बोध दिया है जिससे भव्यात्मा अपने उत्तम मार्ग मे अग्रसर होते रहे तथा अपना कल्याण करते रहे। वर्तमान मे मोक्षमार्ग का सच्चा उपदेश प्रदायकर्ता तीर्थंकरों का-भरत क्षेत्र मे अभाव है। इस काल मे णमोकार मत्र मे वर्णित अतिम **तीन परमेष्ठी (आचार्य, उपाध्याय, साधु)** ही हमे सच्चे मार्ग का दिग्दर्शन कराते है। अत वर्तमान मे दिगम्बर सन्त ही हमारे लिए चलते-फिरते तीर्थंकर है। ये ही हमारे कल्याण कर्ता है। **जैन आगम में नव देवताओ को समान रूप से पूज्यनीय, वन्दनीय बताया गया है**। इन्हे पूज्यनीय मानने मे कम या अधिक का आगम मे वर्णन नहीं है। अत दिगम्बर सन्त जिनका नाम पञ्चपरमेष्ठी पद मे गर्भित है, उनकी जन्म जयती मनाने मे हमे किसी प्रकार का अवरोध नहीं मानना चाहिये। वैसे भी सद्पुरुषों का जीवन हमारे लिए स्वच्छ आईना है, जिसको अपना प्रतिबिम्ब देख हम अपनी कालुषता का पोंछ सकते है। स्वच्छ बनने का प्रयास कर सद्मार्ग के पथ पर बढ़ सकते है।

जो जीव जन्म को जीत चुका है, जीत रहा है अथवा निरन्तर जन्म को जीतने का अभ्यास कर रहा है उसकी जन्म जयन्ती मनाना भव्यात्माओं का प्रथम कर्तव्य है।.....क्योंकि कर्म केवल चर्म धोने से नहीं धुलते हैं। महापुरुषों की भक्ति, सेवा, गुणानुवाद कर गुणों का अमृत पान करने से ही कर्म धुलेंगे। हमारे प्रयास मात्र **आदिनाथ जी एवं महावीर प्रभों की जन्म जयन्ती** तक ही सीमित नहीं रहना चाहिये वरन् जितने भी तीर्थंकर हैं उन सभी का गुणगान उन के जीवन में घटित घटना तिथियों के पावन अवसर पर करना चाहिये।

जन्म को जीतने की कला सिखाने वाला पर्व जन्म जयन्ती पर्व कहलाता है। वर्तमान में दिगम्बर साधु इस पथ के अनुयायी हैं। अतः इन महापुरुषों के गुणों का अभिनन्दन, धार्मिक आयोजनों के साथ सम्पन्न कर एव इनमें अपना योगदान प्रदान कर हमें अपना वर्तमान मानव जीवन सफल करने की पहल करना चाहिये। इस मंगल अवसर पर हमें पूर्णरूपेण श्रद्धा भाव से, तल्लीनता से इन दिगम्बर साधुओं का गुणानुवाद करना चाहिये।

वर्तमान काल तीर्थंकरों के अभाव का काल है। अतः इस काल में, गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, मोक्ष कल्याणक मनाने का सुअवसर हमें मात्र पंचकल्याणकों में, जिन बिम्ब के रूप में मिलता है।. ...यद्यपि तीर्थंकरों का वर्तमान में अभाव है तथापि दिगम्बर साधु की उत्पत्ति का अभाव नहीं है तथा उन युग पुरुष (दिगम्बर मुनि) का जन्मोत्सव (साक्षात्) मनाने का सौभाग्य तो हमें आज भी मिल रहा है। अत इस मंगल अवसर का हमें श्रद्धा से, विनय से, मनाने का प्रथमतय प्रयास कर अपने को धन्य बनाने का मार्ग प्रशस्त करते हुए अपना जीवन सार्थक बनाना चाहिये।

परमपूज्य प्रातः स्मरणीय, तपोनिधि, सन्मार्ग दिवाकर, चारित्र चक्रवर्ती 108 आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज वर्तमान युग के प्रमुख वयोवृद्ध दिगम्बर सन्त है। आचार्य परमेष्ठी पद पर विराजमान छत्तीस मूलगुणों के धारक, रत्नत्रय के साधक, आगम ज्ञानी आप वर्तमान के प्रतिष्ठित आचार्य हैं। आपके अनेकों शिष्य पूरे भारत में आचार्य, उपाध्याय, मुनि एवम् आर्यिका पदों पर प्रतिष्ठित है तथा धर्म के प्रचार–प्रसार में अविस्मरणीय योगदान कर रहें हैं। **दीक्षा एवम् संयम की दृष्टि से आप वरिष्ठतम हैं। सत्य, अहिंसा, दया, शान्ति, अपरिग्रह एवम् ब्रह्मचर्य के आप प्रतीक है। सूर्य सा तेज, चन्द्रमा सी शीतलता, सागर सी गम्भीरता, पर्वत समान अड़िगता, सिंह समान निर्भीकता** – आचार्य प्रवरका व्यक्तित्व है।

त्याग और वैराग्य, धर्म और आध्यात्म, आत्मीयता और उदारता की साक्षात् मूर्ति, सदैव वंदनीय आचार्य 108 श्री विमलसागर जी महाराज जिनधर्म एवम् श्रमण संस्कृति की रक्षा करने में सर्वोपरि हैं। पाठशालाओं, पुस्तकालयों, औषधालयों, धर्मशालाओं एवम् अनेकों जिनालयों का निर्माण एवम् जीर्णोद्वार आपके उपदेशों से सम्भव हुआ। **निमित्तज्ञानी आचार्य श्री अन्तर्दृष्टा है। आपकी अहर्निश तपस्या के प्रताप से अनगिनत लोग कृतज्ञा हो चुकें हैं।**

श्रमणों में सम्मेद शिखर, पूज्य आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज की 79वीं जन्म जयन्ती समारोह तीर्थों के सम्मेद शिखर (मधुवन) में 26–27–28 सितम्बर को सम्पन्न हो रही है। रिद्धि–सिद्धि दायक आचार्य प्रवर का सानिध्य हमें दीर्घकाल तक उपलब्ध होता रहे इसी पावन श्रद्धा के साथ समर्पित है कुन्दकुन्दवाणी मासिक का यह अंक आपके कर कमलों में.....शत–शत वंदन के साथ......ओम् णमो आइरियाणमं। ❏❏❏

स्वागत

☐ स्वरूपचन्द जैन सोगानी, कार्याध्यक्ष

धर्म स्नेही स्वजन,

स्वागत है आपका, बीस तीर्थंकरों की निर्वाण भूमि पर **सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव** में।

तीर्थराज सम्मेदशिखर जिन संस्कृति का अनादिकालीन पावन तीर्थ है। इस पावन गिरि की वसुधा/ रज़ कण को जिन सस्कृति के बीस तीर्थंकरों ने अपने पावन चरणों से पवित्रता का आवरण ओढ़ाया है जिनकी सुवास से यह तीर्थ आज भी वन्दनीय/ पूज्यनीय है।.....इतना ही नही तीर्थंकरों के अतिरिक्त अनेक मुनिराजों ने भी अपने निर्वाण रुपी पुष्प से इस पर्वत श्रंखला को वर्तमान में भी सुवसित कर रखा है। तीर्थराज की महिमा का गुणगान करते हुए कविवर द्यानतराय जी ने निर्वाण क्षेत्र पूजा में कहा है–

बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर, शिखर सम्मेद–महागिरि भूपर।
भावसहित बंदे जो कोई, ताहिं नरक–पशु–गत नहिं होई।।

जिन संस्कृति के पावन अचल तीर्थ पर, चलतीर्थ, तीर्थोद्धारक, चूड़ामणि, अतिशय योगी, सन्मार्ग दिवाकर, वात्सल्य रत्नाकर, देश के वयोवृद्ध **आचार्य 108 श्री विमलसागर जी महाराज, उपाध्याय मुनिश्री 108 भरतसागर जी महाराज** सहित 35 त्यागियों का सघ विराजमान है। इनके अतिरिक्त इस पावन क्षेत्र पर **आचार्य श्री 108 सुमति सागर जी महाराज, आचार्य 108 श्री संम्भव सागर जी महाराज, आचार्य 108 श्री सन्मति सागर जी महाराज एवं उपाध्याय मुनिश्री 108 चन्द्र सागर जी महाराज**, संघ सहित विराजमान हैं। **आर्यिका श्री 105 सुपार्श्वमति माताजी** भी ससंघ क्षेत्र पर वर्षायोग कर रहीं हैं।

समस्त आचार्यश्री, उपाध्यायश्री, मुनिगण, आर्यिकाश्री, ऐलक–क्षुल्लकश्री, क्षुल्लिकाश्री एवं त्यागियों के पावन सानिध्य में आचार्य प्रवर, निमित्त ज्ञानी, चरित्र भूषण प्रात. स्मरणीय **आचार्य 108 श्री विमलसागर जी महाराज का 79 वाँ जन्मोत्सव, सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव** के रूप में दिनांक **26/27/28 सितम्बर** 1994 को आयोजित हो रहा है। महोत्सव के विभिन्न आयोजन निम्न प्रकार हैं जो कि **परम पूज्य उपाध्याय 108 श्री भरत सागर जी महाराज** के मार्ग दर्शन में सम्पन्न होंगे।

● दिनाँक 22/23/24/25 सितम्बर 94 आसोजवदी 3–4–5	**मृत्युञ्जय विधान/ ऋषिमंडल विधान एवं शान्तिविधान।**
● 26 सितम्बर 94 आसोजवदी षष्ठी	**तीर्थ सभा** **विषय–अक्षयतीर्थ सम्मेदशिखर**
● दिनांक 27 सितम्बर 94 आसोज वदी– सप्तमी	**परम स्थान सभा** **विषय–सप्त परम स्थान**
● दिनांक 28 सितम्बर 94 आसोज वदी– अष्टमी	**प्रशान्त रस सभा** **विषय– शान्त रस**

सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव का विशेष आकर्षण

- सुप्रसिद्ध कलाकार **श्री डी.पी.कौशिक** एण्ड पार्टी एवं विहार के जैन कलाकारों का सांस्कृतिक कार्यक्रम
- श्रमण संस्कृति/ दर्शन एवं विचार की अनुपम मासिक पत्रिका **कुन्दकुन्दवाणी मासिक के सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव अंक का श्री विमल–युगल कर–कमलों में समर्पण।**
- अनेक सांस्कृतिक–धार्मिक कार्यक्रम, रात्रिकालीन सभा में।

हमें, विशाल श्रावक जन का, इस पावन तीर्थ पर **सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव** में पधारे महानुभवों का स्वागत करते हुए आनन्द का अनुभव हो रहा है। हमारी विभिन्न समितियों के पदाधिकारी/ सदस्यगण आपकी सुख–सुविधाओं हेतु लगन से सेवारत हैं तथापि विशाल आयोजनों में यदा–कदा असुविधा हो ही जाती है......कृपया इस हेतु आपसे विनयपूर्वक क्षमा चाहते हैं।

तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर में आयोजित **सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव** में पधारे सभी श्रेष्ठीगण, हमारे उपलब्ध साधनों का लाभ प्राप्त कर तीर्थराज–मुनिराज की वंदना कर अपने जीवन को भव्यता के पथ पर अग्रसित करें, यही विनती है पञ्चपरमेष्ठी भागवन् से और कामना है आपसे।

श्री सम्मेदशिखर शिवपुर को द्वारजी,
बीस जिनेश्वर मुक्ति भये भवतार जी।
तिनि के चरण जजों में मन–वच–काय के,
भवदधि उतरों पार शरण तुम आयके।।

विनीत

आर.के. जैन — अध्यक्ष

शिखरचन्द जैन पहाड़िया — स्वागताध्यक्ष

स्वरुपचन्द जैन सोगानी — कार्याध्यक्ष

महावीर प्रसाद जैन सेठी — महामंत्री

सुरेश कुमार जैन, झाँझरी — संयोजक

एवं

सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव समिति

कुन्दकुन्द वाणी मासिक

अंक :– 51 सितम्बर–1994 वर्ष 6

मेरी भूल बताने वाला मेरा मित्र है।

कल्याण मन्दिर स्त्रोतम	आ. विद्यासागर जी का पद्यानुवाद
नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन, पूर्व विभो! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि। मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्था: प्रोद्यत्प्रबन्धगतय: कथमन्यथैते ।।37।।	मोहान्धकार सुतिरोहित लोचनों से, देखा न पूर्व तुमको जिन! एक बार। ऐसा न हो यदि विभो! मुझको बता दो, क्यों पाप कर्म दिन रैन मुझे सताते ।।37।।
●	●
आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि नून न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या। जातोऽस्मिन तने जनबान्धव! दु:खपात्र, यस्मात्क्रिया:प्रतिफलन्ति न भावशून्य ।।38।।	देखे गये श्रवणगम्य हुवे व पूजे पै भक्ति से न चित्त मे तुमको बिठाया हूँ दुःख भाजन हुवा फलत जिनेश! रे! भावहीन करणी सुख को न देती।।38।।

डॉ. पन्नालाल साहित्याचार्य का गद्यानुवाद

- **हे विभो!** मैने मिथ्यात्व के उदय से अन्धे होकर कभी भी आपके दर्शन नही किये। यदि दर्शन किये होते तो आज ये दु:ख मुझे कैसे दु:खी करते? क्योंकि आपके दर्शन करने वालो को कभी कोई भी अनर्थ दु:ख नहीं पहुँचा सकता।।37।।
- **हे जगद्बन्धे!** मैनें आपका नाम भी सुना पूजा भी की और दर्शन भी किये फिर भी ये दु:ख मेरा पिण्ड नहीं छोडते। उसका कारण सिर्फ यही मालूम होता है कि मैने भक्ति पूर्वक आपका ध्यान नहीं किया। केवल आडम्बर रूप मे ही उन कामो को किया है न कि भावपूर्वक भी। यदि भाव से करता तो कभी भी ये दु:ख नहीं उठाने पडते।।38।।



तुम सा दानी क्या कोई हो,
जग को दे दीं जग की निधियाँ
दिन रात लुटाया करते हो,
सम–शम की अविनश्वर मणियाँ।।

卐

हे विमल गुरू! तुम्हें प्रणाम,
हे ज्ञानदीप आगम! प्रणाम।
हे सन्मार्ग दिवाकर मूर्तिमान,
शिव–पथ–पथी गुरूवर! प्रणाम।।

●

पंच परमेष्ठी स्तवन

अरिहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय
सर्व साधु सुख साता
इन्द्र नरेन्द्र यक्ष सुर जेते
पंडित बुध जन सारे
भवतम भंजन शीश नमावत
रक्षक तुम्हीं हमारे
जब शुभ मन से ध्यावे
तब शुभ आशीष पावे।
गावे तब जय गाथा,
भव दुख बाधा हरो हमारी
तुम्हें नमावे माथा।
जय है, जय है, जय है, जय जय जय जय है।।
सर्व साधु सुख साता।।
चारो गति भ्रमत फिरे हैं
दुख अनेक उठाये
ज्ञान चक्षु जब हमारे
तुमरे दर्शन पाये
सुख की ये आश लगाये
म सब तुमरे ढिग आये
कहाँ मिले सुख साता
नाथ तुम्हारे पथ पर चलकर
मुक्ति पथ मिल जाता
जय है, जय है, जय है, जय जय जय जय है।।
सर्व साधु सुख साता।।

वात्सल्य रत्नाकर ग्रन्थ से साभार

79 वाँ जन्म दिवस महोत्सव

"परम पूज्य प्रातःस्मरणीय, जैन धर्म के महान आध्यात्मिक संत"

(विश्वधर्म प्रेरक, सन्मार्ग दिवाकर, वात्सल्य रत्नाकर)

आचार्य श्री 108 विमल सागर जी महाराज के

79 वें जन्म-जयंती समारोह 26.28.9.94 के शुभ अवसर पर

☆ ससंघ मंगल-अभिवंदन ☆

प्रथम देव अरिहंत नमि, सिद्धन करुँ प्रणाम,
आचार्यों और उपाध्याय का ले सुखकारी नाम।
सर्व साधु, त्यागीव्रती, तीर्थराज सुखकार,
सम्मेद-शिखर के पार्श्व को, मेरा वंदन बारम्बार।

हे सन्मार्ग दिवाकर:- आपका ध्यान आते ही हृदय में अनायास ही आपका साकार चित्र उपस्थित हो जाता है। हृदय श्रद्धा से झुक जाता है। हे करुणा सागर, हे निमित्तज्ञानी, हे अतिशय योगी यदि हम आपको सूरज कहते हैं, तो उसमे आग है। यदि हम आपको चन्द्रमा कहें तो उसमें भी दाग है। आप निर्द्वंद निर्दाग हैं।

हे वात्सल्य रत्नाकर:- आज ही के दिन (आश्विन कृष्णा सप्तमी) आपका जन्म सन् 1916 में ग्राम-कोसमा जिला-एटा (उ.प्र.) में हुआ था। आपके पिता बिहारीलाल एवं माँ कटोरी बाई ने आपका नाम "नेमीचन्द्र" रक्खा। समय के अन्तराल से आप जैसे-जैसे बड़े होते गए "वीतरागता" की भावना बढ़ती गई। उसका परिणाम में हम देख रहे हैं **आचार्य श्री विमल सागर जी को।**

हे युगावतार:- एक युग श्रेष्ठ आचार्य के सभी गुण आप में केन्द्रित है, विद्यमान हैं। अतः आप युगावतार हैं। आपके गुणों का वर्णन करना सूर्य को दीपक दिखाना है। क्योंकि:-

यदि हम पृथ्वी को कागज करें, और लेखनी सब बन राय।
सात समुन्दर स्याही करें, फिर भी गुरु गुण लिखा न जाय।

आपके संघ में **पूज्य उपाध्याय श्री 108 भरत सागर जी महाराज जी** जिनवाणी के अथाह समुद्र हैं। जिनवाणी के ग्रन्थों का प्रकाशन जितना **उपाध्याय श्री एवं आर्यिकारत्न 105 स्याद्वादमती माता जी** ने कराया है; ऐसा उदाहरण अन्यत्र नहीं है। आज का यह प्रयास कल की धरोहर है। जैन-साहित्य जगत में यह प्रकाशित साहित्य सदियों तक विद्यमान रहेगा। यह सब आपका ही आशीर्वाद है।

हे कलिकाल सर्वज्ञ: सत्यं, शिवं, सुन्दरम तुम हो, जिनवर के साक्षात रूप।
सन्मार्ग दिखाया है जग को, साधना तुम्हारी है अनूप।

पिच्छी से आशीष तुम्हारा, मिटा रहा सबका क्रंदन।
ऐसे विमल सिन्धु के, श्री चरणों में, हमारा लाखों बार नमन।

चौथा काल बरस जाता है, जिस ओर आप आ जाते हैं।
है चमत्कार को नमस्कार, सब दौड़े दौड़े आते हैं।
"तीर्थराज" पर "ऋषिराज" का, हम वंदन करते हैं।
जिनवरसम आचार्य विमल का, हम अभिवंदन करते हैं।

आचार्य श्री अच्छे स्वास्थ्य के साथ शतायु हों।
हम यही भावना भाते हैं।

आपकी कृपा के आकांक्षी

छोटे लाल जैन "शास्त्री"	**कमल कुमार जैन बाकलीवाल**	**अभय कुमार जैन**
एम.ए., एल-एल.बी.	'कुन्दकुन्द प्रकाशन	ईसरीबाजार
611, मसीहागंज	जबलपुर	जिला गिरिडीह
सीपरी बाजार, झांसी (उ.प्र.)	(म.प्र.)	(बिहार)

एवं

समस्त अखिलभारतवर्षीय जैन–समाज

स्थान :–
शिखर जी (मधुवन)
जिला–गिरिडीह (बिहार)

दिनांक :–
अश्विन कृष्णा सप्तमी
27.9.1994



विमल वन्दना

❑ नन्द कुमार जैन, जबलपुर
गीतकार एवं गायक

फिल्म – **हम आपके हैं कौन**
तर्ज – दीदी तेरा देवर दीवाना

विमल सागर का जग दीवाना
महावीर सा मैनें तुमको माना
झुकता है चरणों में जमाना
दर्शन पा जीवन बना सुहाना

✪ ✪ ✪

चमत्कारी बाबा सूरज से चमकते
हे लाखों के प्यारे तीर्थंकर से लगते
ज्ञान का मैनें पाया खजाना
महावीर सा मैनें तुमको माना
विमल सागर का जग दीवाना.......

✪ ✪ ✪

जगत संकटो को सदा आप हरते
तथा शान्ति संतोष सुख पूर्ण करते
हर आहट पे तुमको ही ध्याना
महावीर सा मैने तुमको माना
विमल सागर का जग दीवाना.......

✪ ✪ ✪

तेरा दर्श पाके सभी तीर्थ पाये
चरण धूल तेरी माथे पे लगाये
चरणों का गन्दोदक लगाना
महावीर सा मैने तुमको माना
विमल सागर का जग दीवाना.......

✪ ✪ ✪

नमन तुमको करती है चारों दिशाएं
तेरे भक्त करते हे पावन सभाएँ
करूणा मई रत्नाकर को ध्याना
दर्शन पा जीवन बना सुहाना
विमल सागर का जग दीवाना.......

✪ ✪ ✪

परमपूज्य कुन्दकुन्दाचार्य की अमृतवाणी

❑ *श्री जिनसेनाचार्य कृत तात्पर्यवृत्ति*

सो सव्वणाणदरिसी कम्मरयेण णियेणवच्छण्णो।
संसारसमावण्णो णवि जाणदि सव्वदो सव्वं।।167।।
सम्मत्तपडिणिबद्धं मिच्छत्तं जिणवरेहिं परिकहिदं।
तस्सोदयेण जीवो मिच्छापिटिठत्ति णादव्वो।।168।।
णाणस्स पडिणिबद्धं अण्णाणं जिणवरेहिं परिकहिदं।
तस्सोदयेण जीवो अण्णाणी होदि णादव्वो।।169।।
चारितपडिणिबद्धं कसायं जिणवरेहिं परिकहिदं।
तस्सोदयेण जीवो अचरित्तो होदि णादव्वो।।170।। (त्रिकलम)

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का पद्यानुवाद

आत्मा विशुद्ध-नय से निज भाव स्पर्शी, होगा सकलविज्ञ त्रिकाल-दर्शी।
पै वर्तमान[1] विधि से कस के बँधा है, है जानता कुछ नहीं समझो मुधा है।।167।।
सम्यक्त्व का यदि रहा जग में विरोधी, मिथ्यात्व है, कह रहे जिन धार बोधि।
मिथ्यात्व के उदय में यह जीव होता, मोही कुदृष्टि, दुख से दिन-रैन रोता।।168।।
आलोक का तम विरोधक ज्यों बताया, अज्ञान ज्ञान गुण का जिनदेव गाया।
अज्ञान के उदय में यह जीव होता, कर्तव्य मूढ, फिरता भव बीच रोता।।169।।
चारित्र का रिपु कषाय कषाय-त्यागी, ऐसा जिनेश कहते, प्रभु-वीतरागी।
दु:खात्मिका उदय में कुकषाय आती, तो जीव को चरित्रहीन बना सताती।।170।।

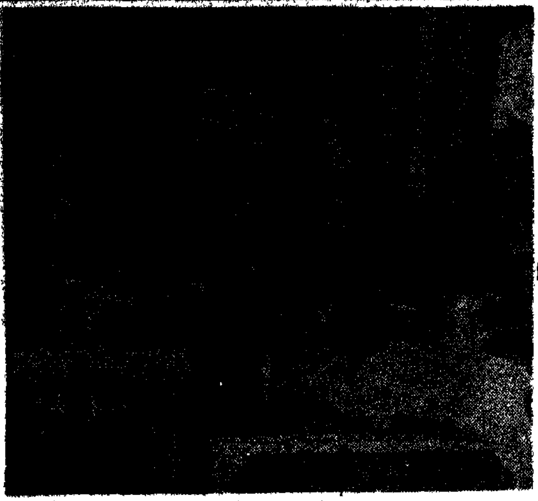
आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का गद्यानुवाद

● आत्मा स्वभाव से ही वस्तु मात्र का जानने वाला-देखने वाला है, फिर भी वह अपने कर्मरूपी रज से आच्छादित है। अतः संसार को प्राप्त होता हुआ सर्व प्रकार से सम्पूर्ण वस्तुओं को जान नहीं रहा है।।167।।

● आत्मा के सम्यक्त्व गुण को रोकने वाला मिथ्यात्व कर्म है जिसके उदय से यह जीव मिथ्यादृष्टि हो रहा है। आत्मा के ज्ञानगुण का प्रतिबन्धक अज्ञान है, जिसके उदय से यह जीव अज्ञानी हो रहा है, तथा चारित्रगुण को रोकने वाला कषायभाव है, जिसके उदय से यह जीव चारित्र रहित अर्थात् अचारित्री हो रहा है, ऐसा जिनेन्द्र भगवन् ने बतलाया है।।168-170।।

दृष्टिपूतं, न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्।
सत्यपूतां वदेद् वांच मनःपूतं समाचरेत्।।

दृष्टि से शोधन कर भूमि पर पैर रखना चाहिए, वस्त्र से शोधन कर जल पीना चाहिए, सत्य से शोधन कर वाणी बोलनी चाहिए तथा प्रत्येक कार्य को पहले मनन्-चिन्तन् से शोधन कर पश्चात् आचरण में लेना चाहिए। **-मनुस्मृति (6/64)**



बोधामृत

प्रस्तोता- आर.के.जैन, बम्बई

।। ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं ।।

मंगल

- **हे आत्मन !** मंगलमय दिवस, रात्रि, अहोरात्रि, पक्ष, मास, वर्ष में होने वाले गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, निर्वाण इन पंचकल्याणक में किया गया पूजन, जाप गुणों का चिन्तन मंगलमय है।
- सम्यक्दृष्टि जीव का एक ही श्वास आने पर और एक श्वास जाने तक भी पंचनमस्कार मन्त्र का चिन्तवन, उच्चारण करते रहने से सम्यक्दृष्टि जीव मंगल है।
- अर्हत, केवली प्रणीत धर्म मंगल है।
- चारों पुरुषार्थ में मोक्ष का मूल धर्म पुरुषार्थ मंगल है।
- संसार, शरीर, भोगों से विरक्त होने के लिए द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन मंगल है।
- आत्मा की सिद्धि का सेतु होने से संयम मंगल है।
- घातियाँ कर्मो से रहित होने से अर्हत मंगल है।
- अघातियाँ कर्मो से रहित होने से सिद्ध मगल है।
- तीर्थंकर प्रकृति का कारण होने से सोलह कारण भावनाएँ मगल है।
- पंचव्रतों की रक्षिका होने से पाँच व्रतों की पाँच-पाँच भावनाएँ मंगल है।
- दीक्षा और शिक्षा दान से व शिष्यानुग्रह निग्रह में दत्त होने से पचाचार पालक आचार्य मंगल है।
- अध्ययन व शिक्षण दान में तत्पर, धर्मोपदेश में तत्पर, धर्म प्रभावक होने से उपाध्याय परमेष्ठी मंगल है।
- विषय आशाओं से होने से तथा बिना बोले ही मोक्ष मार्ग का सच्चा उपदेश देने से साधु परमेष्ठी मंगल रूप है।
- मोक्ष मार्ग की पथम सीढ़ी होने से सम्यग्दर्शन मंगलरूप है।
- हेयोपदेय तत्वों का ज्ञापक होने से सम्यग्ज्ञान मंगलरूप है।
- मोक्ष का साक्षात् हेतु होने से सम्यक्चारित्र मंगलरूप है।
- भव्य जीवों में सम्यग्दर्शन की ज्योति जगाने का हेतु होने से जिनचैत्य मंगलमय है।
- भव्य जीवों के लिए विविध अनुष्ठान आदि क्रियाओं द्वारा विशुद्धी का हेतु होने से जिन चैत्यालय मंगलमय है।
- अहिंसामयी होने से जिनधर्म मंगलमय है।
- **हे विमल आत्मन !** निकल गया है मल जिसका ऐसे विमल आत्मा की प्राप्ती में किया गया पुरुषार्थ मंगल पुरुषार्थ है।
- **मंगलात्मने नम: चिदानंन्दात्मने नम: ।।**

पञ्चधारणा

हे आत्मन् ! संसारी प्राणी संसारार्णव से निकलने के बजाय, उसमें फँसने का कार्य करता है। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, और परिग्रह– ये पाँच पाप तथा पंचेन्द्रिय विषय कषाय इस जीव को दीर्घ संसारी प्राणी बनाते हैं। जैसे जब कफ में मक्खी पड़ जाती है तब उससे निकलने के लिए अनेक बार फड़फड़ाती है परन्तु उल्टी उसी में फँस जाती है और यहाँ तक कि अपने प्राण भी गँवा देती है। वैसी ही मानव है। अस्तु, हरेक मानव का कर्त्तव्य है कि वह रत्नत्रय धर्म का पालन करे।

हे आत्मन् !वीतराग सर्वज्ञदेव की द्वादशांग जिनवाणी भव्यात्माओं के आधि–व्याधि की नाशक है। इसके स्वाध्याय, मनन, चिन्तन से परम शान्ति प्रकट होती है। समस्त आपदाएँ मिट जाती हैं। जिनवाणी सुख का परम रसायन है।

हे आत्मन् ! जिनेन्द्र देव ने अपनी देशना में समभाव की सिद्धि के लिए संस्थन–विचय धर्मध्यान व शुक्ल ध्यान को विशेष कारण बताया। संस्थान–विचय भी चार प्रकार का कहा है– पिण्डस्थ, पदस्थ, रुपस्थ, और रुपातीत में भिन्न–भिन्न पदों से मन्त्रोच्चारण करना। ॐ नमः। ॐ ह्रीं नमः। ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः। ॐ अ ह्रा सि ह्रौं आ ह्र उ ह्री सा ह्र नम ॐ अर्हद्भ्योनमः। ॐ सिद्धेभ्यो नमः। ॐ सूरिभ्यो नमः। ॐ पाठकेभ्यो नमः। ॐ सर्व साधुभ्यो नमः। इत्यादि मंत्र वाक्यों का ध्यान पदस्थ ध्यान है। अनन्त चतुष्टय आदि ४६ गुणो से युक्त अर्हन्त प्रभु का समवसरण आदि विभूति सहित ध्यान करपा रुपस्थ ध्यान है। सिद्धप्रभु का चिन्तन रुपातीत ध्यान है। पिण्डस्थ ध्यान के भी पाँच भेद हैं। पृथ्वी धारणा, अग्नि धारणा, वायु धारणा, जल धारणा, और तत्त्वरुपवती धारणा। ये धारणाएँ सयक् प्रकार के ध्यान मे मदद करती हैं।

जब यह ध्यान, पृथ्वी धारणा में करता है– एक बडे समुद्र का चिन्तन कर उस समुद्र में एक कमल सहस्त्रदल का है और उस पर एक स्फिटक का सिंहासन है। उसमें मैं बैठा हुआ हूँ। ठंडी–ठडी आत्मप्रबोध लहर उठ रही है। उस सिहासन पर मैं शान्तिपूर्वक बैठा हुआ पचनमस्कार मंत्र का चिन्तन करता हुआ, अपने को अपने मे लीन करता हू। इसका नाम पृथ्वी धारणा है।

हे विमल आत्मन! अष्ट कर्मो का क्षय करने के लिए मै अब अग्नि धारणा का चिन्तन करता हूँ। वह उत्तम महान आत्मा, पद्मासन से बैठा हुआ अपनी नाभि मे 16 दल कमल का चिन्तन करता हुआ, बीच कर्णिका मे अर्ह और 16 पखुडियों पर 16 स्वर का चिन्तन करता कर ह्रदय कमल मे अष्ट कमल दल का चितन कर उनमें ज्ञानावरणादि अष्टकर्मों का स्थापना हुआ नाभि के अर्हं में से रं रं रं रं र करती हुई अग्नि प्रज्वलित होकर अतरग मे द्रव्यकर्म एव भावकर्म को जला रही है और बाह्य मे नौ कर्म रुप शरीर को जलाती हुई सीधी होकर त्रिकोणाकार ▲ बनकर तीनो कोणों पर स्वास्तिक बनाती हुई चिन्तवन करे।

हे विमल आत्मन! जन्म–मरण के नाश के लिए, कर्मों का नाशक परम ध्यान महान उपकारी है।

हे विमल आत्मन! अग्नि धारणा मे अपनी सफलता के पश्चात् उसी क्षण वायु धारणा का चिन्तन करते हुए, जो अग्नि धारणा मे अपने पिंड को भस्म कर दिया था और जो राख बची उसे साँय–साँय साँय–साँय करके वायु धारणा ने उड़ा दिया। स्फटिक के समान चैतन्य आत्मा जो राखमयी है उसे प प पं प पं करती हुई जल धारणा से बरसते हुए जल ने साफ कर दिया। पूर्ण शुद्ध चेतन्य आत्मा उसी समय अपने रुप को प्राप्त कर उर्ध्वगामी हो गया। सिद्धो के समूह में विराजमान उस चिंदानन्द चैतन्य प्रभु का ध्यान तत्त्वरुपवती धारणा है।

स्वध्याय से पदार्थों का ज्ञान होता है और तत्वज्ञान से ध्यान की सिद्धि होती है। ध्यान से परम सुन्दर आत्म तत्व की प्राप्ति होती है इसलिए **हे कल्याणेच्छुक!** विमल आत्मन! कण्ठगत प्राण होने तक भी स्वाध्याय को कभी न छोडना।

धर्मध्यान बोथरा चाकू है। शुक्लध्यान तेज धार है।
ध्यान कार्यसिद्धि का अमोघ मन्त्र है।
ध्यान आत्मा का बल है।
ध्यान भव्यात्मा का परम मित्र है।

■ ■ ■

भक्ति

जिनदेव की भक्ति कल्पवृक्ष के समान है।

वीतराग प्रभु 1008 श्री महावीर के चरणों में श्रद्धान्वित होते हुए, भक्ति से अर्चन, पूजन, वन्दन, मनन, चिन्तन व ध्यान करना श्रेयोमार्ग है।

जिनभक्ति भव्यातमाओं को क्रमशः संसार के शरीर भोगों से छुड़ाकर मुक्ति की ओर ले जाती है।

जिनभक्ति परमोत्कृष्ट वैराग्य भावना की जननी है।

जिनभक्ति मुक्तिद्वार की अचूक कुञ्जी है।

जिव जिनभक्ति से अष्टकर्मों का क्षय कर अष्टगुणों को प्राप्त कर अष्टम क्षिति (सिद्धिशिला) पर विराजमान होता है।

जिनभक्ति मानव को दानवता से बचाती है। आत्मा में मादर्व–आर्जव आदि उत्तम गुण प्रकट होते हैं।

जिनदेव की भक्ति सम्यक् दर्शन प्रकट करती है। जिनशास्त्र की भक्ति से सम्यक् ज्ञान व निर्ग्रन्थ दिगम्बर गुरुजन की भक्ति से सम्यक्चारित्र प्रकट होता है। स्पष्ट है, भक्ति रत्नत्रय की आधार शिला है।

हे आत्मन्। यह ससारी प्राणी अपनी अनुभूति की प्राप्ति के लिए सच्चे देव–शास्त्र–गुरु की भक्ति कर पूर्ण सिद्ध बन सहजानन्दी, परमानन्दी, नित्यानन्दी, अविनाशी, आनन्दघन परमात्मा बन जाता है।

पूज्य पुरुषों में आदर ही भक्ति है। वह भक्ति पूजक को पूज्य बनाती है। गुणों में अनुराग बढ़ाती है। इष्ट की सिद्धि के लिए मंगलमय आनन्दघन, जीवमुक्त, पूर्णज्ञानी, सहजानन्दी, परमानन्दी, परमात्मा पद की प्राप्ति के लिए देव, शास्त्र, गुरु, पञ्चपरमेष्ठी, चैत्य, चैत्यालय, नौ देवताओं की भक्ति कामधेनु के समान है।

जो जीव कषायवश देव–शास्त्र–गुरु की भक्ति नहीं करता, मन्दिर नहीं जाता, शास्त्र का स्वाध्याय नहीं करता वह नरक–निर्यञ्च के घोर दु:खों को उठाता है। **जिनभक्ति चिन्तामणि रत्न है।**

रावण ने क्रोधावेश में कैलाश पर्वत को उठाकर फेंकना चाहा तब बालि मुनि ने अपना अंगुष्ठ दबाकर पर्वत पर स्थित जीवों की रक्षा की। मन्दोदरि ने मुनिराज से रक्षा की प्रार्थना की। रावण जिनभक्ति में लीन हुआ। भगवान शान्तिनाथ की स्तुति में इतना तल्लीन हो गया कि वीणा का तार टूट गया, तब अपनी नस लगाकर वीणा बजाई, तभी घोर पापबंध मात्र तीसरे नरक तक रह गया। गुरुभक्ति के प्रसाद से, उनको भाव–भक्ति से नमस्कार करने से स्व की निन्दा– गर्हा को प्राप्त श्रेणिक का सप्तमनरक का आयुबन्ध मात्र 84 हजार वर्ष का रह गया। इसलिये भक्ति को कभी न छोड़ो। **हे आत्मन्। भक्ति से मुक्ति–सरल मार्ग है।**

■ ■ ■

विमल-स्तवन

मुनिश्री विराग सागर जी

दोहा–परम दिवाकर हे गुरु, विमल सिन्धु महान।
करता हूँ, मैं हृदय से, परम पवित्र गुणगान।।

तुभ्यं नमोऽस्तु जिन नन्दन प्यारे,
तुभ्यं नमोऽस्तु शिव मारग के सहारे।
तुभ्यं नमोऽस्तु "विमलसागर" बोधसार,
तुभ्यं नमोऽस्तु तरण तारण कर्णधार।। 1 ।।

तुभ्यं नमोऽस्तु करुणानिधि विज्ञ प्यारे,
तुभ्यं नमोऽस्तु गणनायक सन्त सारे
तुभ्यं नमोऽस्तु सुख सागर के ऋषीश,
तुभ्यं नमोऽस्तु विमलसागर हे मुनीश।। 2 ।।

तुभ्यं नमोऽस्तु मुनिनाथ अहो श्रमण्य,
तुभ्यं नमोऽस्तु गुरु संयम के करण्य।
तुभ्यं नमोऽस्तु दुःख दारिद के शरण्य,
तुभ्यं नमोऽस्तु तव पावन मूर्ति सौम्य।। 3 ।।

तुभ्यं नमोऽस्तु गुण गरिमा है समाई,
तुभ्यं नमोऽस्तु जग ने महिमा सु गाई।
तुभ्यं नमोऽस्तु पद पंकज पद्म प्यारे,
तुभ्यं नमोऽस्तु भव पार मुझे उतारे।। 4 ।।

तुभ्यं नमोऽस्तु प्रवर वत्सल के सुधाम,
तुभ्यं नमोऽस्तु परम पावन मिष्ट नाम।
तुभ्यं नमोऽस्तु गुरु नाम सुधा अकाम,
करता "विराग" तव चरणों में प्रणाम ।।.5 ।।

दोहा– विमल सागर हे गुरु, करुणानिधि मुनीश।
करुणाकर, करुणा करो, कर से दो आशीष।।

■ ■ ■

प्रणमामि नित्यं

ग.आ. सुपार्श्वमती जी

करुणपुण्यह्रदयं ह्रदि यो बिभर्ति,
यान्ति क्षणेन विपद: क्षयमाशु तस्य।
भव्यांगि–मानस–महार्णव पूर्णचन्द्रं,
संस्तौम्यहं विमलसागर–सूर्यवर्यम।। 1 ।।
विश्वत्रयी–सकल–मंगल–दान–दक्षं,
संसार–निरनिधितारणयानपात्रम्
कीर्तिप्रतापपरिवर्जित–पुएपदन्तं,
संस्तौम्हं विमलसागर–सूरिवर्यम्।। 2 ।।
सन्ताप–पाप–भवनाशन–वैनतेयं,
मिथ्यात्व–मन्मथ–तमोहरणोष्णभासम्।
सावद्य–योगविरतं शुभध्यानलीनं,
संस्तौम्यहं विमलसागर सूरिवर्यम्।। 3 ।।
रम्यस्वरं सुगतिदर्शनदायिदेहं,
श्रद्धानुबोध–चरणात्मक–योगशुद्धम्।
लोकत्रयैकतिलकं निर्व्याजबन्धु,
संस्तोम्यहं विमलसागर–सूरिवर्यम्।। 4 ।।
हे मञ्जुलाशयगुरो· भववाधिं सेतो,
विद्यालता–विपुलमडप–शस्तदोष:।
विश्वं पुनाति तव पादपंकज मुनीश,
संस्तौमि त विमलसागर–सूरिवर्यम।। 5 ।।
स्फूर्जिदगुणावलि युतो जगति प्रतिष्ठं,
भव्यांगिनामिह कामि–कल्पवृक्षम्।
पंचेषु वारण–निवारण पंचवक्त्रं,
संस्तौमि तं विमलसागर–सूरिवर्यम्।। 6 ।।
दु:खोपतप्त–जनशीतल–वारिधारं,
शीतांशुशुभ्रयशसा परिशोभमानम्।
वात्सल्य–पल्लवित–मानस–धारक तं,
सस्तौम्यहं विमलसागर–सूरिवर्यम।। 7 ।।
भक्त्या स्तवीमि तव पादयुगं मुनीश,
नित्यं स्मरामि मनसा गुणरत्नधाराम्।
श्रीवीरशासनविभासनबद्धकक्षं,
कायेन नौमि वर–भक्तियुत सुपार्श्वम्।। 8 ।।
कल्याण वृत्ती वृततत्ति पयोद सूर्य
मिथ्यान्धकार–निकरक्षयतप्तवाहम्।
त्रायस्व मां विमलसागर सूरिवर्य,
स्वामिंस्त्वदीय–चरणं प्रणमामि नित्यम्।। 9 ।।

ॐ भावाञ्जलि ॐ

गुरु-चरणों में प्रसूनाञ्जलि

❑ मुनि श्री पुण्यसागर जी

वर्तमान युग के श्रमण संस्कृति के सूत्रधार आद्य तीर्थंकर भगवान वृषभदेव है, जिन्होने युग के प्रारम्भ मे श्रमण धर्म को अंगीकार कर आत्मोद्धार किया और श्रमण सस्कृति के प्रचार–प्रसार का मार्ग प्रशास्त किया था। तब से आज तक श्रमण संस्कृति की वह अक्षुण्ण धारा इस वसुन्धरा पर सर्व कालों मे जन–जन के ससार तप को शीतल करती आ रही है।

इसके सतत प्रवाह तथा उन्नयन में **प.पूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागर महाराज** की शिष्य–परपरा तथा **परमपूज्य महावीरकीर्ति जी महाराज** एवं उनके प्रथम बाल ब्र शिष्य **परमपूज्य विमल सागर जी महाराज** के योगदान का स्मरण एव गुणानुवाद रुपी कार्य ऐसा होगा जैसे सूर्य को दीपक दिखाना।

पूज्य आचार्य श्री परमतपस्वी, चारित्रशिरोमणि, आगम–मर्मज्ञ, वात्सल्यमूर्ति, सरलस्वभावी, शान्तपरिणामी, विश्ववंदनीय, घोरोपसर्गविजयी, कष्टसहिष्णु एवं निमित्त–ज्ञान–शिरोमणि है। सर्व प्रथम आचार्यश्री के दर्शन तब हुए जब वे ससंघ चातुर्मास के लिए लोहारिया की ओर पदार्पण कर रहे थे। **प.पू. दयासागर जी महाराज** ससघ सलूम्बर मे विराजमान थे। उस समय मै ब्रह्मचारी था। सलूम्बर 4 कि मी दूर आचार्यश्री को लेने के लिए गया था। वहाँ रास्ते मे किसी एक व्यक्ति ने कमण्डलु मागा। आचार्यश्री ने कहा **यह कमण्डलु हमारे लिये बैलेन्स है। इसके बिना हम उसी प्रकार आगे नही बढ सकते जैसे बिना बैलेन्स की कार।** मैने सोचा, जीवन कितना स्वाधीन है। महाराज श्री हमेशा कहा करते है कि भैया **कभी कैंची का काम मत करो, सुई का काम करो। पर–शरण ही मरण है। यदि किसी से बचना हो तो पाप से बचो।** आचार्यश्री ने अपने जीवन मे कई प्रकार के उपसर्गों को सहन किया। उपसर्ग परकृत होते है जबकि परिषय जैन साधुओ का जीवन श्रृगार है। **उपसर्ग ओर परीषह से युक्त जीवन ही अपनी वास्तविक निधि को प्राप्त करने मे सक्षम होता है।** जैन सस्कृति के इतिहास को देखने पर ज्ञात होता है कि दिगम्बर साधुओं ने उपसर्ग–विजेता बनकर आत्मसूर्य की ज्ञान–किरणों से स्व–पर को प्रकाशित किया है। **एक दिन महाराजश्री सामायिक के बाद विश्राम कर रहे थे कि एक सर्प उनके हाथ पर चढकर क्रीड़ा करने लगा तब महाराजश्री का ध्यान सर्प की ओर गया तो उन्होने उसे हटाने की चेष्टा नहीं की और ध्यानस्थ हो गये। सर्प आधा घटा तक हाथ पर क्रीड़ा करके ऐसे चल गया मानो गुरुवर के दर्शन के लिए ही आया था। आचार्य श्री वृषभ के समान भद्र, सागर के समान गम्भीर, मृग के समान सरल, मेरु के समान निश्चल और सिंह के समान पराक्रमी हैं।** आपकी वीतराग प्रवृत्ति भव्य जीवो को अपनी ओर चुम्बक के समान आकर्षित करती है। स्व–पर- कल्याण मे रत आप दीर्घ काल तक ज्ञान, ध्यान तप एवं सयम में सलग्न रहें इसी शुभ भावना के साथ **आपके चरणाम्बुज में मैं हार्दिक प्रसूनाञ्जलि अर्पित करता हू।** ■

आचार्यश्री का वह स्मरणीय स्पर्श

❑ मुनिश्री निजानन्दसागर जी

श्रवणबेलगोला में भगवान बाहुबली जिनबिम्ब प्रतिष्ठा के सहस्राब्दी महोत्सव में जब मैं (ऐलक) **अक्कन बसदि (जिनमन्दिर)** में जिनेन्द्र प्रभु के दर्शन कर बाहर आया ही था कि सन्मार्गदिवाकर, सद्धर्मप्रदर्शक, करुणामयी प्रशान्तमूर्ति **आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज** ने मेरी गैरुए रंग की लंगोट खींचते हुए मुझसे पूछा –"**मुनि क्यों नही बनते हो? कब बनोगे?**"

मैंने कहा– **अतिशीघ्र। योग मिलते ही बन जाऊँगा।**

आचार्य श्री ने कहा– "**योग तो आ गया है।**"

मैंने कहा– "**योग आ गया है तो यह आपका आर्शीवाद ही है।**"

आचार्य श्री के आर्शीवाद और मेरी लंगोटी के स्पर्श मात्र का चमत्कार, जिसके विषय में अभी इतना सोचा भी नहीं था, 16–2–82 सोमवार को अनेक आचार्यो व त्यागी वृन्दों के बीच **मुनिश्री अभिनंदनसागर जी** के मन्त्रोच्चारण व **गुरुवर्य दयासागरजी** द्वारा प्रदत्त पावन संस्कारों से मुनि–दीक्षा ग्रहण की।

सिद्धक्षेत्र श्री गरनारजी से आचार्यश्री संघ सहित अहमदाबाद की ओर विहार कर रहे थे। सर्वत्र शीतलहर का प्रकोप था। तपोनिधि आचार्यश्री को भी इसने नहीं छोड़ा। उनका विहार अबाध रुप से गुजरात की राजधानी की ओर बढ़ रहा था। हम भी अहमदाबाद में चातुर्मास सम्पन्न कर तीन क्षुल्लक सहित गिरनारजी की तरफ विहार कर रहे थे।

सायला" ग्राम मे आचार्यश्री के आगमन के समाचार सुनकर जैन समाज व ग्रामवासी अजैन भाइयो ने उनका भव्य स्वागत किया। आचार्यश्री की अगवानी करने के लिए हम भी वहाँ पहुच गये।

आचार्यश्री के दर्शन पाते ही मन पुलकित हो गया। त्रिभक्तिपूर्वक वन्दना की। जुलूस आगे चल दिया। सायला स्कूल में आचार्यश्री का विश्राम हुआ।

रात्रि में बुखार बढने से आचार्यश्री का शरीर बहुत गरम था। वातावरण में जैसे–जैसे ठण्ड बढ रही थी आचार्यश्री के शरीर में ताप बढ़ता जा रहा था, और भी सघस्थ दो मुनिराज ज्वरग्रस्त थे।

जब मैं आचार्यश्री की वैयावृत्ति करने के लिए उनके पास गया तब मैंने देखा की आचार्यश्री स्थितप्रज्ञ रहकर बुखार से भी विचलित न होकर ध्यान रहे थे। ऐसा लग रहा था, मानो आचार्यश्री का शरीर ध्यान रुपी अग्नि से तप रहा हो। हम वैयावृत्ति कर अपने स्थान पर लौट आये। उस रात्रि ऑखो मे नींद नहीं थी। वह भोली, तेजस्वी, मनमोहक, प्रशान्त, वीतराग छवि हमें बार–बार चुम्बक की तरह खींच रही थी।

दूसरे दिन दोपहर हरे–भरे वृक्ष के नीचे आचार्यश्री के चरणों मे जा बैठे। विहार संबंधी कुशल वार्तालाप हुआ। जैसे पिता अपने पुत्र की कुशल–वार्ता पूछता है, वैसे आचार्यश्री ने अपनी वात्सल्यपूर्ण एवं करुणा भरी वाणी में हमारी कुशलता पूछी।

इसी बीच आचार्यश्री ने पूछा–"**निजानन्द जी। कुछ पूछना है?**" मैंने कहा –"**बस, आपका आर्शीवाद चाहिए।**"

"**निजानन्द से बढ़कर और कोई चीज दुनिया में नहीं है।**" क्षण भर मौन रहकर पुन: बोले –"**व्रतों में दृढ़ रहो तुम्हारा भविष्य उज्जवल है।**" **उनके चरणों में मेरा शत–शत नमन।** ■

सन्त सदा जयवन्त हों

❑ मुनिश्री निरंजनसागर जी

रत्नत्रय के आराधक, व्यवहारकुशल, वात्सल्यनिधि **सन्त आचार्यश्री विमलसागर जी** सदा जयवन्त हों, जिन्होंने हमें मोक्षमार्ग पर आरुढ़ किया। ■

शतशः नमन

❑ मुनिश्री मधुसागर जी

जिसने **आचार्यरत्नश्री विमलसागर जी महाराज** का दर्शन एवं सान्निध्य प्राप्त किया वह धन्य हो गया। मैंने भी आचार्यश्री के दर्शन कर जीवन सार्थक किया। आचार्यश्री शतायु हों तथा भावी पीढ़ी भी उनके दर्शनों का लाभ प्राप्त करती रहे, यही कामना करते हुए मैं **आचार्यश्री को नमन करता हूं।** ■

अभयदानी

❑ प्रकाशचन्द छाबड़ा जी

परम पू. प्रातः स्मरणीय आचार्यश्री विमलसागरजी के दर्शन का लाभ एवं सान्निध्य सभी प्राणियों को प्राप्त है। जो भी इनके दर्शन को आता है, स्वयं अपने अन्तरंग में विशेष शान्ति का अनुभव करता है। जो भी मन में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक विवाद हो या भय हो, इनके चरणों में आते ही समाप्त हो जाता है। उसे अपनी विपत्ति तथा संकटों में निवारण के लिए मार्ग-दर्शक के रुप में परमोपकारी गुरु की छत्र-छाया प्राप्त हो जाती है जिससे जीवन दान मिलता है, अभयदान प्राप्त होता है।

आचार्यश्री अनन्त गुणों के भंडारी एवं करुणा के सागर हैं। किसी भी प्राणी के दुखों को दूर करना उनका परमध्येय है। मिथ्यात्व से सम्यक्त्व आचरण की ओर लगाना यह उनकी सम्यक्त्व गुण अनुकम्पा का ही फल है। ऐसे सन्तशिरोमणि के प्रति यही भावना करता हूं कि वे शताधिक वर्ष तक हमें मार्ग प्रदर्शित करें। **गुरु-चरणों में मेरा शत-शत वन्दन।** ■

जीवन भर झाड़ कर बैठे

❑ युवारत्न शैलेश जैन

आचार्य विमलसागर के नाम से जैन धर्म के सूर्य की भांति ज्ञान का आलोक फैलाने वाले इस महान संत को अपनी पूर्वावस्था यानि गृहावस्था में जब इनका नाम नेमिचन्द था तबः-

एक दिन यह अपने पिता के समीप आकर बैठ गया। जमीन गन्दी थी अतः पिता ने देखा पुत्र बिना देखे, सुने, झाड़े-पोंछे बैठ गया है अतः व्यंग्यात्मक शब्दों के बाणों से छेद दिया नेमिचन्द का हृदय:- **कि कुत्ते भी पूंछ से झाड़ कर बैठते हैं तुम तो इन्सान हो"**

बस नेमीचन्द के हृदय पर एक अमिट दाग बन गया और संकल्प ले लिया कि मुझे जीवनभर झाड़ कर बैठना है और एक दिन इस मनुष्य रत्न का सदुपयोग करने से **आचार्य महावीरकीर्ति** के समीप आ गये और मुनि दीक्षा लेकर **आचार्य विमलसागर** हर हृदय के दुःख दर्द को निवारने वाले वात्सल्य करुणानिधि बन बैठे।

ऐसे गुरुवर के चरणों में शत-शत नमन करते हुए मैं जिनेन्द्र देव से यही कामना करता हूं कि इन गुरुवर को मेरी उम्र दे दे और मुझे ऐसी सद्बुद्धि प्रदान करे कि मैं भी एक दिन इनके पद चिन्हों पर चल सकने का साहस जुटा सकूं। ■

पावन नाम तुम्हारा

❑ डा शिव सिद्धार्थ शहडोल

पावनता में बढ़–चढ़ कर हैं पावन नाम तुम्हारा।
तुमने उस के दुख को मेटा जिसने तुम्हें पुकारा।।

✪

गुरु गम्भीर सरल निश्छल हैं, संत तुम्हारी वाणी।
सुख संतोष शांति पाता है, तुम से हर एक प्राणी।।
वरद हस्त करुणा का सब पर, सदा तुम्हारा रहता।
उर से झरना ज्ञान ज्योति का, कलकल कर के बहता।।
समता और विषमता दोनों में है, तुमने धीरज धारा।
पावनता में बढ़चढ़ कर हैं पावन नाम तुम्हारा।।

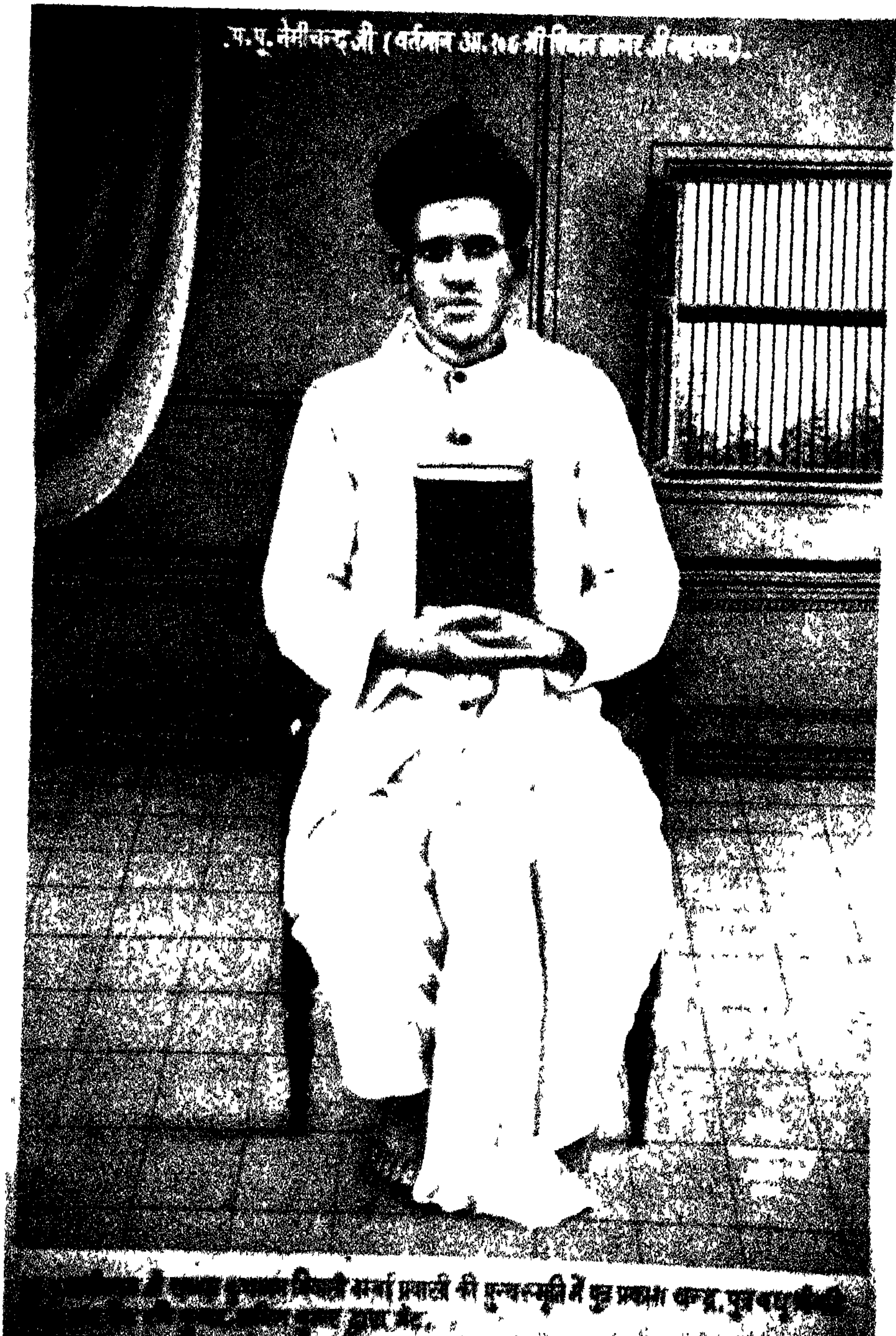
✪

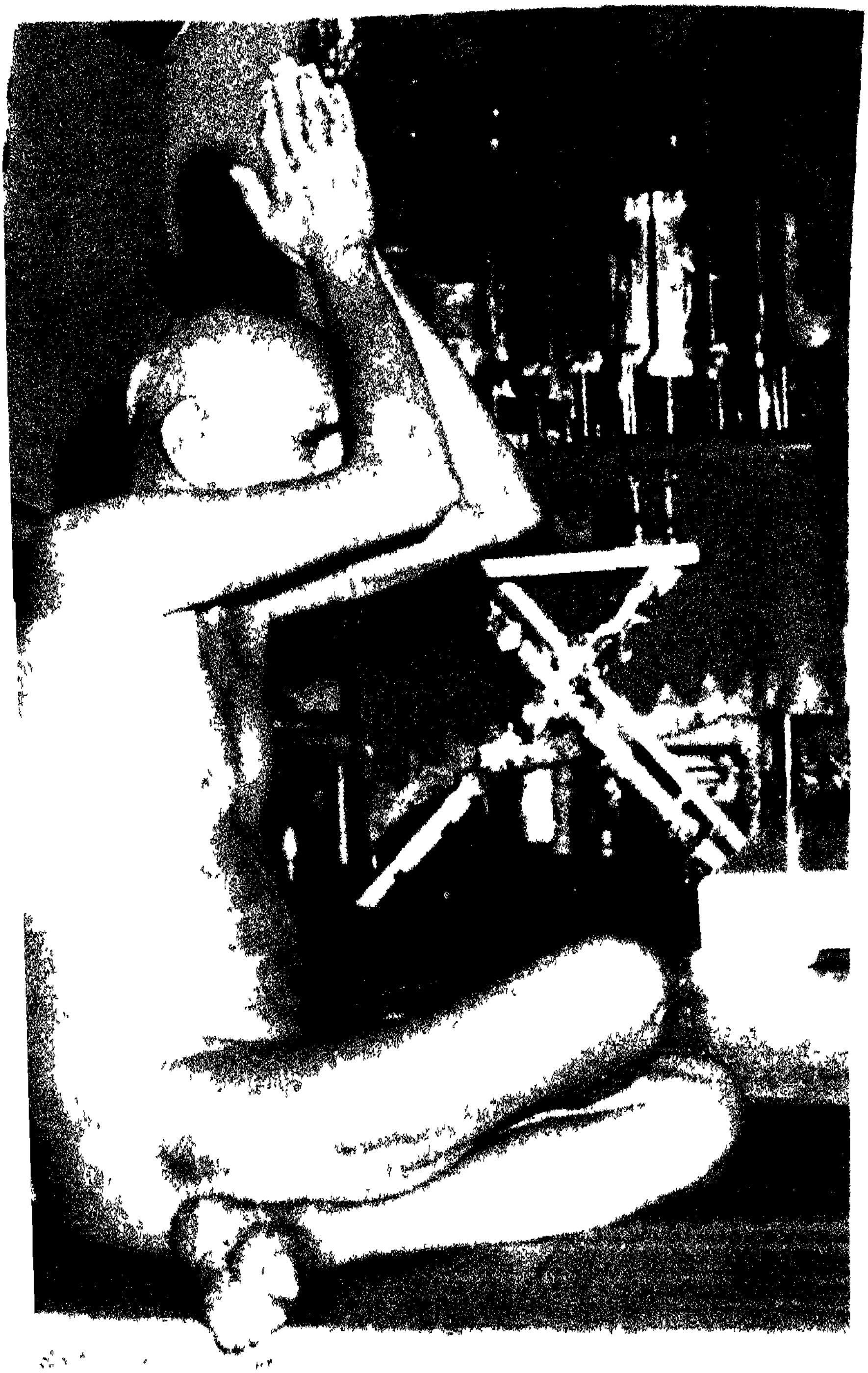
नवयुग में नूतन विचार की, तुम त्रिवेणी लाये।
तुमसे ही शापित मानवता, नवजीवन है पाये।।
संस्कृति के मरुस्थल में तुमने, अमृत कण बरसाया।
जिनवाणी के जटिल ज्ञान को, तुमने सुलभ बनाया।।
हर भटके राही को तुमने, जग में दिया सहारा।
पावनता में बढ़ चढ़ कर है, पावन नाम तुम्हारा।।

✪

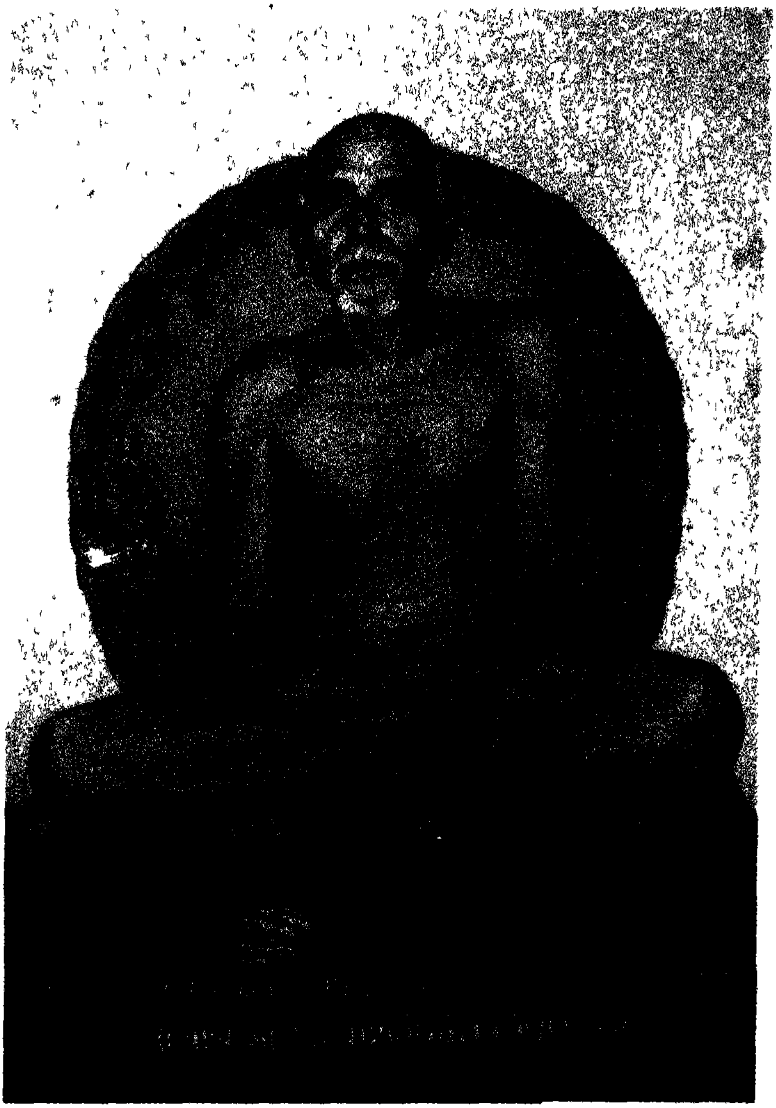
नई चेतना नई जागृति, तुम जन जन में जाये।
निमित्त ज्ञान के महारथी तुम, इस जग में कहलाये।।
श्री सम्मेदशिखरजी की तुमसे, महकी है फुलवारी।
सब सन्तों में तुम्हारी महिमा है इस जग में न्यारी।।
अमर रहेगा नाम तुम्हारा जब तक चाँद सितारा।
पावता में बढ़ चढ़कर है, पावन नाम तुम्हारा।।

❑ ❑ ❑


प.पू. नेमीचन्द जी (वर्तमान आ. १०८ श्री

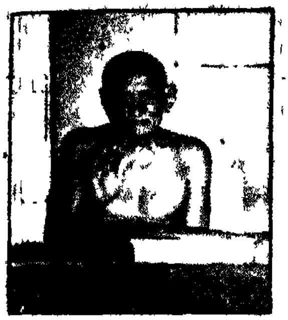


वात्सल्य रत्नाकर आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज





गुरु एवम् शिष्य की वात्सल्य छवि



परमपूज्य आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज......पूजन

❑ आर्यिका स्याद्वाद मती जी

स्थापना (चाल—श्रीपति जिनवर)

निमित्त ज्ञानी, सबके स्वामी, जन–जन को सिद्धि देते है।
साधक मुक्ति पथ के गुरुवर, आराधक सुख लेते हैं।।
जिन शासन के मार्ग प्रभावक, तन, मन, धन, दुख हरते हैं।
विमल सिन्धु के चरण कमलं में, कोटि–कोटि हम नमते हैं।।

दोहा— **ह्रदय विराजो आनके, आव्हानन त्रय बार।**
तव गुण कीर्तन गान से, मिटे कोटि सन्ताप।।

ॐ ह्रूँ आचार्य श्री विमलसागर स्वामिन्। अत्र अवतर अवतर संवोषट् आव्हानन।
ॐ ह्रूँ आचार्य श्री विमलसागर स्वामिन्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रूँ आचार्य श्री विमलसागर स्वामिन्। अब ममसन्निहितोभवभव वषट् सन्निधीकरणम् ।

(अष्टक नरेन्द्र छन्द)

उज्जवल जल हम लेकर आये, समता नीर भराई।
जन्म–जरा–मृत्यु नाश, कराकर,आठो कर्म नसाई।।
*परमपूज्य "**सन्मार्ग दिवाकर**" विमल सिन्धु के गुण गावें।*
निज निधि ज्ञान सुधारस पाकर, भव–वन में ना भटकावें।।1 ।।

ॐ ह्रूँ आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामिति स्वाहा।

मलयागिर का चन्दन लेकर, गुरुवर चरण चढ़ाई।
गुरु चरणन के ही प्रसाद से, भवआताप नसाई।।
*"**करुणानिधि**" आचार्य रत्न श्री, विमल सिन्धु के गुण गावें।*
निज निधिज्ञान सुधारस पाकर, भव–वन में ना भटकावें।।2 ।।

ॐ ह्रूँ आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चन्दनं • ।।2।।

क्रोध कषाय की ज्वालाओं ने खडिण्त जीवन कर डाला।
अक्षत पुञ्ज अखण्ड चढ़ावें मिटे कर्म–मल सब काला।।
*"**निमित्त ज्ञान शिरोमणि**" गुरुवर विमल सिन्धु के गुण गावें।*
निजनिधिज्ञान सुधारस पाकर, भव–वन में ना भटकावें।।

ॐ ह्रूँ आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतम् • ।।3।।

कमल–पुष्पकी माल चढ़ाकर, काम नशाने आये हैं।
बाल–ब्रह्मचारी गुरुवर हम, भक्ति सुमन ले आये हैं।।
*"**चक्रवर्ती–चारित्र निधि**" श्री, विमल सिन्धु के गुण गावें।*
निजनिधि ज्ञान सुधारस पाकर, भव–वन में ना भटकावें।।

ॐ ह्रूँ आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो कामबाण विनाशनाय पुष्पपाणि: • ।।4।।

मेसुरपाक, जलेबी, घेवर, भर-भर थाल सजाये हैं।
क्षुधा वेदना से अकुलाये, अर्पण करने आये हैं।।
"वात्सल्य रत्नाकर" गुरुवर श्री, विमल सिन्धु के गुण गावें।
निजनिधि ज्ञान सुधारस पाकर भव-वन में ना भटकावें।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य ● ।।5।।

मोह तिमिर से भटकाये प्रभु, सत पथ अब तक ना पाया।
रत्न मयी दीपक लेकर हम, ज्ञान ज्योति पाने आये।
"तीर्थो द्धारक-चूडामणि" श्री, विमल सिन्धु के गुण गावें।
निज निधि ज्ञान सुधारस पाकर, भव-वन में ना भटकावें।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीप ● ।।6।।

कर्म काठ से पीड़ित हैं प्रभु, अब तक चैन नहीं पाया।
गुग्गल धूप दशांगी लेकर कर्म नशाने हम आये।।
"अतिशय योगी" बाल ब्रह्म यति, विमल सिन्धु के गुण गावें।
निजनिधिज्ञान सुधारस पाकर, भव-वन में ना भटकावें।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो अष्ट, कर्म दहनाय धूप ● ।।7।।

श्री फल, आम, नारंगी, केला, थाल सजाकर आये हैं।
मोक्ष महाफल पाने की गुरु, आशा लेकर आये हैं।।
"विद्या-खण्ड-धुरन्धर" गुरुवर, विमल सिन्धु के गुण गावें।
निजनिधिज्ञान सुधारस पाकर, भव-वन में ना भटकावें।।8

ॐ ह्रूं आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो महामोक्षफल प्राप्तये फलं ● ।।8।।

आठ द्रव्य का थाल चढ़ाकर, आठों कर्म खपावें।
अष्ट गुणों की सिद्ध पाकर, सिद्ध लोक बस जावें।।
परम तपस्वी त्याग मूर्ति श्री विमल सिन्धु के गुण गावें।
निजनिधिज्ञान सुधारस पाकर भव वन में ना भटकावें।।9

ॐ ह्रूं आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो अनर्घपद प्राप्ये अर्घ ● ।।9।।

जयमाला

दोहा– सरल स्वभावी विमल गुरु, चरणन शीश नवाय।
कमल केतकी पुष्प ले, अर्पण करूँ हर्षाय।।पुष्पाञ्जलि।।

तर्ज– हे दीन बन्धु श्रीपति......

जै मुक्तिदूत विमल सिन्धु गुरु हैं हमारे।
जै तीन लोक से निराले देव हमारे।।
जै-जै तपस्वी एक नाथ आप राजते।
जै-जै भवि-जनो के हृदय आप सासते।।
जै वीर महावीर कीर्ति गुरु हैं तुम्हारें।
जै मुक्तिदूत विमल गुरु देव हमारे।।1।।
जै धन्य जन्म भूमि कोसमाँ के ग्राम की।
जै-जै सुधन्य मात कटोरी के लाल की।।

जै जै सुधन्य पिता बिहारी के प्राण की।
जै–जै सुधर्म सिन्धु गुरु देवराज की।।
जै वीर धीर बाल ब्रह्मचारी सितारे।
जै मुक्तिदूत विमल सिन्धु देव हमारे।।2।।
जै–जै सुसिद्ध क्षेत्र सोनागिर के राज की।
जै–जै सु यहाँ दीक्षा पाय मुनिराज की।।
जै–जै सु ध्यान धारते जिनराज की महो।
जै–जै सु वीर धीर तपस्वी महाशयी।।
जै–जै सुनिमित्त ज्ञान शिरोमणि है हमारे।
जै मुक्तिदूत विमल सिन्धु देव हमारे।।3।।
"टुण्डला" नगर था धन्य आपसे हुआ।
आचार्य पद प्रदान कर, सब जग प्रसन्न हुआ।।
दे शिक्षा दीक्षा दान भव्य जीव उबारे।
हैं योग्य शिष्य विश्व में जो तुम्हारे॥
जै भरत सिन्धु पाठक सुशिष्य तुम्हारे।
जै मुक्ति दूत विमल सिन्धु देव हमारे।।4।।
जै शरण आपकी लहै तिरते ही जा रहे।
जै कर विहार भूमि–भूमि तीर्थ निहारे।
जै करके वन्दना सभी तो तीर्थ उद्धारे।
दे भव्य जीव दीक्षा दान तुमने उबारे।।
जै समवशरण रचना कर भव्य उबारे।
जै मुक्ति दूत विमल सिन्धु देव हमारे।।5।।
जै राजगृही का जो स्वाध्याय, भवन भारी है।
जै धन्य धन्य गुरु स्मृति में देन थारी हैं।।
जै नंगानंग मूर्तियाँ ये शान से खड़ी।
जै चौबीसो निर्माण की ये श्रृंखला जुड़ी।।
जै श्रुतस्कंध के ये प्रेरक देव हमारे।
ये मुक्ति दूत विमल सिन्धु देव हमारे।।6।।
तन दुखी और मन दुखी औ धन दुखी आते।
नवकार मन्त्र जाप करो सबको बताते।।
लख–लख के जाप करते सब पुण्य कमाते।
पापों का नाश करके सभी चैन पाते।।
जै मन्त्र–यन्त्र–तन्त्र विज्ञ गुरु ये हमारे।
जै मुक्तिदूत विमल सिन्धु देव हमारे।।7।।
करते चरण में वन्दना गुरुदेव आपके।
हो पार भव समुद्र से आशीष आपके।।

नित तीन बार सिर नवाँ मैं वन्दना करूं।
भर भाव भक्ति से गुरु पद क्षालना करूं॥
नित रोम रोम में बसे गुरुदेव हमारे।
जै मुक्तिदूत विमल सिन्धु देव हमारे॥8॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री विमलसागर यतिवरेभ्यो जयमाला। पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा:- गुणमाला तुमरी गुरु! शब्दों लिखी न जाय।
ज्यों सागर के मोती ले गिनती कभी न पाय॥1॥
स्याद्वाद वाणी विमल, स्याद्वाद पथसार।
"स्याद्वाद मती" नित नमें भव से करो सु पार॥2॥

॥ पुष्पांजली ॥

॥ आरती ॥

❑ रवीन्द्र जैन, गीतकार-संगीतकार

आरती विमल मुनीन्द्र तिहारी, भव–भव के दुख मेटन हारी।

पहली आरती वैरागी की, भेष दिगम्बर सब त्यागी की।
दूजी आरती संयम तप की, अविरल ध्यान निरन्तर जप की।
मात कटोरी पिता बिहारी, आरती विमल मुनीन्द्र तिहारी,
भव–भव के दुख ....

☆

तीसरी आरती तेज प्रखर की, सौम्य मूर्ति गुण रत्नाकार की,
चौथी आरती जिन चिन्तन की, क्षमाशील समदर्शी मन की।
दर्शन करत मिले सुख भारी, आरती विमल मुनीन्द्र तिहारी
भव–भव के दुख ....

☆

पांचवी आरती दृढ निश्चय की, अभय करन मुनिराज अभय की,
छटवीं आरति निमित्तज्ञान की, धर्म धुरंधर गुरु प्रधान की।
जिनवाणी के प्रमुख पुजारी, आरती विमल मुनीन्द्र तिहारी,
भव–भव के दुख .. ..

☆

सातवीं आरती मधुर वचन की, राग द्वेष परिणाम दमन की,
मुनिवर सबके काज सवारें, हम शत–शत् आरती उतारें।
नहिं तुमसा कोई पर उपकारी, आरति विमल मुनीन्द्र तिहारी,
भव–भव के दुख ....

☆ ☆ ☆



परम पूज्य उपाध्याय मुनिश्री 108 श्री भरत सागर जी महाराज.....पूजन

ज्ञान दिवाकर पाठक ऋषिवर, 'सबके तम को हरते हैं।
चारित्र रथ पे दृढ़ हो करके, संयम आराधन करते हैं।।
गुरु चरणों में रहे सदा ये, कभी न गुरु से विलग गये।
नम्र स्वभावी प्रशांत मूर्ति ये, जन–जन के हितकारी हुए।।

दोहा– भरतसिन्धु यतिराजजी, हृदय विराजो आन।
आव्हानन त्रय बार करूँ, कोटि–कोटि प्रणाम।

ॐ ह्रीं श्री उपाध्याय श्री 108 भरतसागर यतीन्द्र! अत्र अवतार ! अवतर ! अवतार! अत्र संवोषट् ठ: ठ: ठ: स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।।

क्षीरोदधि का प्रासुक जल ले, कञ्चन झारी में भर ल्याय।
जन्म जरा मृत्यु रोग निवारण, त्रयधारा छोडू तत्काल।।
गुरु चरणन के भक्ति पुष्य श्री, भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।1 ।।

ॐ ह्रीं श्री भरतसागर पाठकेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं ०।1।।

भव आताप से व्याकुल होकर, गुरुवर चरणों में आये।
शान्त दशा को पाने कारण, चन्दन लेपन कर धाये।।
प्रशान्त मूर्ति पाठक यतिवर श्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।2।।

ॐ ह्रीं श्री भरतसागर पाठकेभ्यो.......................................चन्दनं।।2।।

अमल अखंडित तन्दुल लेकर, पुञ्ज चढ़ाने आये हैं।
अक्षय पद की प्राप्ति हेतु, हम चरणन शीश झुकाये हैं।।
ज्ञान दिवाकर पाठक यतिवर श्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।3 ॥

ॐ ह्रीं श्री भरतसागर पाठकेभ्यो.......................................अक्षतं ०।3।।

कमल केतकी बेल चमेली, गुलस्ता ले आये हैं।
कामबाण विध्वसन कारण, चरणों पुष्प चढ़ाये हैं।
बाल ब्रह्म यति पाठक यतिवर श्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।4 ॥

ॐ ह्रीं श्री भरतसागर पाठकेभ्यो.......................................पुष्प ०।।4।।

घेवर बरफी गूँजा फेनी, कञ्चन थाल सजाये हैं।
क्षुधा वेदना से अकुलाया, नाशन भेट चढ़ाये हैं।।
परम तपस्वी पाठक यतिवर,श्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।5 ॥

ॐ ह्रीं श्री भरतसागर पाठकेभ्यो.......................................नैवेद्य नि ०।5।।

कञ्चन मणिमय दीपक लेकर आरती करने आये हैं।
मोह तिमिर के नाशन कारण, अर्पण करने आये हैं।
ज्ञान ध्यान लवलीन यतिवर,श्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।6॥

ॐ ह्री श्री भरतसागर पाठकेभ्यो.................................दीपम् ०।।6।।

अष्टकर्म से जकड़े हैं प्रभु, अष्ट गुणों को ना पाये।
धूप दशांगी लेकर गुरुवर, अष्टम क्षिति पाने आये।।
मौनाभ्यासी पाठक यतिवरश्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।7॥

ॐ ह्री श्री भरतसागर पाठकेभ्यो.................................धूपम् ०।।7।।

तिलगोंजा खुरधाणी लेकर, श्रीफल भेंट चढ़ाये हैं।
भवसमुद्र से अकुलाये हम, मोक्ष महाफल पाये हैं।।
वाणी भूषण मार्ग प्रदर्शक श्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन में फिर न आवें।।8॥

ॐ ह्री श्री भरतसागर पाठकेभ्यो.................................फलम् ०।।8।।

चन्दन जीवन अक्षत लेकर, आठों द्रव्य सजाये है।
तारण तरण गुरु चरणों में भेंट चढ़ाने आये है।
ज्ञान दिवाकर, सतत अभ्यासी श्री भरत सिन्धु के गुण गावें।
आधि व्याधि सब दूर भगाकर, भव वन मे फिर न आवें।।9॥

ॐ ह्री श्री भरतसागर पाठकेभ्यो................................. अर्घ ०।।9।।

।। जयमाला ।।

दोहा– कमल केतकी पुंष्प अरूँ, हरिसंगार प्रसून।
पुष्पाञ्जलि अर्पण करें, कर्ममल दूर।।

पुष्पाञ्जलि

हे भरत सिन्धु गुरुवर चरणों में शीश झुकाने आये हैं।
भव वन में भटके फिरे हुए, हम शान्ति पाने आये हैं।।
वह धन्य लोहारिया ग्राम जहाँ, श्री छोटेलाल जी आये हैं।
और मात गुलाबी धन्य हुई, जिन ऐसे प्रसून जाये हैं।।
है धन्य पिता श्री किशनलाल, जिनका कीर्ति फहराई है।
हैं धन्य-धन्य भारत भूमि जहाँ संत शिरोमणी आये हैं।। १ ॥
करते बिहार श्री विमल सिन्धुजी, ग्राम लोहारिया आये थे।
सरल शांत मुद्रा लख करके, छोटे बहु हरषाये थे।।
बोले छोटे गुरुवर सुन लो, अरजी लेकर मैं आया हूँ।
तब चरणों की सेवा करने, मैं पुण्य कमाने आया हूँ।।
गुरुवर ने हर्षित होकर के, वात्सल्य दृष्टि से देखा है।
आशीष पाई जब गुरुवर की, "छोटे" संघ में तब आये हैं।।2।।

उन्नीस वर्ष की उम्र भई तब, बालक संघ सेवा करते।
अजमेर नगर जब संघ आये, क्षुल्लक दीक्षा गुरुवर देते।।
दीक्षा समय यह सजा दुल्हा, सब राज ठाठ से शोभित था।
सुकुमाल सी देही सजी हुई, चोरों के मन में मोहित था।
करते बिहार जब संघ चला, चोरों ने इन्हें उठाया था।

बोले धन देदो हमें सभी, जीवन की अब कुछ खैर नहीं।।3।।

कुएँ में डाला था इनको, सब पूर्व की लीला थी।
मीनों ने पैर भी खाये थे, फुंकार सर्पो ने मारी थी।।
बस णमोकार का जाप किया, तब संकट से बच पाये थे।
जब घंटे सात जु बीत चुके, कुएँ से इन्हें निकाले थे।।
जय–जय की धूनि गूंजी नभ में, और ओठ सभी मुस्काये थे।
सम्मेद शिखर में जाकर के, मुनि दीक्षा को तब पाये थे।।4।।

अब भरत सिन्धु कहलाये, आगे को कदम बढ़ाये हैं।
संघस्थ सभी साधुगण को, सत् शिक्षा पाठ पढ़ाये हैं।
करते बिहार तब संघ सभी, सोनागिरजी पर आये हैं।।
गुरु विमलसिन्धु से तब तुमने, पद उपाध्याय पाये हैं।।
जिन आगम के सच्चे ज्ञाता, और उपदेष्टा भी जारी हैं।
लख के प्रशान्त मुद्रा इनकी, तब कर्म कटें दुख हारी हैं।।5।।

जिन मुद्रा शान्त अतिभारी, जग में कीर्ति यह न्यारी है।
नित चले गुरु के पीछे ये, शोभा इनकी तो भारी हैं।।
हैं संघ सुशोभित ही इनसे, नियमित जीवन की क्यारी है।
पंचम कालीन इस मूरत की, महिमा वीरों की वाणी है।।
नित नमन गुरुवर पाठक श्री, भरत सिन्धु बलिहारी है।
नित चलें आपके कदमों पर, बस यही भावना म्हारी है।।6।।

दोहा– पच्चीस गुणों से भूषित तुम, पाठक हो यतिराज।
कोटि कोटि वन्दन करूँ, तारण तरण जिहाज।

ॐ ह्रीं श्री भरतसागर पाठकेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्य नि:स्वाहा।

कमल गुलाब चम्पा कली, खिल खिल महकें सार।
भरत सिन्धु चरणें नमूं, होवें भव से पार।।

पुष्पाञ्जलि

॥ आरती ॥

(उपाध्याय श्री भरतसागर जी महाराज)

तर्ज– इह विधि मंगल आरती कीजे।

ओ SSS भरत सिन्धु की, आरती कीजे.SSS
जनम मरण दुख, तुरन्त ही छीजे।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।

ओSSS ग्राम लोहारिया, छोटे लाल जन्मे।
मात गुलाबी, के सुखनन्दे।।1।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।

ओ SSS किशन लाल जी, नयनों के चन्दे।
कर्म कटे, नित प्रति, तिन बन्दे।।2।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।

ओ SSS बाल ब्रह्मचारी, श्रुतवन्दे,
शान्त स्वभावी, गुरु निर्द्वन्दे।।3।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।

ओ ऽऽऽ पच्चीस मूलगुणों से भूषित।
श्री पाठक हो, तुम गुण वन्दे।।4।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।
ओ ऽऽऽ शान्त है मूरत, वाणी भूषण।
ज्ञान दिवाकर, तम को हन्ते।।5।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।
ओ ऽऽऽ मणिमय दीपक, थाल सजाते।
आरती, करते, कर्म नशन्ते।।6।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।
ओ ऽऽऽ उपसर्ग जेता, सरल स्वभावी।
समता भावी, कर्म दहन्ते।।7।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।
ओ ऽऽऽ प्रभा चरण में, शीश नमन्ते।
भवोदधि प्रभु, पार करते।।8।।
बोल, जय बोल, बोल जय जय बोल।।

श्री वीतरागाय नमः

आरती

श्री समवसरण जी की

ओऽम जय समवसरण शोभा। स्वामी जय समवसरण शोभा।
सभा मध्य जिनराज विराजे, तेरी अति शोभा।
ॐ जय समवसरण......
केवलज्ञान हुआ जब प्रभु को, कुबेर करी रचना 2। स्वामी
देव इन्द्र सौ मस्तक नावे, गावे तब महिमा।।1।।
ॐ जय समवसरण......
सप्तभूमि है समवसरण की, मानस्तम्भ महान 2। स्वामी
मान गले मानी का आकार, अद्‌भुत् है रचना।।2।।
ॐ जय समवसरण......
द्वादश सभा है भव्यजनों की, शोभा अतिभारी 2। स्वामी
दिव्यध्वनि सुनते जीवों के, पाप नशे भारी है।।3।।
ॐ जय समवसरण......
समवसरण का अतिशय सुन लो, चमत्कार न्यारा 2। स्वामी
वैर विरोध न रहे किसी से, हो सबका प्यारा।।4।।
ॐ जय समवसरण.....
रोग-शोक-भय-भूतपिशाचिनी, यहाँ नहीं आवे।2। स्वामी
दुख दरिद्र सब दूर भागे अरु, मुक्तिरमा पावे।।5।।
ॐ जय समवसरण......
शिखर समेद पे विमलसिन्धुजी, रचना की प्यारी 2। स्वामी
दर्शन करते भव्य सभी अरु, करते जयकारी।
ॐ जय समवसरण......
रत्न दीपमय थाल रचाकर, आरती करुं तेरी 2। स्वामी
स्याद्वादमती गुण को गावे, नाशे कर्मबली।
ॐ जय समवसरण......

☆☆☆



साधु संघ नायक आचार्य

❑ उपाध्याय श्री भरतसागरजी

आयारं पंचविहं चरदि चरावेदि जो णिरदिचारं।
उवदिसदि य आयारं एसो आयारं णाम।। (भ. आ./मू. 419)

जो मुनि पाँच प्रकार के आचार निरतिचार स्वय पालता है और इन पांच आचारों में दूसरों को भी प्रवृत करता है, तथा आचार का शिष्यों को भी उपदेश देता है, **उसे आचार्य कहते हैं।**

'सिस्साणुग्गहकुसलो' – अर्थात् शिष्यों पर अनुग्रह करने मे कुशल आचार्य कहलाते है।

साधुओ को दीक्षा–शिक्षा दायक, अनेक दोष निवारक, तथा अन्य अनेक गुण विशिष्ट सघनायक साधु को आचार्य कहते हैं। **वीतराग होने के कारण पंचपरमेष्ठी में उनका स्थान है।** इनके अतिरिक्त गृहस्थियों को धर्म–कर्म का विधि–विधान कराने वाला गृहस्थाचार्य है। पूजा–प्रतिष्ठा आदि कराने वाले प्रतिष्ठाचार्य है। सल्लेखना गत क्षपक साधु को चर्या करानेवाला। निर्यापकाचार्य है। इनमें से साधु-रुपधारी आचार्य ही पूज्य हैं, अन्य नहीं।

पंचाचारसमग्गा पंचिंदियदंतिदप्पणिद्दलणा।
धीरा गुणगंभीरा आयरिया एरिसा होंति।। (नियमसार 73)

पचाचारो से परिपूर्ण, पञ्चेन्द्रिय रुपी हाथी के मद का दलन करने वाले, धीर और गुण गभीर, ऐसे आचार्य होते हैं। **'आचरन्ति तस्माद् व्रतानीत्याचार्या:।'** (सर्वार्थ सिद्धि 9/24/442) अर्थात् जिसके निमित्त से व्रतों का आचरण करते है **वह आचार्य कहलाते हैं।**

'पञ्चविधमाचारं चरति चारयतीत्याचार्य: चतुर्दशविद्यास्थानपारग:, एकादशाङ्गधर:, आचाराङ्गधरो वा तात्कालिकस्वसमय–परसमय–पारगो व मेरुरिव निश्चल:, क्षितिरिव सहिष्णु:, सागर इव बहि: क्षिप्तमल:, सप्तभयविप्रमुक्त: आचार्य:।' दर्शन, ज्ञान, चारित्र तप और वीर्य इन पाच आचारों का स्वय आचरण करता है और दूसरे साधुओं से आचरण कराता है उसे आचार्य कहते है। जो चौदह विद्यास्थानो का पारंगत है, ग्यारह अग का धारी है, अथवा आचारांगमात्र का धारी है अथवा तत्कालीन स्वसमय और परसमय में पारंगत है, मेरु के समान निश्चल है, पृथ्वी के समान सहनशील है, जिसने समुद्र के समान मल अर्थात् दोषो को बाहर फेक दिया, और जो सात प्रकार के भय से रहित है, **उसे आचार्य कहते हैं।**

प्रवचनरुपी समुद्र के जल के मध्य में स्नान करने से अर्थात परमागम के परिपूर्ण अभ्यास और अनुभव से जिसकी बुद्धि निर्मल हो गयी है, जो निर्दोष रीति से छह आवश्यकों का पालन करते है, देश, कुल, जाति से शुद्ध हैं, सौम्यमूर्ति हैं, अन्तरग और बहिरंग परिग्रह से रहित हैं, जो मेरु पर्वत के समान निष्कम्प है, जो शूरवीर हैं, जो सिंह के समान निर्भीक हैं, जो निर्दोष हैं, आकाश के समान निर्लेप हैं, **ऐसे आचार्य परमेष्ठी होते हैं।**

संगह–णुग्गह कुसलो सुत्तत्थ–विसारओ पहिय–कित्ती।
सारण–वारण–सोहण–किरियुज्जुतो हु आहरियो।। 31।। (धवला पु.1)

संगहणुग्गहकुसलो सुत्तत्थविसारओ पहियकित्ती।

किरिआचरणसुजुत्तो गाहुय आदेज्जवयणो य।। (मूलाचार 158)

जो संघ के संग्रह अर्थात् दीक्षा और अनुग्रह करने में कुशल हैं, जो सूत्र अर्थात् परमागम के अर्थ में विशारद हैं, जिनकी कीर्ति सब जगह फैल रही है, जो सारण अर्थात् आचरण, वारण अर्थात् निषेध और शोधन अर्थात् व्रतों की शुद्धि करने वाली क्रियाओं में निरन्तर उद्यत हैं, उन्हें, **आचार्य परमेष्ठी** कहते हैं।

जो दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप, और वीर्य इन पाँच आचारों का स्वयं पालन करते हैं, और दूसरों से (अन्य साधुओं से) पालन कराते हैं उन्हें **आचार्य** कहते हैं।

'आचार्योऽनादितो रूढेर्योगादपि निरुच्यते'' अर्थात् अनादि रुढ़ि से और योग से भी, निरुक्त्यर्थ से भी आचार्य शब्द की व्युत्पत्ति की जाती है कि जो संयमी अन्य संयमियों से पांच प्रकार के आचारो का आचरण कराता है वह आचार्य कहलाता है। जो व्रत के खण्डित होने पर फिर से प्रायश्चित लेकर उस व्रत में स्थिर होने की इच्छा करने वाले साधु को अखण्डित व्रत के समान व्रतों के आदेशदान के द्वारा प्रायश्चित्त को देता है वह आचार्य कहलाता है।

आचार्य परमेष्ठी अनेक गुणों के विभूषित होते है। 36 मूलगुणों के धारक एव 8 विशेष गुणों के पालक तथा अन्य गुणों से परिपूर्ण होते है।

36 मूलगुण हैं – 12 तप, 6 आवश्यक, 5 आचार, 10 धर्म, और 3 गुप्ति।

दुविहो य तवाचारो बाहिर अब्भंतरो मुणेसव्वो।

एक्केक्को विय छद्धा जधाकमं त परुवेमो।। 345।। (मूलाचार, 345)

बाह्य व अभ्यन्तर के भेद से तपाचार भी दो प्रकार का है, उनमें भी एक-एक के 6-6 भेद हैं।

बाह्य तप

'अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः।' (तत्वार्थ सूत्र 9 अ 19)

तप–तप के अनुष्ठान का नाम तपाचार है। जो बाह्य जनों में प्रकट है वह बाह्य तप है।

'कर्मक्षयार्थ तप्यते इति तपः। यद्वा मार्गाविरोधेन कर्मोच्छेदाय तप्यते।'' कर्म क्षय के लिए जो तपा जाता है वह तप है। अथवा नियमक्रिया रत्नत्रय रुप मार्ग मे किसी प्रकार की हानि न पहुंचाते हुए ज्ञानावरण आदि का या शुभ-अशुभ कर्मो का निर्मूल विनाश करने के लिए जो तपा जाता है उसी का नाम तप है।

अनशन तप – **'अनशनं चतुर्विधाहारपरित्यागः।'** चार प्रकार के आहार का त्याग करना अनशन है।

अनशन तप के लाभ–

'दृष्टफलानपेक्षं संयमप्रसिद्धिरागोच्छेदकर्मविनाशध्यानागमावाप्त्यर्थमनशनम्।' – दृष्टफल, मन्त्रसाधना आदि की अपेक्षा किये बिना सयम की सिद्धि, राग का उच्छेद, कर्मो का विनाश, ध्यान और आगम की प्राप्ति के लिए अनशन तप किया जाता है।

काल की मर्यादा सहित और जीवनपर्यन्त के भेद से अनशन तप दो प्रकार का है। काल की मर्यादा सहित साकांक्ष है और यावज्जीवन अनशन निराकांक्ष होता है। (मूलाचार 347)

साकांक्ष अनशन– वेला, तेला, चोला, पाँच उपवास, पन्द्रह दिन और महीने भर का उपवास, कनकावली, एकावली आदि तपश्चरण विधान के साकांक्ष अनशन कहे जाते हैं। अर्थात् आहार का त्याग करना, व्रतों का आचरण करना, समय को निर्धारित कर भोजन ग्रहण करना साकांक्ष अनशन कहलाता है। इसे श्रेष्ठ आचार्य ग्रहण करते हैं।

निराकांक्ष–भक्तप्रतिज्ञा, इंगिनी और प्रायोपगमन तथा ऐसे और जो भी अनशन हैं वे निराकांक्ष अनशन कहे जाते हैं।

अवमौदर्य तप–अवमौदर्यतृप्तिभोजनं। अतृप्ति भोजन अर्थात् पेट भर भोजन न करना अवमौदर्य है।

बत्तीसा किर कवला परिसस्स दु होदि पयदि आहारो।
एगकवलादिहिं तत्तो ऊणियगहणं उमोदरियं।।(मूलाचार, 350)

पुरुष का निश्चित रुप से स्वभाव से बत्तीस कवल आहार होता है। उस आहार में से एक कवल आदि क्रमश: कम ग्रहण करना अवमौदर्य तप है।

संयम को जागृत रखने, दोषों के प्रशम करने, सन्तोष और स्वाध्याय आदि की सुखपूर्वक सिद्धि के लिए अवमौदर्य तप किया जाता है। भूख से कम खाने वाले को प्रमाद नहीं होने से ध्यान, स्वाध्याय आदि निर्विघ्न होते हैं किन्तु अधिक भोजन करने वाले के प्रमाद षडावश्यक में बाधा पहुँचती है।

रस परित्याग–दूध, दही, घी, तेल, गुड़ और लवण इन रसों का परित्याग व तिक्त, कटु, कषाय, अम्ल तथा मधुर इन पाँच प्रकार के रसों का त्याग रसपरित्याग है। **"रसानां परित्यागो रसपरित्याग:, स्वाभिलषितस्निग्धमधुराम्लकटुकादिरसपरिहार:"।** अर्थात् अपने लिए इष्ट, स्निग्ध, मधुर अम्ल, कटुक आदि रसों का परिहार करना रस परित्याग तप कहलाता है।

वृत्तिपरिसंख्यान–

वत्ते: परिसंख्या वृत्तिपरिसंख्या गृहदायक भाजनौदनकालादीनां परिसंख्यानपूर्वको ग्रह·। (मूला 346)

आहार की चर्या में परिसंख्या–गणना अर्थात् नियम करना। गृह का, दातार का, बर्तनों का, भात आदि भोज्य वस्तु का या काल आदि का गणनापूर्वक नियम करना वृत्तिपरिसंख्यान है। जैसे–आदि मे सिर्फ मूग ही खाऊंगा। वृत्तिपरिसख्यान तप से इच्छाओं का निरोध होकर क्षुधा व तृषा को सहन करने का अभ्यास होता है।

कायक्लेश–

कायस्य शरीरस्य परिताप: कर्मक्षयाय बुद्धिपूर्वकं शोषणं आतापना भ्रावकाशवृक्षमूलादिभि:। क्लेश देना, आतापन, अभ्रावकाश और वृक्षमूल आदि के द्वारा कर्मक्षय के लए बुद्धिपूर्व शोषण करना कायक्लेश तप है। खड़े होना, कायोत्सर्ग करन, सोना, बैठना और अनेक विधिनियम ग्रहण करना, इनके द्वारा आगमानुकूल कष्ट सहन आदि कायक्लेश तप हैं।

इस तपश्चरण द्वारा शरीर में कष्ट–सहिष्णुता आ जाने से, घोर उपसर्ग या परीषहों के आ जाने पर भी साधु अपने ध्यान से चलायमान नहीं होते हैं।

विविक्तशयनासन–

स्त्री पशुषण्ढकाविवर्जित स्थानसेवनं षष्ठमिति। स्त्री, पशु, और नपुंसक से वर्जित स्थान का सेवन करना विविक्तशयनासन तप है। एकान्त एवं जन्तुओं की पीड़ा से रहित शून्य घर आदि में निर्बाध ब्रम्हचर्य, स्वाध्याय और ध्यान आदि की प्रसिद्धि के लिए संयत को शय्यासन लगाना चाहिए।

बाह्यतप का फल–

अनशन आदि करने से ज्ञानावरण आदि कर्मों की, शरीर के तेज की, रागद्वेष की और विषयों की, आशा की हानि होती है। एकाग्रचिन्तानिरोध रुप शुभध्यान आदि और संयम वृद्धिंगत होते हैं, दुख को सहने की शक्ति आ जाती है, सुख में आसक्ति नहीं होती, आगम की प्रभावना होती है अथवा ब्रह्मचर्य में निर्मलता आती है। अतः बाह्य तप वह है–

सो णाम बाहिरतवो जेण मणो दुक्कडं ण उट्ठेद।
जेण य सद्धा जायदि जेण य जोणा ण हीयन्ते।। (मूलाचार, 358)

जिससे मन अशुभ को प्राप्त नहीं होता है, जिससे श्रद्धा उत्पन्न होती है तथा जिससे योग हीन नहीं होती हैं।

अन्तरंग तप

"मनोनियमार्थन्वात्" अर्थात मन को नियमन करने वाले अंतरंग तप कहलाते हैं (सर्वार्थ सिद्धि) **सन्मार्ग अभ्यन्तरा: तदवगम्यत्वात्।** अर्थात रत्नत्रय कौक जानने वाले मुनि उसका आचरण करते हैं।

पायच्छिन्तं ।विणयं वेज्जावच्चं तहेव सज्झायं।
झाणं च विउस्सग्गो अब्भंतरओ तवो एसे।। (मूलाचार, 360)

(1) **प्रायश्चित– "प्रायश्चित–पूर्वापराधशोधनं"** पूर्व के किय हुए अपराधों का शोधन करना प्रायश्चित है। "प्रमाद दोष परिहार: प्रायश्चित्तम्" प्रमादजन्य दोष का परिहार करना प्रायश्चित्त तप है। (सर्वार्थसिद्धि)

आलोयणंपडिकमणं उभयविवेगो तहा विउस्सग्गो।
तव छेदो मूलं विय परिहारो चेव सद्दहणा।। (मूलाचार 362)

आलोचना प्रतिक्रमण, तदुभय, विवेक, व्युत्सर्ग, तप, छेद, मूल, परिहार और श्रद्धान ये दश प्रायश्चित के भेद हैं।

(1) **आलोचना– "आचार्याय देवाय वा चारित्राचारपूर्वकमुत्पन्नापराधनिवेनं।"** आचार्य अथवा जिनदेव के समक्ष अपने में उत्पन्न हुए दोषों का चारित्राचारपूर्वक निवेदन करना आलोचना है।

(2) **प्रतिक्रमण–"रात्रिभोजनत्यागव्रतसहितपचमहाव्रतोच्चारणं संभावनं दिवस–प्रतिक्रमणं पाक्षिकं वा।"** रात्रिभोजनत्याग व्रत सहित पॉच महाव्रतों का उच्चारण करना, सम्यक् प्रकार से उनको भाना अथवा दिवस और पाक्षिक सबधी प्रतिक्रमण करना प्रतिक्रमण प्रायश्चित है।

(3) **तदुभय– "आलोचना–प्रतिक्रमणे"।** आलोचना और प्रतिक्रमण दोनो को करना तदुभय प्रायश्चित्त है।

(4) **विवेक– "द्वि प्रकारो गणविवेक: स्थानविवेको वा"।** विवेक के दो भेद है–गणविवेक और स्थानविवेक। ससक्त अन्नादिक में दोषों को दूर करने मे असमर्थ साधु जो संसक्त अन्नपान के उपकरणादि को अलग कर देता है उसे विवेक प्रायश्चित माना है।

(5) **व्युत्सर्ग**–मल के त्यागने आदि में अतिचार लगने पर प्रशस्तध्यान का अवलम्बन लेकर अन्तर्मुहूर्त आदि कालपर्यन्त कायोत्सर्गपूर्वक अर्थात् शरीर से ममत्व त्यागकर खड़े रहना व्युत्सर्ग प्रायश्चित्त है–

स व्युत्सर्गो मलोत्सर्गाद्यतीचारेऽवलम्ब्य सत्।
ध्यानमन्तर्मुहूर्तादि कायोत्सर्गेण या स्थिति: ।।59।। (भ.आ.)

व्युत्सर्ग का अर्थ विभिन्न आचार्यों ने विभिन्न रुप से माना है। उनके अनुसार–कायोत्सर्ग को व्युत्सर्ग कहते हैं। दु:स्वप्न आनेपर, खोटे विचार होने पर, मलत्याग दोष लगने पर, नदी या महाटवी (भयानक जंगल) को पार करने पर या इसी प्रकार के अन्य कार्यों से दोष लगने पर ध्यान का अवलम्बन लेकर तथा काय से ममत्व त्यागकर अन्तर्मुहूर्त या एक दिन या एक मास या एक पक्ष आदि तक खड़े रहना व्युत्सर्ग तप है। (अकलंकदेव, राजवार्तिक, पृ 622)

किन्हीं का कहना है कि नियत काल तक मन, वचन, काय को त्यागना व्युत्सर्ग है।

(6) **तप**:–

कृतापराध: श्रमण: सत्वादिकगुण भुषण:।
यत्करोत्युपवासादिविधिं तत्क्षालनं तप:।। 52।।

शास्त्रविहित आचरण में दोष लगानेवाला किन्तु सत्व धैर्य आदि गुणों से भूषित श्रमण जो शास्त्रोक्त उपवास आदि करता है वह तप प्रायश्चित है।

आलोचना, प्रतिक्रमण, तदुभय, व्युत्सर्ग, विवेक और तप ये प्रायश्चित्त– डरकर भागना, असामर्थ्य, अज्ञान, विस्मरण, आतंक, रोग आदि के कारण महाव्रतों में अतीचार लगने पर गुरु–आज्ञा एव शास्त्रोक्त विधि से किये जाते हैं।

(7) **छेद–"दीक्षाया: पक्षमासादिभिर्हानि:।"** पक्ष मास आदि से दीक्षा की हानि कर देना छेद है। जो साधु चिरकाल से दीक्षित है, निर्मद है, समर्थ है, और शूर है उससे यदि अपराध हो जाये तो दिन, पक्ष या मास आदि का विभाग करके दीक्षा छेद देने को छेद प्रायश्चित्त कहते हैं। अर्थात् उसकी दीक्षा के समय में कमी कर दी जाती है। जैसे पाँच वर्ष के दीक्षित को चार वर्ष का दीक्षित मानना।

(8) **मूल–"पुनरद्य प्रभृति व्रतारोपणं।"** आज से लेकर पुन: व्रतों का आरोपण करना अर्थात् फिर से दीक्षा देना मूल प्राश्चित है।

(9) **परिहार**–शास्त्रोक्त विधान के अनुसार दिवस आदि के विभाग से अपराधी मुनि को सघ से दूर कर देना परिहार प्रायश्चित है–

विधिवद्दूरात्यजनं परिहारो निजगुणानुपस्थनम्।
सपरगणोपस्थानं पारञ्चिकमित्ययं त्रिविधि:।। (भगवती आराधना, 56)

परिहार प्रायश्चित्त के तीन भेद हैं–निजगुणानुपस्थान, सपरगणोपस्थान और पारंचिक।

मूलाचार के अनुसार परिहार प्रायश्चित्त के दो भेद हैं–गणप्रतिबद्ध और अप्रतिबद्ध।

(1) **गणप्रतिबद्ध प्रायश्चित्त**–जहाँ मुनिगण मूत्रादि विसर्जन करते हैं इस प्रायश्चित वाला पिच्छिका को आगे करके वहाँ पर रहता है और यतियों की वंदना करता है किन्तु अन्य मुनि उनकी वन्दना नहीं करते हैं। इस प्रकार गण में जो क्रिया होती है वह गणप्रतिबद्ध परिहार प्रायश्चित है।

(2) **अप्रतिबद्ध**–जिस देश में धर्म नहीं माना जाता वहाँ जाकर, मौन से तपश्चरण का अनुष्ठान करते हैं उनके आगणबद्ध अर्थात् अगणप्रतिबद्ध प्रायश्चित कहलाता है।

(10) **श्रद्धान–"श्रद्धानं तत्वरुचौ परिणाम: क्रोधादिपरित्यागो वा।"** तत्वरुचि में परिणाम होता है अथवा क्रोधादि का त्यागरुप जो परिणाम है वह श्रद्धान प्राश्चित है।

गत्वा स्थितस्य मिथ्यात्वं यद्दीक्षाग्रहणं पुन:।
तत्छ्रद्धानमिति ख्यातमुपस्थापनमित्यपि।। (भगवती आराधना, 57)

जिसने अपन धर्म छोड़कर मिथ्यात्व को अंगीकर कर लिया है उसे पुनः दीक्षा देने को श्रद्धान प्रायश्चित करते हैं। इसे उपस्थापन भी कहा जाता है।

2. विनय

दंसणणाणेविणाओ चरित्ततवओचारिओ विणओ।

पंचविहो खलु विणओ पंचमगइणायगो भणिओ॥ (मूलाचार, 364)

दर्शन-विनय, ज्ञान-विनय चारित्र में विनय, तप में विनय और औपचारिक विनय इष्ट एवं सद्‌गुणों का साधन है।

(1) **दर्शनविनय**–सम्यक्त्व के आठ गुणों का (उपगूहन आदि का) पालन करना। पंचपरमेष्ठियों में अनुराग करना, उन्हीं की पूजा करना, उन्ही के गुणों का वर्णन करना, उनके प्रति लगाये गये अवर्णवाद अर्थात् असत्य आरोप का विनाश करना और उनकी आसादना अर्थात् अवहेलना का परिहार करना–ये भक्त आदि गुण कहलाते हैं। सम्यक्त्व के पाँच अतिचारों का त्याग करना दर्शन विनय है।

(2) **ज्ञानविनय**–कालाचार, उपधान, बहुमान, अनिह्नव व्यंजन, अर्थ और तदुभय–इन अगों सहित अध्ययन करना ज्ञानविनय है। हाथ पैर धोकर, पर्यकासन से बैठकर, विनयपूर्वक जिनवाणी का अध्ययन करना ज्ञान विनय है। विशेष विनय सहित पढ़ना उपधान है। जो ग्रन्थ पढ़ते हैं और जिनके मुख से सुनते हैं, गुरु, पुस्तक दोनों की पूजा करना, स्तवन करना बहुमान है, गुरु के नाम को नहीं छिपाना अनिह्नव है। शब्दों को शुद्ध पढ़ना व्यंजनशुद्ध विनय है। अर्थ शुद्ध करना अर्थशुद्ध विनय है। दोनों को शुद्ध रखना व्यंजनार्थ उभयशुद्ध विनय है।

(3) **चारित्रविनय**–इन्द्रिय और कषायों का निग्रह, गुप्तियॉ और समितियाँ संक्षेप से यह चरित्र विनय कहा जाता है।

(4) **तपो विनय**– "आतापनाद्युत्तरगुणेषूद्योग उत्साहः।" आतापन आदि उत्तर गुणों में उद्यम–उत्साह रखना, उनके करने में जो श्रम होता है उसको निराकुलता से सहन करना, षडावश्यकों में हानि–वृद्धि नहीं करना, श्रद्धाभाव रखना आदि तपो विनय है।

(5) **औपचारिक विनय**–कायिक, वाचिक, मानसिक के भेद से तीन प्रकार का औपचारिक विनय होता है जो प्रत्यक्ष और परोक्ष दो प्रकार से किया जाता है। प्रत्यक्ष मे, वर्तमान में पूज्य पुरुषों की काय सम्बन्धी विनय–

1. पूज्य पुरुषों के आने पर आदरपूर्वक अपने आसन से उठना, जाने पर खड़े हो जाना, उचित स्थान पर बैठना आदि।

2 उनके योग्य पुस्तकादि देना।

3. उनके सामने ऊंचे आसन पर नहीं बैठना।

4. काल, भाव और शरीर के योग्य कार्य करना अर्थात् गर्मी का समय हो तो शीत दूर करने का उपाय करना। झुककर यथायोग्य प्रणाम करना।

गुरु के अनुकूल गुरु की विनय, उनकी आज्ञा का पालन करना, उनके मन को प्रसन्न रखना, उनके अनुकूल चलना गुरु के पीछे–पीछे चलना, गुरु के सोने के पश्चात् सोना, उनसे नीचे आसन पर सोना, उनके ठहरने के लिए स्थान व आसन देना आदि।

इसी प्रकार हित वचन, मित वचन और मधुर वचन, सूत्रों के अनुकूल वचन, आगमानूकूल अनिष्ठुर और कर्कशता रहित वचन बोलना वाचिक विनय है। तथा पाप विश्रुति परिणामों का त्याग

करना। धर्म और उपकार को प्रिय कहते हैं तथा सम्यग्ज्ञानादि के लये हत संज्ञा है। प्रिय और हित में परिणामों को लगाना अर्थात् चित्त से उत्पन्न होने वाला मानसिक विनय है।

3. वैयावृत्य–

क्लेशसंक्लेशनाशायाचार्यादिदशकस्य य:
व्यावृत्तस्तस्य यत्कर्म तद्वैयावृत्यमाचरेत्।।

आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, गण, कुल, संघ साधु और मनोज्ञ इस प्रकार दस प्रकार के मुनियों के क्लेश अर्थात् शारीरिक पीड़ा और संक्लेश अर्थात आर्त–रौद्ररुप दुष्परिणामों का नाश करने के लिए प्रवृत्त साधु या श्रावक का, जो कर्म–मन, वचन और काय का व्यापार है वह वैयावृत्य है–उसे साधु वर्ग आपस में करते हैं।

वैयावृत्य का करने वाला उत्तम सुख को प्राप्त होता है। वह मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगरुपी विष को प्रभावशाली शिक्षा के द्वारा दूर करता है। उसे इन्द्र, अहमिन्द्र चक्रवर्ती आदि पदों की तो गिनती ही क्या, इससे तीर्थकर पद तक की प्राप्ति होती है।

4. स्वाध्याय–

ज्ञान भावनालस्यत्याग: स्वाध्याय:। (**स.सि.**) आलस्य का त्याग कर ज्ञान की आराधना करना स्वाध्याय तप है। *वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा तथा स्तुति मंगल इस प्रकार से* पाच अगों से सहित हो क्रमश: '**प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नम:**' नियमानुसार करने से आत्म तत्व की प्राप्ति एव भेद ज्ञान की सिद्धि होती है। स्वाध्याय परमोत्कृष्ट तप है, समीचीन स्वाध्याय से संवर और निर्जरा होती है। शब्द–अर्थ की शुद्धता से पढ़ना, न जल्दी–जल्दी पढना न धीरे–धीरे पढना, सम्यक् प्रकार से विनयपूर्वक मन, वचन, काय की शद्धिपूर्वक अध्ययन करना स्वाध्याय है।

स्वाध्याय से मुमुक्षु की तर्कणाशील बुद्धि का उत्कर्ष तथा परमागम की स्थिति का पोषण होता है। मन, इन्द्रिय और संज्ञा, परिग्रह अभिलाषा का निरोध होता है।

5. ध्यान तप–

एक विषय पर चिन्ता का निरोध करना ध्यान है। (**एकाग्र चिन्ता निरोधी ध्यान:**)।

ध्यान चार प्रकार का होता है। आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान और शुक्लध्यान। प्रथम दो ध्यान अशुभ ध्यान हैं तथा पश्चात् के दो ध्यान शुभ है। मुनराज धर्मध्यान व शुक्लध्यान को ही करते है। वर्तमान मे धर्मध्यान की विशेषता है जो मोक्ष के लिए कारण है।

व्युत्सर्ग तप–

'**आत्मात्मीयसंकल्पत्यागो व्युत्सर्ग:।**' अहकार और ममकार रुप संकल्प–विकल्प का त्याग करना व्युत्सर्ग तप है।

दस धर्म–

देशयामि समीचीनं धर्म कर्मनिवर्हणम्।
संसारदुखत: सत्त्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे।। (रत्नकरण्ड श्रावकाचार 2)

जो प्राणियों को संसार के दुख से उठाकर उत्तम सुख (वीतराग सुख) में धारण करे उसे धर्म कहते हैं। वह धर्म कर्मों का विनाशक तथा समीचीन है। आचार्य परमेष्ठी ऐसे ही धर्म का पालन करते हैं व कराते हैं जो नाना रुप से ग्रहण किया जाता है।

(1) **उत्तम क्षमा**– **"शरीरस्थितिहेतुमार्गणार्थं परकुलान्युपगच्छतो भिक्षोर्दुष्टजनाक्रोशप्रहसनावज्ञाताडनशरीरव्यापादनादीनां संनिधाने कालुष्यानुत्पत्तिः क्षमा"।** शरीर की स्थिति के कारण की खोज करने के लिए पर–कुलों मे जाते हुए भिक्षु को दुष्ट जन गाली–गलौज करते हैं, उपहास करते हैं, तिरस्कार करते हैं, मारते–पीटते हैं और शरीर को कष्ट देते हैं तो भी उनके कलुषता का उत्पन्न न होना **उत्तमक्षमा धर्म** है।

(2) **उत्तम मार्दव**–**"जात्यादिमदावेशादभिमानाभावो मार्दव माननिर्हरणम्"**। जाति आदि मदों के आवेशवश होने वाले अभिमान का अभाव करना मार्दव है। मार्दव का अर्थ है मान का नाश करना।

(3) **उत्तम आर्जव**–**"योगस्यवक्रता आर्जवम्।"** योगों का वक्र न होना **आर्जव** है।

ऋजोर्भाव: आर्जवं–सरल भावों का होना आर्जव है, कुटिल भावों से रहत निर्मल हृदय, मायाचारी से दूर रहना **आर्जव धर्म** है।

(4) **उत्तम शौच**–लोभ के प्रकार का त्याग करना शौच है। प्रकर्षप्राप्त लोभ का त्याग करना, तथा ममत्व को हृदय से दूर करना **शौच धर्म** है। जो परममुनि इच्छाओं को रोककर और वैराग्य रुप विचारों से युक्त होकर आचरण करता है उसे शौच धर्म कहा जाता है।

(5) **उत्तम सत्य**–**"सत्सु प्रशस्तेषु जनेषु साधु वचनं सत्यमित्युच्यते।"** अच्छे पुरुषों के साथ साधु वचन बोलना **सत्य** है।

(6) **उत्तम संयम**–व्रतों को धारण करना कषायो का निग्रह, समिति का पालन करना, व्रत, दान, पूजा आदि करना **संयम** है।

(7) **उत्तम तप**– **'कर्मक्षयार्थं तप्यते इनत तप:"**। कर्म क्षय के लिए जो तपा जाता है वह **तप धर्म** है।

(8) **उत्तम त्याग**–**"संयतस्य योग्यं ज्ञानादिदानं त्याग:"**। संयत के योग्य ज्ञानादिक का दान करना त्याग धर्म है। **त्यजतीति इति त्याग**:– जो छोडना है वह त्याग है।

(9) **उत्तम आकिंचन्य**– **"उपात्तेष्वपिशरीरदिषु संस्कारापोहाय ममेदमित्यभिसन्धिनवृतिराकिंचन्यम् शरीरादिषुंस्कारापोहायमेदमित्यभिसन्धिनिवृत्तिरा–किंचन्यम्।"** जो शरीरादि उपात्त हैं उनमें भी सस्कार का त्याग करने के लए 'यह मेरा है' इस प्रकार के अभिप्राय: का त्याग करना **आकिंचन्य धर्म** है।

(10) **उत्तम ब्रम्हाचर्य**– **"अनुभूताङ्गनास्मरणकथा श्रवणस्त्री संसक्त शयनासनादिवर्ज नाद्ब्रह्मचर्यपरिपूर्णमवतिष्ठते।"** अनुभूत स्त्री का स्मरण न करने से, स्त्रीविषयक कथा के सुनने का त्याग करने से और स्त्री से सटकर सोने व बैठने का त्याग करने से परिपूर्ण ब्रह्मचर्य होता है। अथवा स्वतन्त्र वृत्ति का त्याग करने के लिए गुरुकुल मे निवास करना ब्रह्मचर्य है।

"ब्रह्माणि आत्मनि चरतीति ब्रम्हाचर्य:"। जो अपनी आत्मा मे रमण करता है वह **ब्रह्मचर्य** धर्म है।

गुप्ति

"यत: संसारकारणादात्मनो गोपनं भवति सा गुप्ति:।" (स.सि. 9/2) अर्थात् जिसके बल से ससार के कारणों से आत्मा का गोपन अर्थात् रक्षा होती है वह गुप्ति है।

जा रायादिणियत्ती मणस्स जाणाहि तं मणोगुत्ती।
अलियादिणियत्ती वा मोणं वा होदि वचिगुत्ती।। (मूलाचार, 332)

(1) मनोगुप्ति– मन से जो रागादि की निवृत्ति है उसे मनोगुप्ति कहते हैं।

(2) वचनगुप्ति– असत्य अभिप्रायों से वचन को रोकना अथवा मौन रहना, ध्यान–अध्ययन, चिंतनशील होना अर्थात् वचन के व्यापार को रोककर मौन धारण करना, असत्य वचन नहीं बोलना वचनगुप्ति कहलाती है।

(3) कायगुप्ति–काय की क्रियाओं के अभाव रुप कायोत्सर्ग करना कायगुप्ति है, अथवा हिंसादि पापों का अभाव होना भी कायगुप्ति है। स्थिर किया है शरीर जिसने तथा परीषह आ जाने पर भी अपने पर्यकासन से ही स्थिर रहे, किन्तु डिगे नहीं उस मुनि के कायगुप्ति मानी गई है।

इस प्रकार आचार्य परमेष्ठी इन 36 मूलगुणों का उत्तमोत्तम रुप से पालन करते हैं तथा उनमें कई विशेष गुण भी पाये जाते हैं।

आचारवान् श्रुताधारः प्रायश्चित्तसनादिदः।
आयापायकथी दोषाभासकोऽस्त्रावकोऽपि च॥
सन्तोषकारी साधूनां निर्यापक इमेऽष्ट च।
दिगम्बरवेष्यनुद्दिष्ट भोजी (ज्य) शय्याशनीति च॥

आचार्य को आचारवान्, श्रुताधार, प्रायश्चित्तद, आसनादिद, आयापाय–कथी, दोषाभाषक, अस्त्रावक और संतोषकारी होना चाहिए, अर्थात् आचार्य मे आचारवत्व, श्रुताधारत्व, प्रायश्चित–दातृत्व, आसनादि–दातृत्व आयापायकथित्व, दोषाभाषकत्व अस्त्रावत्व और संतोषकारित्व ये आठ गुण होते हैं।

(1) आचारवत्व–दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप और वीर्य इन पॉच आचारों का स्वय पालन करना तथ दूसरो करना आचारवत्व गुण है।

(2) श्रुताधारत्व–जिसकी श्रुतज्ञान रुपी संपत्ति की कोई तुलना न कर सके उसे श्रुतधारी अथवा श्रुतज्ञानी कहते है। नौपूर्व, दशपूर्व या चौदह पूर्व तक के श्रुतज्ञान को अथवा कल्प व्यवहार के धारण करने को आधारवत्व कहते है।

(3) प्रायश्चित्तद–प्रायश्चित विषयक ज्ञान के रखने वाले को प्रायश्चित्तद कहते है। जिन्होने अनेक बार प्रायश्चित को देते हुए देखा है, जिन्होने स्वय भी अनेक बार उसका प्रयोग किया हो, स्वयं प्रायश्चित ग्रहण किया हो अथवा दूसरे को दिलवाया हो वह प्रायश्चित्तद अर्थात् प्रायश्चित को देने वाला है। दूसरे ग्रन्थो मे इस गुण को व्यवहारपटुता कहा है।

(4) आसनादि–समाधिमरण करने मे प्रवृत्त हुए साधक साधुओं को आसन आदि देकर जो उनकी परिचर्या करते है वे आसनादिद–आसनादि को देने वाले कहलाते हैं। इन्हें परिचारी अथवा प्रकारी भी कहते हैं।

(5) आयापायकथी–जो क्षपक किसी प्रकार का अतिचार आदि न लगाकर सरल भावों से अपने दोषों की आलोचना करता है आचार्य उसके गुणों की प्रशंसा करते हैं और आलोचना मे दोष लगाने वाले के दोष बतलाते है, वे आय–लाभ और अपाय–हानि का कथन करने वाले हैं।

(6) दोषाभाषक–दोष छिपाने वाले शिष्य से दोष कहलवाने की सामर्थ्य रखने वाले आचार्य को दोषाभाषक कहते हैं। जिस प्रकार चतुर चिकित्सक ब्रण के भीतर छिपे हुए विकार को पीडित कर बाहर निकाल देता है उसी प्रकार आचार्य भी शिष्य के छिपाये हुए दोष को अपनी कुशलता से प्रकट करा लेता है।

(7) अस्रावक–जो किसी के गोप्य दोष को कभी प्रकट नहीं करता वह अस्रावक है। जिस प्रकार संतप्त तवे पर पडी पानी की बूद वहीं शुष्क हो जाती है इसी प्रकार शिष्य द्वारा कहे हुए दोष जिसमें शुष्क हो जाते है अर्थात् जो किसी दूसरे को नहीं बतलाते हैं, वे अस्रावक है।

(8) **संतोषकारी**–जो साधुओं को संतोष उत्पन्न करने वाला हो अर्थात् क्षुधा, तृषा आदि की वेदना के समय हितकर उपदेश देकर साधुओं को संतुष्ट करता हो उसे संतोषकारी कहा है। इसका दूसरा नाम सुखावह भी है।

पाँच आचारों का पालन

(1) **दर्शन–आचार**–जो चिन्दानन्दरुप शुद्धात्म तत्त्व हैं वही सब प्रकार आराधने योग्य हैं, उससे भिन्न जो पर वस्तु है वह सब त्याज्य है, ऐसी दृढ़ प्रतीति चंचलता रहित निर्मल अवगाढ़ पर श्रद्धा है उसको सम्यक्त्व कहते हैं। उसका आचरण अर्थात् उसे स्वरुप परिणमन दर्शनाचार कहा जाता है।

(2) **ज्ञानाचार–ज्ञानं तत्वप्रकाशनं।** तत्त्व प्रकाशन का नाम ज्ञान है। **तत्रैव संशय विपर्यासानध्यवयसायरहितत्वेन स्वसंवेदनं ज्ञान रुपेण ग्राहकबुद्धिः सम्यग्ज्ञानं तत्राचरणं परिणमनं ज्ञानाचारः** (प.प्र. 7/13)। अर्थात् निजस्वरुप में सशय विमोह विभ्रम रहित जो स्वसंवेदनज्ञान रुपग्राहक–बुद्धि वह सम्यग्ज्ञान हुआ, उसका जो आचरण अर्थात् उस रुप परिणमन वह (निश्चय) ज्ञानाचार है। स्वाध्याय का काल, मन, वचन, काय से शास्त्र की विनय यत्न से करना, पूजा सत्कारादि से पाठ करना अपने पढ़ाने वाले गुरु का तथा पढ़े हुए शास्त्र का नाम प्रकट करना, छिपाना नहीं; वर्ण पद वाक्य को शुद्धि से पढना, अनेकान्त स्वरुप की शुद्धि, अर्थ सहित पाठादिक की शुद्धि होना अर्थात् काल, विनय, उपधान, बहुमान, अनिह्नव अर्थ व्यजन और तदुभय सम्पन्न ज्ञानाचार है।

(3) **चारित्राचार–"चारित्रं पापक्रिया निवृत्तिः"**अर्थात् पाप क्रिया से दूर होना चारित्र है।

पाणिवहमुसावाद–अदत्तमेहुणपरिग्गहा विरदो।
एस चरित्तायारो पंचविहो होदि णादव्वो।। (मू.आ. 288)

हिंसा और असत्य से तथा अदत्तवस्तुग्रहण, मैथुन और परिग्रह से विरति होना यह पांच प्रकार का चारित्राचार कहा गया है।

प्राणियो के वध का त्याग करना और इन्द्रियों के सयमन–निरोध में प्रवृति होना भी चारित्राचार है।

शुद्ध स्वरुप मे शुभ–अशुभ समस्त सकल्प रहित नित्यानंद में निजरस का स्वाद निश्चय अनुभव सम्यग्चारित्र हैं, उसका आचरण उस रुप परिणमन चारित्राचार है। (प.प्र.टी 7/13)

(4) **तपाचार–"तपति दहति शरीरेन्द्रियाणि तपः बाह्यभ्यन्तरलक्षण कर्मदहन–समर्थ।** जो शरीर और इन्द्रियों के तपाता है–दहन करता है वह तप है। वह बाह्य और अभ्यन्तर लक्षण वाला है और कर्मों को दहन करने मे समर्थ है।

(5) **वीर्याचार**–शक्ति को नहीं छिपाना अर्थात् शुभ विषय मे अपनी शक्ति से उत्साह रखना वीर्याचार है।

अणुगुहियबलविरिओ परिक्कामदि जो जहुत्तमाउत्तो।
जुंजदि य जहाथाणं विरियाचारोत्ति णादव्वो।। (मूलाचार, 413)

अपना आहार आदि से नहीं छिपाया है शक्ति व बल को जिसने ऐसा साधु यथोक्त चारित्र में तीन प्रकार अनुमति रहित, सत्रह प्रकार संयम विधान करने के लिए आत्मा को युक्त करता है।

इस प्रकार जो श्रमण अपनी आत्मा को दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप और वीर्य इन पाँच आचारों से निग्रह करने में समर्थ है वह क्लेश रहित होकर सिद्धि को प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार पंचाचार में तत्पर आकिंचन, कषायों को नष्ट करने वाले, पाँच इन्द्रिय रुपी मदान्ध हाथी के गर्व को चूर करने में कुशल है, जो घोर उपसर्गो के विजय से उपार्जित धीरता आदि गुणों से गम्भीर हैं, वृद्धिगत निश्चल योग मे ध्यान कुशल वृद्धि वाले उत्कर्षता को प्राप्त हुए गुणों से सहित ऐसे आचार्यों को हम भवदुःखों के समूह को भेदन करने के लिए अर्जित करते हैं। ❑ ❑ ❑



चारित्र व ध्यान की आवश्यकता है अधिक ज्ञान की नहीं

❑ पू. 105 आर्यिकारत्न नन्दामती जी

जब धर्म मार्ग अविरूद्ध हुआ पथ भूल भटकते थे प्राणी।
सत गुरु के उपदेश बिना, नहि जान सके थे जिनवाणी।।
धर दीक्षा मुनि धर्म बताया स्वयं बने निश्चय ध्यानी।
प्रणामूं श्री विमल सिन्धुजी को, जिनकी महिमा सबने जानी।।

शिष्य बोला– जब मे ध्यान करने बैठता हूं, इस सम्बन्ध को कैसे रोका जाय।

गुरु– जो आप कह रहे हैं वह ध्यान नहीं। आपका देह से ममत्व नहीं टूटता, बल्कि ध्यान आसन लगाने के उपरान्त अभ्यास न होने के कारण शरीर में झुनझुनी चढ़ती है और देह के कुछ क्रियाशील अग शून्य होने लगते हैं, तभी ऐसा प्रतीत होता है कि हम देहातीत हो रहे हैं, लेकिन वह ध्यान नहीं है। ध्यान तो देहातीत होने के लिए ही किया जाता है। यहाँ पर देहातीत होने से मेरा अर्थ देह को छोड़ना नही है। लेकिन शरीर से ममत्व त्याग करना है, जब तक शरीर से ममत्व भाव है तब तक ध्यान नहीं हो सकता, यह ही संभव है।

ममत्व भाव को घटाने से तथा तत्वों को चितवन करने से धीरे–धीरे ममत्व छूटता जाता है।

शिष्य– गुरुजी आप ध्यान में क्या करते हैं।

गुरु– पहरेदार बनकर खड़ा रहता हूँ। अशुभ भावों को भीतर आने नहीं देता।

शिष्य– पहरेदार बनना भी विकल्प है, जबकि ध्यान निर्विकल्प अवस्था का नाम है।

गुरु– ध्यान दो प्रकार होते हैं, (1) शुभ ध्यान (2) अशुभ ध्यान। प्रथम साधक को अशुभ से बचना होता है तथा शुभ का अभ्यास करना होता है, ध्यान एकदम से नहीं। पहले अशुभ को निकालना ही पड़ता है निर्विकल्प अवस्था तो बहुत ऊँची अवस्था है।

शिष्य– गुरुजी यह ध्यान किसको हो सकता है।

गुरु– जिसने समस्त परिग्रह का त्याग किया हो उसे ही निर्विकल्प ध्यान हो सकता है।

शिष्य– ध्यान में क्या परिग्रह बाधक है।

गुरुजी– हॉ परिग्रह ही तो पाप की जड़ है और अत्यन्त बाधक है। स्नान से पहले कपड़े उतारना आवश्यक है उसी प्रकार ध्यान के सरोवर में डुबकी लगाने के लिए परिग्रह रूपी वस्त्र उतारना आवश्यक है। इसी से ही विकल्प उठते हैं।

शिष्य– आपके इस कथने से ज्ञात होता है कि जितने भी दार्शनिक ध्यान कराते हैं वह ध्यान नहीं।

गुरु– ध्यान के बहुत भेद हैं। लेकिन पहले मुख्य दो का ही ध्यान समझो, शुभ ध्यान संवर निर्जरा तथा शुभ बन्ध का भी कारण है। वह भी परिग्रह के सद्भाव में पूर्ण रूप से संभव नहीं। यदि आप मानते हों तो बड़ी भूल है।

शिष्य— ध्यान के ऊपर अनेक पुस्तकें बहुत सुन्दर–सुन्दर व्याख्यायें की है वह क्या झूठी है।

गुरु— पुस्तक लिखना अलग बात है और ध्यान करना अलग है। पुस्तक ज्ञाना वरणी कर्म के क्षयोपशम से लिख सकते हैं कोई भी, पर ध्यान करना सरल नहीं है। जैसे एक व्यक्ति ने तैरने के ऊपर अनेक पुस्तकें लिखीं यदि उसे पानी में छोड़ दिया जाय तो वह डूब जावेगा। ज्ञान का ध्यान से क्या सम्बन्ध। ध्यान का सम्बन्ध है एक सम्यक् आचरण से, एक व्यक्ति ज्ञानी न हो तो भी ध्याता हो सकता है यदि उसने परिग्रह का त्याग किया है तो। इसलिए कहा है कि दिगम्बर मुनियों के पास विचार मात्र ही नहीं सम्यक् आचरण पालन भी मिलता हैं। वे मात्र वाणी से नहीं करते। अर्थात् समीचीनी आचरण करते हैं।

दृष्टान्त:– पूर्व भव में एक सेठ पुत्र था, उसकी शादी एक सेठ की कन्या रत्न से निश्चित हो गई थी। उसके पश्चात् कुछ कारण होने से एक वर्ष की शर्त पर व्यापार करने के लिए देशान्तर चला गया। नियत समय पर न आने के कारण शर्त के अनुसार उस कन्या रत्न की शादी दूसरे सेठ पुत्र के साथ हो गई।

उसके कुछ दिनों बाद जब वह वापिस आया, फिर क्या देखता है कि उसकी शादी दूसरे के साथ हो गई थी। इसलिए उसने क्रोध के आवेश में आकर उस दम्पत्ति को जिनेन्द्र भगवान की पूजा करते समय म्यान से तलवार निकाल कर दोनों का कत्ल कर दिया। वह दोनों दम्पत्ति शुभ भावों से मरकर विद्याधर हुए। वह क्रूर परिणामों से मृत्यु को प्राप्त कर एक राज पुत्र हुआ। वह अज्ञानी होने के कारण घर से निकाल दिया गया। एक वन में जाकर उसने मुनिराज को देखा। वहाँ जाकर विनय पूर्वक नमस्कार कर बैठ गया। उसके बाद प्रार्थना करने लगा, **हे गुरुवर्य मुझे ज्ञान दो**। मुनिराज अवधि ज्ञानी थे, उन्होंने ज्ञान के द्वारा जाना कि यह निकट भव्य है। तब मुनिराज बोले, मै करु वैसा करो। उसने गुरु जी की बात स्वीकार कर ली। गुरुजी ने केशलुंचन किया, उसी प्रकार उसने भी किया। उसी वक्त उसे मुनि दीक्षा दे दी। मुनिराज ने दूसरे दिन आहार की चर्या की, तब उसने भी उसी प्रकार मुद्रा धारण कर चर्या की। इसके पश्चात् महाराज श्री ने पूर्व कर्म का कारण बतला दिया। उसके बाद नवीन शिष्य को "तृषमाय मित्रम्" यह पाठ याद करने को दिया, लेकिन ज्ञानावरणी कर्म का तीव्र उदय के कारण इसे भी याद नहीं कर सका। गुरुजी ने कहा कि तुम संघ से चले जावो। जब सघ से निकल कर जगल की तरफ जा रहे थे तब रास्ते मे एक बुढ़िया अपने दरवाजे पर उड़द की दाल को धो रही थी। उसे देखकर उन्होंने बुढिया से पूछा कि माँ क्या कर रही हो। बुढिया ने उत्तर दिया कि "**तुष माष भिन्नम्**" अर्थात् छिलका व उर्द को अलग–अलग कर रही हूं। फौरन ही याद आ गया कि यह ही तो पाठ गुरुजी ने दिया था। आप जंगल में बैठकर "**तुष माष भिन्नम्**" इसका ध्यान कर रहे थे कि एक विद्याधर का विमान ऊपर होकर जा रहा था कि फौरन ही रूक गया। उन दोनों विद्याधर व विद्याधरिणी ने नीचे उतर कर देखा तो मुनिराज विराजमान है। उन दोनों ने बडी भक्ति से नमस्कार किया और यथा स्थान बैठ गये। इसके पश्चात् पति–पत्नी ने कहा कि महाराज कुछ उपदेश दीजिये। मुनिराज बोले कि मेरे तीव्र कर्म का उदय होने से मै कुछ भी नहीं जानता। उन्होंने पूर्व भव का कारण बताया, सुनते ही दोनों को पूर्वभव का जाति स्मरण हो गया। जिनको पूजन करते में मार दिया था और कहा कि सामने जोडा आ जावे तो आप उसे क्या प्रायश्चित देंगे। मुनिराज बोले मैं उनके चरणों में पड़कर क्षमा माँग लूगा। विद्याधर व विद्याधरिणी ने कहा कि दोनों हम ही है। उन्होंने फौरन क्षमा माँगने को कहा। हृदय में निर्मलता होने के कारण "**तुष माष भिन्नम**" जिस प्रकार छिलका व उर्द अलग–अलग है उसी प्रकार आत्मा व शरीर अलग है ध्यान दिया तो अन्त मुहूर्त में ही केवल ज्ञान हो गया। इससे ज्ञात होता है कि ज्ञान अधिक न हो लेकिन सम्यक् दर्शन पूर्वक सम्यक् चारित्र हो तो ध्यान से शीघ्र सिद्धि हो जाती है।

ऐसे मुनिराज भीम केवली के चरणों में शत्–शत् वन्दन।

मल को हटाते हैं ये विमल बनाते हैं ये!

❑ ब्र प्रभा पाटनी

दुखों से बचाते हैं ये आगम को सिखाते हैं ये

ग्राम कोसमां जन्म लिया है नगर हुआ है धन्य,
मात कटोरी के नन्दन को शत्-शत् है वन्दन,
हमें ऐसा फूल मिला है सुनो-सुनो.....
सुगन्धि फैलाते हैं ये भोगों से बचाते हैं ये॥1॥

☆ ☆ ☆

पंच महाव्रत गुप्ति समिति पालन करते ये,
शीत उष्ण की बाधाओं को सहज सहते हैं,
हमें ऐसा वृक्ष मिला है सुनो-सुनो.....
जिनधर्म फलाता है वो दुखो से बचाते हैं ये॥2॥

☆ ☆ ☆

अनेकान्त और स्यादवाद का पाठ पढ़ाते हैं ये,
शिक्षा दीक्षा दे शिष्यों को अनुग्रह करते ये,
हमें ऐसा धीर मिला है सुनो-सुनो......
सन्ताप हटाते है ये कषायों से बचाते हैं ये॥3॥

☆ ☆ ☆

वत्सलमूर्ति करुणासागर कहलाते हैं ये.....
निमित्तज्ञानी संघशिरोमणि शोभा पाते हैं ये,
तुम्हें ऐसे गुरु मिले हैं सुनो-सुनो.....
जिनमार्ग दिखाते हैं, संसार छुटाते हैं ये॥4॥

☆ ☆ ☆

प्रशान्तमूर्ति भरतसागर एक निराले हैं
स्याद्वादमति शिष्या जिनकी मार्ग दिखाये हैं ये
तुम्हें ऐसे गुरु मिले हैं सुनो-सुनो. .
सयम को जगाते है ये-भोगों से बचाते हैं ये॥5॥

☆ ☆ ☆

जन-जन कल्याण के कर्ता गुरुवर ये मेरे,
धन्य होंगे शिष्य सभी हम पाकर गुरु चरण तेरे,
हमें ऐसे विमल मिले हैं सुनो-सुनो,
मल को हटाते हैं ये विमल बनाते हैं॥6॥

दिगम्बरत्व का महत्व

❑ डॉ ज्योतिप्रसाद जैन

मोक्ष प्राप्ति के लिए साधक की चरम अवस्था मे दिगम्बरत्व अनिवार्य है, किन्तु वह अन्तरंग एव बाह्य, दोनों ही प्रकार का युगपात् होना चाहिए तभी उसकी सार्थकता है। यह मार्ग दुस्साध्य है। यही कारण है कि लगभग एक सवा करोड जैनों की सख्या मे 250 सौ करीब ही दिगम्बर मुनि हैं। वे सभी दिगम्बरत्व के साधक है और 28 मूलगुणो को निरतिचार से पालन करते है तथापि इसमे सन्देह नहीं है कि दिगम्बर मुनि अपनी अत्यन्त कठोर चर्या, व्रत नियम, संयम तथा शीत–उष्ण–दश–मशक–नागन्य– लज्जा आदि बाईस परीषहो को जीतने एव नाना प्रकार के उपसर्गों को सहन करने मे सक्षम होता है। उसका जीवन एक खुली पुस्तक होता है। ज्ञान की उसमे कमी या अल्पाधिक्य हो सकता है। सस्कारों या परिस्थितिजन्य दोष भी लक्ष्य किये जा सकते है, अथवा दिगम्बर मुनि के आदर्श की कसौटी पर भी वह भले ही पूरा पक्का न उतर पाये तथापि परम्पराओं के साधुओ की अपेक्षा अपने नियम–सयम तप, एव कष्ट सहिष्णुता मे वह श्रेष्ठतर ही ठहरता है। फिर जो मुनि आदर्श को अपने जीवन मे चरितार्थ करते है उन मुनिराजो की बात ही क्या है, **वे सच्चे साधु या सच्चे गुरु ही आचार्य–उपाध्याय–साधु के रूप में पंच–परेष्ठी में परिगणित हैं, वे मोक्षमार्ग के पूजनीय एवं अनुकरणीय मार्गदर्शक होते हैं। वे तरणतारण होते हैं।** उन्हीं के लिए कहा गया है–

धन्यास्ते मानवा मन्ये ये लोके विषयाकुले।
विचरन्ति गतग्रन्थाश्चतुरंगे निराकुला:।।

इस दिगम्बर मार्ग के प्रवर्तक **प्रथम तीर्थंकर आदिदेव ऋषभ** थे। जिनदीक्षा लेने के उपरान्त उन्होने दिगम्बर मुनि के रूप में तपश्चरण करके केवलज्ञान एव तीर्थंकर पद प्राप्त किया था। उनके भरत बाहुबली आदि अनेक सुपुत्रों और अनगिनत अनुयायियो ने इसी दिगम्बर मार्ग का अवलम्बन लेकर आत्मकल्याण किया है। भगवान् ऋषभ के समय से लेकर अद्य पर्यन्त यह दिगम्बर मुनि परम्परा अविच्छिन्न चली आयी है। बीच–बीच के मार्ग मे काल–दोष से विकार भी उत्पन्न हुए, चारित्रिक शैथिल्य भी आया किन्तु सशोधन–परिमार्जन भी होते रहे है।

जैन परम्परा का स्वय वह श्वेताम्बर सम्प्रदाय भी, जो जैन साधु के लिए दिगम्बरत्व को अपरिहार्य नही मानता और साधुओं को सीमित–सख्यक, बिनसिले श्वेत वस्त्र धारण करने की अनुमति देता है इस तथ्य को मान्य करता है कि **प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव तथा अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर अपने जीवन में अचेलक तथा दिगम्बर ही रहे,** अन्य अनेक पुरातन जैन मुनि दिगम्बर रहे तथा यह कि जिनमार्ग मे जिनकल्पी साधुओं का श्रेष्ठ एव श्लाघनीय रूप अचेलक है। कला के क्षेत्र मे भी 8 वीं 9वी शती ई से पूर्व की प्राय सभी उपलब्ध तीर्थंकर या जिनप्रतिमाएँ दिगम्बर ही है। और वे उभयसम्प्रदायो के अनुयायियो द्वारा समान रूप से पूज्यनीय रहीं, आज भी है। कालान्तर मे साम्प्रदायिक भेद के लिए श्वेताम्बर साधु जिनमूर्तियो मे भी लगोट का चिह्न बनाने लगे एव मुकुट, हार, कुडल, चोली–आगी, कृत्रिम नेत्र आदि का प्रचलन तो इधर दो–अढाई सो वर्ष के भीतर ही हुआ है।

जैन–परम्परा मे ही नहीं, अन्य धार्मिक परम्पराओं मे भी श्रेष्ठतम साधकों के लिए दिगम्बरत्व की प्रतिष्ठा की गयी प्राप्त होती है। प्रागैतिहासिक एव प्राग्वैदिक सिन्धु–घाटी सभ्यता के मोहन–जोदडो से प्राप्त अवशेषों मे कायोत्सर्ग दिगम्बर योगिमूर्ति का धड मिला है। स्वय **ऋग्वेद** मे वातरशना (दिगम्बर) मुनियों का उल्लेख हुआ

है। **कृष्णयुर्वेदीय तैत्तिरीय आरण्यक** में उक्त वातरशना मुनियों को श्रमणधर्मा एवं ऊध्वरेतस (ब्रह्मचर्य से युक्त) बताया है। श्रीमद्भागवत में भी वातरसता मुनियों के उल्लेख हैं तथा वहाँ अन्य अनेक ब्राह्मणीय पुराणों में नाभेय ऋषभ को विष्णु का एक प्रारम्भिक अवतार सूचित करते हुए उन्हें ही दिगम्बर चित्रित किया गया है। ऐसे उल्लेखों पर **स्व.डॉ. मंगलदेव शास्त्री** का अभिमत है कि **वातरशना–श्रमण** एक प्राग्वेदिक मुनि परम्परा थी और वैदिक धारा पर उसका प्रभाव स्पष्ट है।

कई उपनिषदों, पुराणों, स्मृतियों, रामायण, महाभारत आदि अनेक ब्राह्मणीय धम्रग्रन्थों, वृहत्संहिता भर्तृहरिशतक तथा क्लासिकल सस्कृत साहित्य मे भी दिगम्बर जैन मुनियों के उल्लेख एवं दिगम्बरत्व की प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। ब्राह्मण परम्परा में 6 प्रकार के संन्यासियो का विधान है जिनमे **तुरायातीत श्रेणी के संन्यासी दिगम्बर ही रहते थे।** जड़–भरत, शुकदेव मुनि आदि कई दृष्टांत भी उपलब्ध हैं। परमहंस श्रेणी के साधु भी प्राय दिगम्बर रहते थे। मध्यकालीन साधु–अखाडों मे भी एक अखाडा दिगम्बरी नाम से प्रसिद्ध है। पिछली शती के वाराणसी निवासी महात्मा तेलग स्वामी नाम सिद्ध योगी, जो रामकृष्ण परमहस तथा स्वामी दायानन्द सरस्वती जैसे प्रबुद्ध सतो एव सुधारको द्वारा भी पूजित हुए, सर्वथा दिगम्बर रहते थे। बौद्ध भिक्षुओ के लिए नग्नता का विधान नही है किन्तु स्वय गौतमबुद्ध ने अपने साधनाकाल में कुछ समय तक दिगम्बर मुनि के रूप मे तपस्या की थी। यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्मों मे सहज नगनत्व को निर्दोषता का सूचक एव श्लाघनीय माना। जलालुद्दीन रुमी, अलमन्सूर सरमद जैसे सूफी सन्तो ने दिगम्बरत्व की सराहना की। सरमद तो सदा नंगे रहते ही थे। उनकी दृष्टि मे तो **तने उरियानी (दिगम्बरत्व) से बेहतर नहीं कोई लिबास, यह वह लिबास है जिसका न उल्टा है न सीधा।** सरमद का कौल था कि **पोशानीद लबास हरकारा ऐबदीद, बे ऐबारा लबास अयानीदाद** पोशाक तो मनुष्य के ऐबो को छिपाने के लिए है, जो बेऐब निष्पाप है, उनका परिधान तो नग्नत्व ही होता है। नन्द–मौर्य कालीन यूनानियो ने भारत के दिगम्बर मुनियों (जिम्नोसोफिस्ट) के वर्णन किये हैं, युवान–च्वाग आदि चीनी यात्रियो ने भी भारत के विभिन्न स्थानो मे विद्यमान दिगम्बर (लि–हि) साधुओं या निग्रन्थों का उल्लेख किया है। सुलेमान आदि अरब सौदागारो और मध्यकालीन यूरोपीय पर्यटकों मे से कई ने उनका सकेत किया है। **डॉ. जिम्मर** जैसे मनीषियो का मत है कि प्राचीन काल मे जैन मुनि सर्वथा दिगम्बर ही रहते थे।

वास्तव में दिगम्बरत्व तो स्वाभाविकता और निर्दोषिता का सूचक है। महाकवि मिल्टन ने अपने काव्य ''पेरेडाइज लास्ट'' मे कहा है कि **आदम और हव्वा जब तक सरलतम एवं सर्वथा सहज निष्पाप थे, स्वर्ग के नन्दकानन में सुखपूर्वक विचरते थे,** किन्तु जैसे ही उनके मन विकारी हुए उन्हे उस दिव्यलोक से निष्कासित कर दिया गया। विकारो को छिपाने के लिए ही उनमे लज्जा का उदय हुआ और परिधान (कपडो) की उन्हें आवश्यकता पडी। **महात्मा गांधी** ने एक बार कहा था–**''स्वयं मुझे नग्नावस्था प्रिय है, यदि निर्जन वन में रहता होऊँ तो मैं नग्न अवस्था में रहूं।''** काका कालेलकर ने क्या ठीक ही कहा है ''पुष्प नग्न रहते है। प्रकृति के साथ जिन्होने एकता नही खोयी है ऐसे बालक भी नग्न घूमते हैं। उनको इसकी शरम नहीं आती है और उनकी निर्व्याजता के कारण हमे भी लज्जा जैसा कुछ प्रतीत नही होता। लज्जा की बात जाने दे, इसमें किसी प्रकार का अश्लील वीभत्स, जुगुप्सित, अरोचक हमे लगा है ऐसा किसी भी मनुष्य का अनुभव नहीं। कारण यही है कि नग्नता प्राकृतिक स्थिति के साथ स्वभाव शुदा है। मनुष्य ने विकृत ध्यान करके अपने विकारो को इतना अधिक बढाया है और उन्हे उल्टे रास्तों की ओर प्रवृत्त किया है कि स्वभाव सुन्दर नग्नता सहन नहीं होती। **दोष नग्नता का नहीं, अपने कृत्रिम जीवन का है।**

वस्तुत· निर्विकार दिगम्बरत्व सहज वीतराग छवि का दर्शन करने से तो स्वय दर्शक के मनोविकार शान्त हो जाते हैं– अब चाहे वह छवि किसी सच्चे साधु की हो अथवा जिन–प्रतिमा की हो। **आचार्य सोमदेव** कहते हैं कि **समस्त प्राणियों के कल्याण में लीन ज्ञान–ध्यान तप:पूत मुनिजन आदि अमंगल हों तो लोक में फिर क्या ऐसा है जो अमंगल नहीं होगा।** ❑❑❑



निर्ग्रन्थ मुनीश्वर तुम्हें नमन्

सिंघई प्रभात जैन, जबलपुर
प्रचार सम्पादक

हे श्रमण संस्कृति के साधक
हे मोक्ष मार्ग के निर्देशक,
हे रत्नत्रय पद के धारक
निर्ग्रन्थ मुनीश्वर तुम्हे नमन।

जब जग विषयों में रच-पच है
हर तरफ भौतिकी सजधज है,
सब कुछ नश्वर है यही सोच
धारा तुमने यह वेष नगन।
निर्ग्रन्थ मुनीश्वर तुम्हें नमन॥

गाँव-गाँव और शहर-शहर
गली-गली और नगर-नगर
जैन धर्म के आदेशों का
डंका पीटा किया भ्रमण।
निर्ग्रन्थ मुनीश्वर तुम्हें नमन॥

हे जन-जन के कल्याण हेतु
हे धर्म मार्ग के अटल सेतु,
इस युग के महानतम साधक
अतिशय ऋद्धियों के संगम।
निर्ग्रन्थ मुनीश्वर तुम्हें नमन॥

हे! आचार्यों में वरिष्ठतम
हरते अंतर का मिथ्यातम,
नर-नारी बाल-वृद्ध सबके ही
करते चरणों में थत् वंदन।
निर्ग्रन्थ मुनीश्वर तुम्हें नमन॥

श्रमण परम्परा के परम आराध्यदेव: अर्हन्त

❑ आर्यिका स्याद्वादमतीजी

जैन दर्शनानुसार जीव अपने कर्मों का क्षय स्व–परिणामों की विशुद्धि के बल से करके परमात्मपद को प्राप्त करता है। उस परमात्मपद की दो अवस्थाएँ हैं। – (1) शरीर सहित अर्हन्त अवस्था और (2) शरीर रहित सिद्धावस्था। प्रथमावस्था भी दो प्रकार की है – तीर्थङ्कर व सामान्य। विशेष पुण्य सहित अर्हन्त जिनके पञ्च–महाकल्याणक महोत्सव भव्यात्माओं के द्वारा मनाये जाते हैं तीर्थंकर कहलाते हैं और शेष सर्वमान्य अर्हन्त कहलाते हैं।

अर्हन्त श्रमण परम्परा के परम आराध्य देव हैं। अर्हन्त का प्राकृत रूप "अरहंत" है। इसका संस्कृत रूप है अर्हत्।" अर्ह पूजायाम" अर्थात् पूजार्थक अर्ह धातु से शतृङ् प्रत्यय होकर अर्हत् शब्द निष्पन्न होता है। प्रथमा एक वचन **"उगिदचां सर्वनामस्थाने धातो:"** पाणिनी सूत्र से नुम् का आगम होकर "अर्हन्" पद बनता है। प्राकृत भाषा में "न्त" प्रत्यय होकर अर्हन्त रूप बनता है। साथ ही प्राकृत व्याकरण के सूत्रानुसार र्ह के मध्य इकार का आगम होकर "अरिहन्त" तथा प्राकृत की परम्परा के अनुसार अकार का आगम होकर अरहंत रूप बनता है। **आचार्य श्री कुन्दकुन्ददेव** ने प्राकृत भाषा में इसका एक "अरुह" प्रयोग भी किया है– **"अरुहा सिद्धायरिया"**। संभवत: इस अरुहा शब्द पर तमिल भाषा का प्रभाव है।

अरहत शब्द के विभिन्न भाषाओं में अनेक रूप इस प्रकार हैं–

संस्कृत	–	अर्हत्
प्राकृत	–	अर्हत्, अरहंत, अरिहंत
पाली	–	अरहंत,
जैनशौरसेनी	–	अरुह
मागधी	–	अलहंत, अलिहंत
अपभ्रंश	–	अलहतु, अलिहंतु
तमिल	–	अरुह
कन्नड़	–	अरुह, अरुहंत

अर्हन्त

अतिशयपूजार्हत्वाद्वार्हन्त: ध. 1/1, 1, /44/6 **ज्ञ**

अर्थात् अतिशय पूजा के योग्य होने से अर्हन्त संज्ञा प्राप्त होती है।

अरिहंति णमोक्कारं अरिहा पूजा सुरुत्तमा लोए॥ 505, मू.आ.ज्ञ.
अरिहंति वंदणणमंसाणि अरिहंति पूयसक्कारं।
अरिहंति सिद्धिगमणं अरहंता तेण उच्चंति॥ 562, मू.आ.ज्ञ.

अर्थात् जो नमस्कार करने के, पूजा के योग्य हैं और देवों में उत्तम हैं, वे अर्हन्त हैं।

वन्दना और नमस्कार के योग्य हैं, पूजा और सत्कार के योग्य हैं, मोक्ष जाने के योग्य हैं, इस कारण से अर्हन्त कहे जाते हैं।

"पञ्चमहाकल्याणरुपां पूजामर्हति योग्यो भवति तेन कारणेन अर्हन् भण्यते" – पञ्च महाकल्याण रूप पूजा के योग्य होता है, इस कारण से अर्हन् कहलाता है। (द्रव्यसंग्रह टीका – 50/211/1)

अरिहंत

अरिहननादरिहन्ता। रजोहननाद्वा अरिहंता। रहस्याभावाद्वा अरिहन्ता (धवला 1.1.1/42)

"**अरि**" अर्थात् शत्रुओं का नाश करने से अरिहत यह संज्ञा प्राप्त होती है। समस्त दु:खों की प्राप्ति का निमित्त कारण होने से मोह को अरि कहते हैं।....अथवा रज अर्थात् आवरण कर्मों का नाश करने से अरिहन्त यह संज्ञा प्राप्त होती है। ज्ञानावरण और दर्शनावरण रज की भाँति वस्तु विषयक बोध और अनुभव के प्रतिबन्धक होने से रज कहलाते हैं।....अथवा रहस्य के अभाव से भी अरिहंत संज्ञा प्राप्त होती है। रहस्य अन्तराय कर्म को कहते हैं। अन्तराय कर्म का नाश ज्ञानावरण, दर्शनावरण और मोहनीय कर्मों के नाश का अविनाभावी है। अन्तराय कर्म का नाश होने पर शेष चार अघातिया कर्म भी भ्रष्ट बीज के समान नि:शक्त हो जाते हैं।

अरहंत

जरवाहिजम्मरणं चउगइगमणं च पुण्णपावं च।
हंतूण दोसकम्मे हुउ णाणमयं च अरहंतो।। (बोधपाहुड़ 30)

जरा और व्याधि, जन्म-मरण, चार गतियों के गमन, पुण्य और पाप इन दोषों के उपजाने वाले कर्म है। इनका नाश कर जो केवलज्ञान मय हो गये है वे अरहंत है।

रजहंता अरिहंति य अरहंता तेण उच्चदे। (मू.आ/505)
जिदकोहमाणमाया जिदलोहा तेण ते जिणा होंति।
हंता अरिं च जम्मं अरहंत तेण वुच्चंति।। 561।।

अरि अर्थात् मोह कर्म, रज अर्थात् ज्ञानावरण व दर्शनावरण कर्म और अन्तराय कर्म इन चार के हनन करनेवाले हैं अत: अरि का प्रथमाक्षर "अ", "रज" का प्रथमाक्षर "र" लेकर, उसके आगे हनन का वाचक "हन्त" शब्द जोड़ देने पर अरहन्त बनता है। वे अरहन्त क्रोध, मान, माया और लोभ इन कषायों को जीत लेने के कारण "**जिन**" हैं और कर्म-शत्रुओं व संसार के नाशक होने के कारण 'अरहन्त' कहलाते हैं।

अरुह – (जैन शौरसेनी)

"**न रोहन्ति इति अरुह**" अर्थात् कर्मरूप बीज के दग्ध हो जाने से जो पुन: संसार में उत्पन्न नहीं होते हैं वे "**अरुह**" हैं।

षट्खण्डागम की टीका से ज्ञात होता है कि **आचार्य वीरसेन स्वामी** के समय में इस महामंत्र के अरहत, अर्हन्त, अरिहन्त, अरुहन्त आदि पाठान्तर थे। जैसा कि धवला टीका 8/3, 41/89/2 से भी ज्ञात होता है–

"खविदघादिकम्मा केवलणाणेण दिट्ठसव्वट्ठा अरहंता णाम। अथवा, णिट्ठविदट्ठकम्माणं घाइदघादिकम्माणं च अरहंतेत्ति सण्णा, अरिहणणं पदिदोण्हं भेदाभावादो" अर्थात् जिन्होंने

घातिया कर्मों को नष्ट कर केवलज्ञान के द्वारा सम्पूर्ण पदार्थों को देख लिया है वे अरहन्त हैं। अथवा आठों कर्मों को दूर करने वाले और घातिया कर्मों को नष्ट कर देने वालों का नाम अरहंत है। क्योंकि कर्मशत्रु के विनाश के प्रति दोनों में कोई भेद नहीं है।

जिस प्रकार मोतीचूर का लड्डू किधर से भी, कैसे भी खाइये मीठा व आनन्ददायी होता है उसी प्रकार अर्हन्त भगवान का नाम कैसे भी जपो – चाहे अरिहन्त कहिये, अरहन्त कहिये, अरुहन्त या अरुह कहिये वह कर्मक्षय का ही कारण है, शब्दभेद होने पर भी यहाँ अर्थ भेद नहीं है, गुणों की अपेक्षा समानता है।

इस प्रकार जैन वाङ्मय में अरहन्त शब्द प्राचीन इतिहास **"अनादिनिधनता"** में तो समाहित है ही परन्तु वैदिक, बौद्ध एवं संस्कृत वाङ्मय में भी इस शब्द का प्रयोग अनेक स्थानों पर हुआ है।

वैदिक वाङ्मय से अर्हत् शब्द

विनोवा भावे ने ऋग्वेद के मंत्र का उदाहरण देते हुए जैनधर्म की व अर्हत् शब्द की प्राचीनता सिद्ध की है। मन्त्र है–

"अर्हन्त विभर्षिसायकानि, धन्वार्हन्निष्कं यजत विश्वरूपम्।
अर्हन्निदं दयसे विश्वमम्बं, न वा ओ जीओ रुद्र त्वदन्यदस्ति।"

अर्थात् हे अर्हत्! तुम इस तुच्छ दुनिया पर दया करते हो। (ऋग्वेद 2.33 10)

अर्हन् देवान् यक्षि मानुषत् पूर्वो अध (ऋग्वेद 2/5/22/4/1)
अर्हन्तो ये सुदानवो नरो असामि शव सः (ऋ. 4/3/9/52/5)
अर्हन्ता चित्पुरोदये शेष देवावर्तते (ऋ. 3/83/5)

इसके अलावा वराहमिहिरसंहिता, योगवशिष्ट, वायुपुराण तथा ब्रह्मसूत्र शंकरभाष्य में भी "अर्हत्" शब्द का उल्लेख मिलता है। संस्कृत साहित्य के महाकवि कालिदास ने अपने काव्य व नाटको में अनेक स्थानों पर अर्हत् शब्द का प्रयोग किया है। रघुवंश में रघु राजा गुरुदक्षिणाभिलाषी कौत्सऋषि को संबोधित करते हुए कहते है– **हे अर्हत्! आप दो–तीन दिन ठहरने का कष्ट करें तब तक मैं आपके लिए गुरुदक्षिणा का प्रबन्ध करता हूँ।**

एक अन्य स्थान पर कालिदास अर्हत् को "नय चक्षुषे" विशेषण देकर संभवतः उनके नय प्रमाण के ज्ञातृत्व की ओर संकेत करते हैं–

अर्हणामेर्हते चक्रुर्मुनयो नयचक्षुषे (रघु. 1/55)

शाश्वतकोष तथा शारदीय नाम–माला में "अर्हत्" शब्द "जिन" का पर्यायवाची कहा गया है–स्तार्हन् जिनपूज्ययो. (शाश्वतकोष, 6/41)।

आचार्य हेमचन्द्र अर्हत् को पदार्थ का यथार्थ वर्णन करनेवाला परमेश्वर कहते हैं–

यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हत् परमेश्वरः (हेमचन्द्र, योगशास्त्र 2–4)।

बौद्ध वाङ्मय में अरहन्त शब्द महात्मा बुद्ध के लिए प्रयुक्त है। अरहंत के जो गुण पाली साहित्य में कहे गये हैं, वे बहुशः जैन अरहन्त के गुणों से समानता रखते हैं।

पाली भाषा के बौद्ध आगम त्रिपिटक धम्मपद में 'अरहंत बग्गो' नामक एक प्रकरण है। इसमें 10 गाथाओं में अरहंत का वर्णन किया गया है।

धम्मपद के अनुसार अरहंत वह हैं जिन्होंने अपनी जीवन–यात्रा समाप्त कर ली है, जो

शोकरहित हैं, संसार से मुक्त हैं तथा जिन्होंने सब प्राकार के परिग्रह को छोड़ दिया है और जो कष्ट रहित हैं (धम्मपद अरहन्त बग्गी 90)।

ऐसा अरहन्त जहाँ भी विहार करता है वह भूमि रमणीय और पवित्र है–

''यत्थारहंतो विहरन्ति तं भूमि रामणेय्यक'' (धम्मपद अ.ब. 92)

महात्मा बुद्ध ने कहा था– ''भिक्षुओं, प्राचीनकाल में भी जो अरहंत तथा बुद्ध हुए थे उनके भी ऐसे ही दो मुख्य अनुयायी थे, जैसे मेरे अनुयायी सारिपुत्र और मोग्गलायन हैं। (संयुक्तनिकाय 5.164)

जैनागम में अरहंत किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं है, वह तो आध्यात्मिक गुणों के विकास से प्राप्त होने वाला एक मङ्गलमय परमेष्ठी पद है–

जिसने राग–द्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया।।
बुद्ध, वीर, जिन हरि–हर ब्रम्हा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो।।(मेरी भावना)

तत्त्वार्थसूत्र के मंगलाचरण का अर्थ है– मोक्षमार्ग के नेता अर्थात् हितोपदेशी, कर्मरूप पर्वतों को चूर करने वाले अर्थात् वीतरागी, विश्व तत्वों के ज्ञाता अर्थात् सर्वज्ञ को अरहन्त कहते है।

अर्हन्तों के अतिशय

घणघाइकम्मरहिया केवलणाणाइपरमगुणसहिया।
चोत्तिसअदिसअजुत्ता अरिहंता एरिसा होंति।।(नि., 69)

जो निबिड आत्मगुणो के घातक ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय इन चार घातिया कर्मों से रहित है, केवल असहाय अथवा अनन्त ज्ञान आदि सर्वोत्कृष्ट गुणों से सहित हैं और तीर्थंकर प्रकृति नाम कर्म के निमित्त से जन्म के दस अतिशय, घाति कर्म के क्षय से प्रगट हुए केवलज्ञान के दस अतिशय और उसी समय देवों द्वारा कृत चौदह अतिशय, अर्हन्त परमात्मा चौंतीस अतिशयों से युक्त है।

अरहन्त भगवान् के 46 गुण

चार अनन्त चतुष्टय 34 अतिशय और आठ प्रातिहार्य अर्थात् 4+34+8 =46 अरहन्त परमात्मा के गुण हैं।

अनन्त चतुषय

अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य।

जन्म के 10 अतिशय

(1) स्वेद रहितता, (2) निर्मलशरीरता, (3) दूध के समान धवल रुधिर (4) वज्र ऋषभनाराच सहनन, (5) समचतुरस्र शरीर संस्थान, (6) अनुपम, (7) नृप–चम्पक के समान उत्तम गन्ध को धारण करना, (8) 1008 उत्तम लक्षणों के धारक, (9) अनन्त बल, (10) हित मित एवं मधुर भाषण ये स्वाभाविक अतिशय के 10 भेद हैं जो तीर्थंकर के जन्म ग्रहण करते ही उत्पन्न हो जाते है।

भगवान् के 1008 लक्षण

श्रीवृक्ष, शंख, कमल, स्वस्तिक, अंकुश, तोरण, चमर, सफेद छत्र, सिंहासन, पताका, दो मीन, दो कुम्भ, कच्छप, चक्र, समुद्र, सरोवर, विमान, भवन, हाथी, मनुष्य, स्त्रियाँ, सिंह, बाण, धनुष, मेरु, इन्द्र,

देवगंगा, पुर, गोपुर, चन्द्रमा, सूर्य, उत्तम घोड़ा, तालवृन्त (पंखा), बांसुरी, वीणा, मृदंग, मालाएँ, रेशमी वस्त्र, कुण्डल आदि को लेकर चमकते हुए चित्र विचित्र आभूषण, फल सहित उपवन, पके हुए वृक्षों से सुशोभित खेत, रत्नद्वीप, वज्र, पृथ्वी, लक्ष्मी, सरस्वती, कामधेनु, वृषभ, चूड़ामणि, महानिधियाँ, कल्पलता, सुवर्ण, जम्बूद्वीप, गरुड़, नक्षत्र, तारे, राजमहल, सूर्यादि ग्रह, सिद्धार्थ वृक्ष, आठ प्रतिहार्य, आठ मंगल द्रव्य इन्हें आदि लेकर एक सौ आठ लक्षण ओर मसूरिका आदि नौ सौ व्यञ्जन भगवान के शरीर में होते हैं। (इस प्रकार 108 लक्षण + 900 व्यञ्जन =1008) (म.पु. /15/38–44)

केवलज्ञान के 11 अतिशय

(1) अपने पास से चारों दिशाओं में एक सौ योजन तक सुभिक्षता, (2) आकाश–गमन, (3) हिंसा का अभाव, (4) भोजन नहीं, (5) उपसर्ग का अभाव, (6) चतुर्मुख होना, (7) छाया रहितता, (8) निर्निमेष दृष्टि, (9) विद्याओं की ईशता, (10) सजीव होते हुए भी नख व रोमों का नहीं बढ़ना, (11) अठारह महाभाषा तथा सात सौ क्षुद्रभाषा युक्त दिव्यध्वनि। इस प्रकार घातिया कर्मों के क्षय से उत्पन्न हुए ये 11 अतिशय तीर्थङ्कर प्रभु के केवलज्ञान उत्पन्न होने पर प्रकट होते हैं। (ति. प. 899–906)

देवकृत 13 अतिशय

(1) तीर्थंकरों के माहात्म्य से संख्यात योजनों तक वन, असमय में ही षट्ऋतुओं के पत्र व फल–फूलों से युक्त हो जाता है, (2) कंटक और रेती को दूर करती हुई मन्द–सुगन्ध सुखदायक वायु चलने लगती है, (3) जीव पूर्व वैर को छोड़कर मैत्रीभाव से रहने लगते हैं, (4) भूमि दर्पणतल के सदृश और रत्नमय हो जाती है, (5) सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से मेघकुमार देव सुगन्धित जल की वर्षा करते हैं, (6) देव विक्रिया से फलों के भार से नम्रीभूत शालि और जौ आदि सस्य को रचते हैं, (7) सब जीवों को नित्य आनन्द उत्पन्न होता है (8) वायु कुमार देव विक्रिया से शीतल पवन चलाता है, (9) कूप और तालाब आदि जल से पूर्ण हो जाते हैं, (10) आकाश धुआँ और उल्कापातादि से रहित होकर निर्मल हो जाता है, (11) सम्पूर्ण जीवों को रोगादि की बाधायें नहीं होती हैं, (12) यक्षेन्द्रों के मस्तकों पर स्थित और किरणों से उज्जवल ऐसे चार दिव्य धर्मचक्रों को देखकर सभी जनों को आश्चर्य होता है (13) तीर्थंकरों की चारों दिशाओं व विदिशाओं मे छप्पन सुवर्णकमल, एक पादपीठ और दिव्य एवं विविध प्रकार के पूजन द्रव्य होते हैं (ति. प. 8906–914)

विशेष–ग्रन्थान्तरो में केवलज्ञान के 10 व देवकृत 14 अतिशयों का वर्णन पाया जाता है परन्तु 'तिलोयपण्णति'' में केवलज्ञान के 11 व देवकृत 13 अतिशयों का वर्णन मिलता है। ' दिव्यध्वनि'' अतिशय को ''ति. प.'' के कर्ता आचार्य श्री ने केवलज्ञान के अतिशय में ग्रहण किया है जबकि अन्य आचार्यों ने इसे देवकृत अतिशय में ग्रहण किया है। इतना अवश्य है कि किसी ने भी किसी अभिप्राय से अतिशयों का वर्णन किया हो पर अतिशय 34 से अधिक या कम नहीं होते अतः सिद्धान्त से कहीं बाधा नहीं आती है।

भगवान् के 8 प्रतिहार्य

(1) अशोक वृक्ष, (2) तीन छत्र (3) रत्नखचित सिंहासन, (4) भक्तियुक्त गणों द्वारा वेष्टित रहना, (5) दुन्दुभिनाद, (6) पुष्पवृष्टि, (7) प्रभामण्डल, (8) चौंसठ चमरयुक्तता। (ति. प.4/915–927)

भाषा–प्रभा–वलयविष्टर–पुष्पवृष्टिः
पिण्डिद्रुमस्त्रिदशदुन्दुभि–चामराणि।
छत्रत्रयेण सहितानि लसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय।। (समवसरण स्तोत्र)

(1) दिव्यध्वनि, (2) भामंडल, (3) सिंहासन, (4) पुष्पवृष्टि, (5) अशोक वृक्ष, (6) देव-दुन्दुभि, (7) चौसठ चमर और (8) तीन छत्र।

अष्ट मंगलद्रव्य

भंगार–ताल–कलश–ध्वज सुप्रतीक शवेतातपत्र–वरदर्पण–चामरणि।
प्रत्येक–मष्टशतकानि विभान्ति यस्य, तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय।। 6 ।। (स. अ.)

झारी, पंखा, कलश, ध्वज, स्वस्तिक, श्वेत छत्र, दर्पण और चमर ये मंगल द्रव्य हैं। इनमें से प्रत्येक 108 द्रव्य जिनके शोभायमान होते है उन भुवनत्रयाधिपति जिनराज के लिए नमस्कार होओ।

भगवान अरहन्त में 18 दोषों का अभाव

छुहतण्हभीरुरोसो रागो मोहो चिंता–जरा–रुजा–मिच्चू।
स्वेदं खेदं मदो रइ, विम्हिय णिद्दा जणुव्वेगो।। (नि.सा. 6)

भूख, प्यास, भय, क्रोध, राग, मोह, चिंता, बुढ़ापा, रोग, मृत्यु, पसीना, खेद, मद, रति, विस्मय, निद्रा, जन्म और अरति ये अठारह दोष हैं। अरहन्त भगवान में ये अठारह दोष नहीं होते अतः उन्हें परमात्मा कहते है। कहा भी हैं–

णिस्सेसदोसरहिओ, केवलणाणाइपरमविभवजुदो।
सो परमप्पा उच्चइ, तव्विवरीओ ण परमप्पा।। (नि.सा. 6)

अर्हन्त के भेद

सात प्रकार के अर्हन्त होते है– (1) तीर्थंकर केवली (पांच, तीन व दो कल्याणक युक्त), (2) सतिशय केवली अर्थात् गंधकुटी युक्त केवली, (3) सामान्य केवली, (4) उपसर्ग केवली, (5) समुद्घात केवली, (6) मूक केवली और (7) अन्तकृत केवली।

सामान्य केवली की वाणी खिरती है, किन्तु गणधर नहीं होते। क्योंकि उनकी वाणी के द्वारा द्वादशाङ्ग की रचना नहीं होती और गणधर का मुख्य कार्य द्वादशाङ्ग की रचना करना है। सामान्य केवलियों की सभा मे बीजबुद्धि आदि ऋद्धि–धारी विशेषज्ञानी आचार्य होते है।

अरहत अवस्था में किसी प्रकार का कोई उपसर्ग नहीं रहता। जिनको उपसर्गपूर्वक केवलज्ञान होता है वे उपसर्ग–केवली कहलाते हैं। अन्तकृत् केवली भी उपसर्ग सहित होते हैं। इनका वर्णन अन्तकृद्दशांग में पाया जाता है। अन्तकृत् केवली व मूक–केवली की गंधकुटी नहीं होती।

जिन मुनियों को शेर ने भक्षण कर लिया अथवा जिनके सिर पर अग्नि जला दी गई, केवलज्ञान के प्राप्त होते ही इन उपसर्ग–केवलियों का शरीर पूर्ववत् साङ्गोपाङ्ग बन जाता है।

अरहन्त अवस्था में शरीर कटा–फटा या अङ्गहीन नहीं रहता। अरहंत महान अवस्था है, साक्षात् भगवान हैं अत उनका शरीर आङ्गहीन या विद्रुप हो यह संभव नहीं है। वह शरीर तो परमौदारिक बन जाता है। उसमें सप्त कुधातु नहीं रहतीं। आत्मा की पवित्रता से शरीर भी पवित्र हो जाता है। बारहवें गुणस्थान मे सर्व निगोदिया जीव शरीर से निकल जाते हैं। आत्मा की विशुद्धता का प्रभाव पौद्गलिक शरीर पर पड़ता है और वह अशुचि शरीर भी महान पवित्र बन जाता है। (प र मु.व्य.कृ.पृ 174)

केवली के विहारादि क्रियाओं का कर्तृत्वाकर्तृत्व– अरहंत भगवान के खड़े होना, बैठना, विहार, धर्मोपदेश देना (नियत और अनियत समय पर वाणी खिरना) आदि सभी क्रियाएँ बिना इच्छा अथवा प्रयत्न के होती है अत इन क्रियाओं को स्वाभाविकी कहा गया है, किन्तु कर्मोदय से होती है इसलिए औदयिकी कहा गया है। आ. श्री कुन्दकुन्दस्वामी प्रवचनसागर में लिखते हैं–

ठाणणिसेज्जविहारा धम्मुवदेसो य णियदयो तेसिं।
अरहंताणं काले मायाचारोव्व इत्थीणं॥ 44॥

अर्थात्–उन अरहंत देव के उस अवस्था में स्थान, आसन और विहार तथा धर्मोपदेश ये स्वाभाविकी क्रियाएँ हैं, जैसे स्त्री के मायाचार, तद्‌गत पर्याय–स्वभाव के कारण, बिना प्रयत्न के होता है–

और भी कहा है–

पुण्यफलाअरहंता तेसिं किरिया पुणो वि ओदइया।
मोहादीहिं विरहिया तम्हा सा खाइगत्ति मदा॥ 45 (प्र. सा.)

पुण्य का फल अरहन्त अवस्था है। उनकी क्रिया (स्थान, आसन, विहार, दिव्यध्वनि) शुद्धात्मतत्व से विपरीत होने के कारण औद्योगिकी अर्थात् कर्म–जनित हैं। किन्तु ये क्रियाएँ मोहादि से रहित अर्थात् बिना इच्छा व प्रयत्न के होती हैं इसलिए आगामी कर्मबन्ध का कारण नहीं होतीं, किन्तु इन क्रियाओं के द्वारा कर्म फल देकर क्षय को प्राप्त हो जाता है इसलिए इन क्रियाओं को क्षायिकी भी कहा गया है।

अरहन्त भगवान् के ये क्रियाएँ बिना इच्छा के होती हैं इस अपेक्षा से वे इन क्रियाओं को करते नहीं, किन्तु होती हैं। ये क्रियाएँ अरहंत की पर्यायें हैं इस अपेक्षा से अरहंत भगवान कथञ्चित् इन क्रियाओं के कर्ता भी हैं।

महिमा–

तेजो दिट्ठी णाणं इड्ढी सोक्खं तहेव ईसरियं।
तिहुवणपहाणदयं माहप्पं जस्स सो अरिहो॥ (नि.सा/ता.वृ/6)

तेज (भामण्डल) केवलदर्शन, केवलज्ञान, ऋद्धि (समवसरणादि), अनन्त सौख्य, ऐश्वर्य और त्रिभुवनप्रधान वल्लभपना–ऐसा जिनका माहात्म्य है, वे अर्हन्त हैं। (ध. 1/1, 1, 1)। मोह, अज्ञान व विघ्नसमूह को नष्ट कर दिया है, कामदेव विजेता, त्रिनेत्र द्वारा सकलार्थ व त्रिकाल के ज्ञाता, मोह, राग–द्वेष रूप त्रिपुर दाहक तथा मुनिपति हैं, रत्नत्रयरुपी त्रिशूल द्वारा मोहरुपी अन्धासुर के विजेता आत्मस्वरुपनिष्ठ, तथा दुर्नय का अन्त करने वाले ऐसे अर्हन्त होते हैं।

देवाधिदेव, घातिकर्म विनाशक, अनन्त चतुष्टय प्राप्त, आकाश–तल अन्तरिक्ष में विराजमान, परमौदारिक देहधारी, 34 अतिशय व अष्ट प्रातिहार्य युक्त तथा मनुष्य, तिर्यञ्च व देवों द्वारा सेवित, पञ्चमहाकल्याणक युक्त, केवलज्ञान द्वारा सकल तत्वदर्शक, समस्त लक्षणोंयुक्त उज्जवल शरीरधारी, अद्वितीय तेजवन्त, परमात्मावस्था को प्राप्त ऐसे अर्हन्त अनुपम महिमा के धारक होते हैं।

"अर्हति इन्द्रादिकृतपूजामिति अर्हन्तः" जो इन्द्रादिकृत पूजा के योग्य हैं, वे अर्हन्त कहलाते हैं।

***प्रश्न– अर्हन्त ऐसे होते हैं, जानकर क्या करना चाहिए?**

उत्तर– अर्हन्त का उनके द्रव्य–गुण–पर्यायों से चिन्तन करना चाहिए। कहा भी है–

जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जत्तेहिं।
सो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं॥ (80 प्र. सा.)

अर्थ– जो अरहन्त को द्रव्यपने, गुणपने और पर्यायपने से जानता है, वह अपने आत्मा को जानता है, उसका मोह अवश्य नाश को प्राप्त होता है।

प्रश्न– अरिहन्त के द्रव्य–गुण–पर्याय किस प्रकार जाने जाते हैं?

समाधान–श्री अरिहन्त भगवान के केवलज्ञानादि विशेष गुण हैं, अस्तित्व आदि सामान्य गुण हैं। परमौदारिक–शरीराकार रूप में आत्मप्रदेशों का अवस्थान द्रव्य–व्यञ्जन पर्याय है। अगुरुलघुगुण के द्वारा जो षड्गुण वृद्धि हानि रुप जो प्रति समय परिणमन है व शुद्ध अर्थ पर्याय है। इन गुण व पर्यायों के आधारभूत जो असंख्यात प्रदेश हैं वह द्रव्य है।

प्रश्न– अरिहन्त को उनके द्रव्य–गुण–पर्याय से जानकर क्या करना चाहिए?

उत्तर– उन्हें नमोऽस्तु करना चाहिए। कहा भी है–

अरहंतणमोकारं भावेण य जो करेदि पयदमदी।
सो सव्वदुक्खमोक्खं पावदि अचिरेण कालेण।।

जो प्रयत्नमति होकर भावपूर्वक अरहन्तदेव को नमस्कार करते हैं वे बहुत थोड़े ही काल में सर्व दुःखों से छुटाकारा पा लेते हैं। ऐसा जानकर सर्व कर्मों का क्षय करने के लिए अर्हंत भगवान की भक्ति करते हुए और शुद्ध नय से **''मैं अर्हंत स्वरुप हूँ''** ऐसी भावना करते हुए तब तक उनका आश्रय लेना चाहिए, जब तक कि अपना आत्मा अर्हंत स्वरुप में परिणत न हो जावे। ❑❑❑

ऐलक अवस्था में भी चमत्कार दिखाये

❑ *क्षुल्लिका शीतलमती*

मैं जब आठ वर्ष की थी, तब **आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी महाराज** इन्दौर पधारे थे। उनके साथ ख्यातिप्राप्त प.ब्र.नेमीचन्द्र जी थे। पंडित जी ने इन्दौर के पास धर्मपुरी में आचार्य श्री से क्षुल्लक दीक्षा ली और बड़वानी में ऐलक दीक्षा ले ली। उस समय इन्दौर के रामाशाह जी मंदिर से चांदी की प्रतिमा चोरी चली गई थी। सबने विचार किया कहाँ जाये...? किस से पूछें? अन्त में सोच विचार कर **आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी** से विचार विमर्श का निर्णय लिया गया। समाज के कुछ व्यक्तियों के साथ मै भी अपने पिताजी के साथ बड़वानी पहुंची।

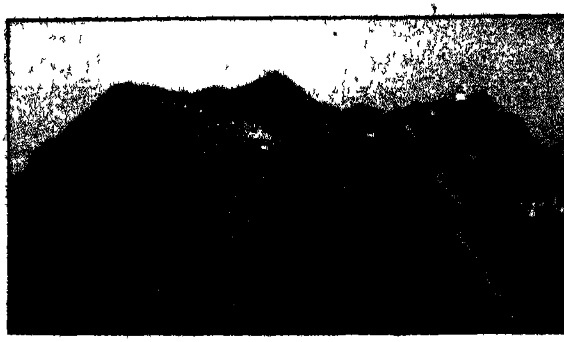
बड़वानी में गुरु के दर्शन कर मन प्रसन्न हुआ। ऐलक जी (वर्तमान मे **आचार्य श्री विमल सागर महाराज**) सेठ धीर जी मोती से बोले– **''प्रतिमा जी चोरी चली गई है, इसलिए आये हो?** हम सभी लोग आश्चर्य में पड गए कि इन्होंने कैसे जाना?

दोपहर में हम सब लोग ऐलक श्री के पास पहुँचे। ऐलक महाराज ने मेरे अंगूठे के नाखून पर काली वस्तु लगवायी और कहा–**''देखो कुछ दिखाई देता है?''**

अंगूठे के नाखून में मंदिर से प्रतिमाजी ले जाते हुए मुझे एक आदमी स्पष्ट दिखाई दिया। महाराज जी ने सभी को दिखाया। सेठ जी ने उस व्यक्ति को पहिचान लिया। इन्दौर आकर सेठ जी उस व्यक्ति के घर पहुंचे। प्रतिमा जी सही स्थिति में आसानी में मिल गई।

पश्चात् बड़वानी पहुंचकर इन्दौर समाज ने **आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी** से इन्दौर में चातुर्मास हेतु प्रार्थना की। इन्दौर में अपूर्व प्रभावना के साथ आचार्य श्री का चातुर्मास हुआ।

ऐलक अवस्था में भी **आचार्यश्री विमल सागर जी महाराज** की साधना प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय थी। **मैं आचार्य श्री के चरण कमलों में त्रिकाल वन्दना करते हुए अपने लिए सम्यकत्व का आर्शीवाद चाहती हूँ। पूज्य आचार्य श्री शतायु हो यही जिनेन्द्र देव से प्रार्थना है।**



श्री सम्मेद शिखर जी का महात्म्य

❑ श्रीमती बाला देवोत लोहारिया

सम्मेदशिखर जी का माहात्म्य

भारत वसुन्धरा पर कई अतिशय क्षेत्र हैं, लेकिन श्री सम्मेद शिखर जी जैसा सिद्धक्षेत्र संसार मे नहीं है क्योंकि यह तीर्थराज अनादिकाल का है। इस सिद्ध क्षेत्र से **चौबीस तीर्थंकरों में से बीस तीर्थंकर मोक्ष पधारे हैं और उनके साथ असंख्यात मुनिराज मोक्ष पधारे हैं**। इसलिए इस क्षेत्र का कण–कण पूजनीय एवं वदनीय है। इस क्षेत्र की भाव सहित वन्दना करने से मनुष्य के जन्म–जन्म के पाप क्षय हो जाते है। आचार्यों ने कहा भी है–

भाव सहित वंदे जो कोई, ताहि नरक पशु गति नाहिं होई।

शलाकापुरुष महापुरुष के जन्म का स्थान और मुक्ति गमन का स्थान कोई महानगरी या महाक्षेत्र पर ही होता है। इसमे भी तीर्थंकर केवली की जन्मभूमि जम्बूद्वीप संबंधी भरतक्षेत्र के अतर्गत अनादि निधन, अयोध्या नगरी ही होती है और मुक्ति क्षेत्र सम्मेदशिखरजी। किन्तु हुण्डावसर्पिणी काल के प्रभाव से ये तीर्थंकर अलग–अलग स्थानों से मुक्ति गये। बाकी कालों में एक ही नगरी से जन्म लेना एवं एक क्षेत्र से मोक्ष जाना यह नियम ही है।

अयोध्या नगरी व सम्मेदशिखर क्षेत्र प्रलय के समय नष्ट नहीं होते हैं यह शाश्वत क्षेत्र है। इन क्षेत्रों के प्रतीक के रूप में सवस्तिक व सुपारी के आकार की चित्रा भूमि पर अंकित रहते हैं। प्रलय के बाद इन्द्र के द्वारा फिर से अयोध्या व सम्मेदशिखर जी की रचना होती है (सकेत देखकर) इसलिए इनको अनादि–निधन कहा गया है। अनादि के अनन्त तीर्थकर सम्मेदशिखर जी से ही मोक्ष गये है।

इस सम्मेदशिखर जी क्षेत्र की अचिन्त्य महिमा है। इस क्षेत्र से अनन्तान्त जीव शाश्वत क्षेत्र (मोक्ष) में जाकर विराजमान हुए हैं। ये क्षेत्र अनन्त जीवों की सिद्धभूमि है। इसलिए इस क्षेत्र को अति उत्तम कहा गया है।

इस श्रेष्ठतम क्षेत्र की यात्रा भव्य जीवों को ही होती है। भव्यों की गिनती मे आने वला जीव कैसे भी पाप करने वाले क्यों न हों किन्तु इस क्षेत्र की श्रद्धा भाव से यात्रा करते ही उन्चास (49) भवों में नियम से मोक्ष जायेंगे– ऐसा केवलज्ञानी एवं मुनियों ने कहा है। विशेष बात यह है कि इस क्षेत्र की 12 योजन

(46 कोस) सीमा में पैदा होने वाले एकेन्द्रिय जीव से लेकर पंचेन्द्रिय जीव, ये सब भव्य गिनती में ही आते हैं। इस क्षेत्र पर अभव्य का जन्म नहीं होता और न ही इस क्षेत्र में आ सकता है। **जिसकी तिर्यंच गति का बन्ध हो गया हो उसको इस क्षेत्र की वन्दना नहीं होती।** यदि वन्दना करने के लिए आने का प्रयत्न भी करे तो **इस क्षेत्र का अधिपति देव क्षेत्र की सीमा में नही आने देता।** **भगवान महावीर** के समवसरण में जब **राजा श्रेणिक ने सम्मेदशिखर जी का महात्म्य** सुना तो उसको भी इस क्षेत्र पर जाने की इच्छा हुई और अपने वैभव के साथ चला भी, परन्तु उसे नरक में आयु का बन्ध पड़ जाने से क्षेत्र की सीमा में भी वह प्रवेश नहीं कर सका और उसे वापस लौटना पड़ा। अभी भी ऐसा ही होता है। बहुत से यात्रियों की वन्दना नहीं हो पाती है और उन्हें वापस लौटना पड़ता है।

इस क्षेत्र की यात्रा सर्व इच्छित फल देने वाली है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थ के फल की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को सम्मेदशिखर जी की यात्रा अवश्य करनी चाहिये। **इस गिरि की यात्रा करने वाले को शुभ्र वस्त्र धारण करना चाहिये। पुत्राभिलाषी मनुष्यों को पीले वस्त्र पहनकर इस क्षेत्र की यात्रा करना चाहिये। जो रोग से पीड़ित हैं उन्हें काले वस्त्र धारण कर यात्रा करना चाहिए, जिससे कि उसका रोग नष्ट हो जाये। सम्मेदशिखर क्षेत्र की यात्रा करने वाला कभी भी शोक को प्राप्त नहीं होता। लक्ष्मी की कामना करने वाले को ताम्रवस्त्र धारण कर यात्रा करना चाहिये।**

सम्पूर्ण सिद्धक्षेत्र पर्वतों में श्रेष्ठ इस सम्मेदगिरि पर बीस श्रेष्ठ शिखर है जहाँ से जिनेश्वर मोक्ष गये हैं। ये तीर्थंकर के सिद्धिस्थान (कूट) कहलाते है। उन जिनेश्वरों से संबंधित कूट (स्थान) का नाम एव वन्दना करने का फल क्रमानुसार इस प्रकार है–

1. सिद्धवर कूट

त्रिलोकपति अजितनाथ चैत्र शुक्ल पंचमी के दिन (उत्तरपुराण के अनुसार चैत्र शुक्ल की प्रतिपदा को) मोह–शत्रु पर विजय प्राप्त कर, सर्वकर्म दहन कर, एक हजार मुनियो के साथ सिद्धवर कूट से मोक्ष गये। इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 30 करोड़ उपवास का फल होता है।

2. दत्तधवल कूट

संभवनाथ जिनेश्वर के कूट का नाम दत्तधवल कूट है। एक हजार मुनियो के साथ **संभवनाथ जिनेन्द्रदेव ने वैशाख शुक्ला षष्ठी के** दिन (उत्तरपुराण के अनुसार शुक्ला षष्ठी के दिन) परम दुर्लभ मुक्ति को प्राप्त किया। प्रभु के मुक्त होने के बाद इस कूट पर से 9 करोड़ 72 लाख 7 हजार 147 मुनियो ने मोक्ष प्राप्त किया। इस कूट की भक्ति भाव से यात्रा करने वाले को बयालीस लाख प्रोषधोपवास का फल प्राप्त होता है।

3. आनन्द कूट

अभिनन्दन जिनेश्वर के मोक्षस्थान का नाम आनन्दकूट है। इस कूट से **अभिनन्दन जिनराज** ने तपरूपी अग्नि से कर्म वन जलाकर एक हजार मुनियों के साथ निर्वाण प्राप्त किया। इस आनन्द कूट पर 72 कोड़ाकोड़ी 70 करोड 36 लाख 42 हजार 700 मुनियों ने मुक्ति पाई है। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक लाख उपवास का फल होता है।

4. अविचल कूट

सुमति तीर्थंकर का अविचल कूट नित्य ही निश्चल मुक्ति–रमा का स्थान होने से अविचल है। इस कूट से एक हजार मुनियों के साथ, शुक्ल ध्यानरूपी अमृत का स्वाद लेकर **पंचम तीर्थंकर सुमतिनाथ** ने मोक्षपद प्राप्त किया है। इस अविचल कूट से 1 अरब 84 करोड़ 14 लाख 781 मुनियों ने उत्तमपद (मोक्ष) को प्राप्त किया है।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 9 करोड़ 32 लाख उपवास का फल प्राप्त होता है। अविचल कूट का ध्यान करने से मनुष्य को अविचल सिद्धि की प्राप्ति होती है।

5. मोहन कूट

भगवान् पद्मप्रभ जिस स्थान से मोक्ष गये उसका नाम मोहनकूट है। **फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी**

के दिन एक हजार मुनियों के साथ पद्मप्रभु ने योग धारण कर मोक्ष प्राप्त किया। इस मोहनकूट पर से 7 कोटि 84 लाख 42 हजार 727 मुनिराज मोक्ष गये हैं।

इस कूट की वंदना का फल एक कोटि प्रोषधोपवास के फल के बराबर कहा गया है।

6. प्रभास कूट

फाल्गुन कृष्ण सप्तमी के दिन शुक्ल ध्यान रूपी अग्नि से सर्व कर्म का क्षय करके एक हजार मुनियों के साथ **श्री सुपार्श्वनाथ** ने मोक्ष प्राप्त किया। इस कूट से 49 कोटाकोटि 84 कोटि 72 लाख 7 हजार 742 मुनि मोक्ष गये हैं। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से 32 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है।

7. ललितघट कूट

ललितघट कूट से एक हजार मुनियों के साथ **भाद्रपद शुक्ल अष्टमी** (उत्तरपुराण के अनुसार फाल्गुन शुक्ल सप्तमी) के दिन **श्री चन्द्रप्रभ** ने निर्वाण प्राप्त किया। **चन्द्रप्रभ जिनेश्वर** के मोक्ष जाने के पश्चात ललितघट कूट से 984 अरब 2 करोड़ 80 लाख 4 हजार 595 मुनि मोक्ष गये।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से 96 लाख उपवास का फल प्राप्त होता है।

8. सुप्रभास कूट

भाद्र शुक्ल त्रयोदशी (उ.पु.के अनुसार भाद्रपद शुक्ल अष्टमी) के दिन मुनियों के साथ **श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्र देव ने** मुक्ति प्राप्त की। अनन्त महिमा से उज्जवल इस कूट से 1 कोड़ा कोड़ी 99 लाख 7 हजार 780 मुनियों ने निर्वाण प्राप्त किया है। इस कूट की भाव सहिता वंदना करने से 1 करोड़ प्रोषध उपवास का फल मिलता है।

9. विद्युतवर कूट

श्रावण शुक्ला पूर्णिमा (उ.पु. के अनुसार अश्विन शुक्ल अष्टमी) के दिन ***त्रैलोक्यपति शीतलनाथ*** ने एक हजार मुनियों के साथ इस कूट से निर्वाण प्राप्त किया। **अविचल नृप शीतल नाथ** के इस कूट पर मुक्त होने के पश्चात यहाँ से 18 कोड़ाकोड़, 42 कोटि 32 लाख 42 हजार 905 मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया है। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल मिलता है।

10. संकुल कूट

श्रेयांसनाथ के नाम से सबंधित कूट को संकुल कूट कहते हैं। **तीर्थंकर श्रेयांस प्रभु ने श्रावण शुक्ल पूर्णिमा** के दिन साधक मुनियों के साथ मोक्ष प्राप्त किया। प्रभु की मुक्ति के बाद इस कूट से 96 कोड़ाकोड़ी 96 कोटि 96 लाख 9 हजार 542 मुनि सिद्ध हुये हैं। इस टोंक की भाव सहिता वंदना करने से एक करोड़ प्रोषध उपवास का फल प्राप्त होता है।

11. वीरसंकुल कूट

विमल प्रभु की कूट को वीरसंकुल कूट कहते हैं। **त्रैलोक्यपति विमल प्रभु** ने वीरसंकुल कूट से एक हजार मुनियो के साथ **आषाढ़ शुक्ल अष्टमी** (उ.पु. के अनुसार आषाढ़ कृष्ण अष्टमी) के दिन मुक्ति प्राप्त की। इस कूट से 70 करोड़, 60 लाख, 740 मुनियों ने कर्मो को क्षयकर मोक्ष प्राप्त किया। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल मिलता है।

12. स्वयंप्रभ कूट

माघ कृष्ण द्वादशी के दिन तपोनिधि ***अनंतनाथ*** ने *कायोत्सर्ग धारण कर* छह हजार मुनि संघ के साथ मोक्ष पद प्राप्त किया। इस कूट से एक कोड़ाकोड़ी सात कोटि सत्तर लाख् सात सौ मुनि कर्मक्षय करके मोक्ष गये हैं। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल मिलता है।

13. सुदत्तवर कूट

ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्थी के दिन तीर्थंकर धर्मनाथ ने कर्म संबंध से रहित होकर एक हजार मुनियों के सथ सुदत्तवर कूट से मोक्ष प्राप्त किया। उसके बाद 19 कोड़ा कोड़ी, 19 कोटि, 9

लाख 9 हजार 795 मुनिराज इस टोंक से मुक्ति को प्राप्त हुए। इस प्रकार यह सुदत्तवर कूट अतिशय पूजनीय है। इस कूट का दूसरा नाम रत्नवर कूट है। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल मिलता है।

14. कुन्दप्रभ कूट

आचार्यों ने **भगवान् शांतिनाथ** के इस कूट को **प्रभास कूट** भी कहा है। **वैशाख शुक्ल प्रतिपदा** के दिन इस कूट पर एक हजार मुनियों के साथ **भगवान् शांतिनाथ** ने मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त किया। इस कूट से 1 कोड़ाकोड़ी, 9 करोड़ 9 लाख 9 हजार 999 मुनि मोक्ष गये। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल मिलता है।

15. ज्ञानधर कूट

भगवान् कुन्थुनाथ ने एक हजार मुनियों के साथ **चैत्र कृष्णा अमावस्या** के दिन इस कूट से ज्ञानावरणादिक कर्मों का नाश कर मोक्षलक्ष्मी का वरण किया। इस कूट से 96 कोड़ा कोड़ी, 96 कोटि, 32 लाख 96 हजार 742 मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल मिलता है।

16. नाटक कूट

भगवान **अरहनाथ** जिस स्थान से मोक्ष गये है उस कूट का नाम नाटक कूट है। **चैत्र कृष्णा अमावस्या** के दिन एक हजार मुनियों के साथ अनन्त सुखी **भगवान अरहनाथ** ने नाटक कूट से मोक्ष प्राप्त किया। उसके बाद 99 कोटि 99 लाख 99 हजार मुनि इस कूट से अविनाशी मोक्ष को प्राप्त हुए। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से 96 करोड़ उपवास का फल होता है।

17. संबल कूट

सबल कूट से **फाल्गुन कृष्ण द्वादशी** के दिन जगत्पती **मल्लिनाथ** ने मुक्ति प्राप्त की थी। यहाँ से 96 करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं। इस टोंक की वन्दना करने से एक करोड प्रोषध–उपवास का फल प्राप्त होता है।

18. निर्जर कूट

जिनेन्द्रदेव श्री मुनिसुव्रत ने वैशाख कृष्ण दशमी को श्रवण नक्षत्र में एक हजार मुनियों के साथ परमपद मोक्ष प्राप्त किया। इसके बाद इस कूट पर से 9 करोड 4 लाख 30 हजार मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया। इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ प्रोषध–उपवास का फल प्राप्त होता है।

19. मित्रधर कूट

इस कूट को **सुप्रभासी कूट** भी नाम दिया गया है। इस कूट से **जगत्पति नमिनाथ प्रभु** सहस्त्र दीक्षित मुनियों के साथ अष्टकर्मों का नाश करके मोक्ष गये हैं। इसके बाद 1 अरब 900 कोड़ा कोड़ि 46 लाख 7 हजार 940 भव्यों ने मोक्ष प्राप्त किया है। इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल मिलता है।

20. सुभद्र कूट

एक कूट पर वर्तमान **तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ** ने मोहादिक शत्रुओं का नाश कर मुक्तावस्था को प्राप्त किया। 82 करेड़, 84 लाख, 4 हजार 742 मुनि इस परम पुनीत कूट से मोक्ष पधारे हैं।

एक बार इस कूट के शुद्ध भाव से दर्शन करने से पशु गति से छुटकारा हो जाता है और 16 करोड़ उपवास का फल एक बार वंदना करने से प्राप्त होता है।

श्री सम्मेदशिखर पर्वत के ये 20 कूट नित्य ही ध्यान करने योग्य हैं। अपने–अपने स्वामी के नाम से युक्त ये कूट ध्यान करने वाले को सर्व इष्ट पदार्थों की प्राप्ति कराने वाला हैं। ❑❑❑



गतांक से आगे ......

धर्म लाभ

साध्वी मणिप्रभा श्री जी.

स्थूल दृष्टि, संसार–दृष्टि, शरीर–दृष्टि, प्रपंच–दृष्टि में हम यही मान लेते हैं कि इसने नुकसान दिया, इसने नुकसान दिया, इसने घाटे में उतारा, उसने घाटे में डाला। ज्ञानी कहते हैं, कोई किसी को घाटा नहीं पहुंचा सकता। **कुण सुख कुण दु:ख देत है, देत करम झकझोर। उलझे–सुलझे आप ही ध्वजा पवन के जोर।** मेरे द्वारा ही अशुभ कर्म बाँधे गये हैं। शुभ–अशुभ कर्म की फिल्म ही मेरी जिन्दगी में आये दिन मुझे दिखायी दे रही है। दोष किसे दूँ? क्यों दूँ? जिसे आत्म–लाभ होगा उसके विचार ऐसे होंगे । जिसे आत्मा का लाभ हो जाएगा, वह अलाभ करने वाले के प्रति भी लाभ के विचार रखेगा। इसका भी मंगल हो, इसका भी कल्याण हो। **भगवान् महावीर** पर छह महीनों तक संगम देव ने कितने उपसर्ग किये? अनुकूल और प्रतिकूल। जब वह जाने लगा, तब उन मार्मिक क्षणों में भी भगवान् महावीर को इस बात का मन में विकल्प नहीं आया कि इसने मुझे कितने कष्ट दिये? विकल्प यह आया, विचार यह आया, **ओ हो मेरे निमित्त को ले कर इस जीव ने कितने राग–द्वेष के परिणाम किये। ओ हो कहाँ भोगेगा यह उन्हें? कैसे भोगेगा? इसने कितने कर्म बाँध लिए?**

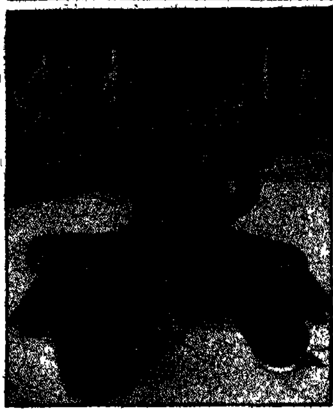
बाँधते हुए अज्ञानी हँसता है। भोगते हुए अज्ञानी रोता है। किसी को पंचेन्द्रिय शरीर मिल जाता है। परिवार भी अच्छा मिल जाता है। पैसे वाले परिवार में भी जन्म ले लेता है । कहीं दिखायी देता है कि शरीर है, पर चलने की शक्ति नहीं है। कहीं दिखायी देता है कि शरीर पूरा है पर बोलने की ताकत नहीं है।। कहीं सुनने की ताकत नहीं है।। कहीं मस्तिष्क में समझने की ताकत नहीं है ।। किसी से पूछो तो उत्तर मिलता है–जन्म से ही ऐसा है। यहाँ तो कुछ भी नहीं किया बेचारे ने। यहाँ कुछ भी नहीं किया । पर सब हुआ क्यों? कर्म बाँधते हुए तो हम बड़े होशियार हैं। कभी मजाक के मूड में, उपहास के उद्वेग में; कभी ज्ञानियों की ,कभी व्रत, कभी त्याग, कभी पचक्खान की। करें नहीं, अलग बात है; किन्तु करने वालों की निन्दा करना, ज्ञानी की निन्दा करना, ज्ञान के साधनों की निन्दा करना, त्याग की निन्दा करना, त्याग की मजाक करना, तपस्वी की मजाक करना, कहाँ तक उचित है? हो सकता है कि आप विज्ञान–युग में जन्मे है, हो सकता है आपकी शिक्षा बहुत अधिक है, हो सकता है आपमें श्रद्धा का अभाव है और श्रद्धा के बिना शिक्षा,धार्मिक अनुष्ठानों की मजाक बनाने की एक परिस्थिति पैदा हो गयी है; परन्तु यह मजाक पता नहीं कब अपने–आप को रुला देगी? किसी और को नहीं, स्वयं को? जो ज्ञानी की अशातना करता है, ज्ञान की अशातना करता है, ज्ञान के निमित्तों की अशातना करता है, उसे अगले जनम में आवाज नहीं मिलती। बोलने की शक्ति नहीं मिलती। आज तो हमको शक्ति मिली है और कुछ मस्तिष्क ज्यादा विकसित मिला है; इससे बाल–की–खाल निकालते हैं। श्रद्धा के अभाव में शिक्षा का दुरूपयोग करते हैं। नामालूम क्या–क्या बोल देते है? पर ज्ञानी कहते हैं–बहुत मुश्किल होगी, बहुत मुश्किल होगी। जिसको आवाज नहीं मिली; उससे पूछो कि 'नही बोलना' बर्दाश्त करना कितना मुश्किल है? मन के भाव मन में दबाये बैठा है। सब को बोलते देख रहा है। सबको मिलते देख रहा है। अपने मन के भाव व्यक्त करते देख रहा है; पर उसके पास वह ताकत नहीं है कि बोलें। पाँच इन्द्रियों में से एक इन्द्रिय भी अनुपस्थित, या अव्यवस्थित हो गयी तो उसकी जिन्दगी मिली नहीं मिली बराबर हो गयी है। जरा उससे पूछो कि भाई बोलने का मूल्य कितना है? हमें एक शक्ति मिल गयी; किन्तु हमने शक्ति का मूल्यांकन नहीं किया। शक्ति का दुरूपयोग किया। स्वच्छन्दता से, उच्छृंखलता से, अनुशासनहीनता से, संस्कृति

और संस्कारों के प्रति हमारे मन में आदर भाव न होने से।

बहुत महँगा पड़ेगा यह सौदा, बहुत महँगा पड़ेगा यह व्यापार, कब? जब यह कर्म लेने आयेंगे। पर आश्चर्य इस बात का है कि उस समय मालूम नहीं होगा कि कौन से कर्म का प्रतिफल यह है? क्योंकि यह पंचम काल है। इस पंचम काल में प्रत्यक्ष ज्ञानी नहीं। ब्रह्मज्ञानी, केलवज्ञानी नहीं, श्रुत ज्ञानी नहीं; अवधि ज्ञानी नहीं; मनःपर्यय ज्ञानी नहीं। यदि हमारे मन में संशय भी उत्पन्न हो तो संशय का कोई निराकरण करने वाला भी नहीं। फिर भी कर्म का फल हमें बता रहा है कि कहीं–न–कहीं जीवन में गलती हुई है। आज ऐसे लोग हैं, जिन्हें ज्ञान का शिक्षण बहुत है। जिन्होंने कई डिग्रियाँ (उपलब्धियाँ) अपने मस्तिष्क के प्रशिक्षण में बटोर ली हैं। वही उनका मापदण्ड है। वह उनके सोचने–समझने का ढंग है। वे स्वयं को नामालूम क्या समझते हैं? किन्तु अल्पता में अधिकता का आभास भी अज्ञानता है। व्यक्ति को जो भी मिला है, अपने–आप में वह बिन्दु है और जो नहीं मिल सका है वह सिन्धु है। जब सिन्धु जितना खजाना पा गये तो बिन्दु जितना ज्ञान पा कर क्या 'अहम्' करना,क्या इतराना, और क्या बाल –की–खाल निकालना ? अपनी बुद्धिको प्रमाणित करने के लिए हजारों की बुद्धि को नकारना यह ज्ञानियों की जबर्दस्त अशातना है। पर नहीं समझ आती, नहीं समझ आती । अज्ञान भाव में जीव नहीं समझता । ऐसे ही तो बाँधता है। कैसे बाँधेगा? इस जीव को यदि यह विवेक आ जाए कि कषाय भाव ही अलाभ है। राग–द्वेष के परिणाम ही अलाभ है। अहम् भाव ही अलाभ है, तो फिर पाने को रह ही क्या जाएगा? सब कुछ स्वयमेव होता जाएगा। यदि आप त्याग करते हैं, तप करते हैं, दान देते हैं तो फिर उसका अहम् क्यों करते हैं? उसमें भी मन में उछल–कूद नहीं होनी चाहिये। अरे,क्या दे दिया और क्या ले लिया? देने को रखा क्या है? संसार में नामालूम कितने माई–के–लाल जनम गये । कितनो ही ने हजारों की गरीबी दूर कर दी। कितनों ही ने लाखों को रोटी दे दी ? एक नहीं अनेक। भारतीय परम्परा में ऐसे लोगों की कमी नहीं रही है। जगडूशा, खेमादेदराणी थे वे लोग जिन्होंने एक ही जीवन–काल में नामालूम कितने काम किये। आज भी, वर्तमान में भी, इसी शहर में, कहना पड़ेगा कि सेठ हुकमचन्द ने अपने वैभव का धार्मिक स्थानों के लिए कितना उपयोग किया । जगत् में एक–से–एक बढ़ कर लोग हैं। व्यक्ति को जो भी शक्ति उपलब्ध है उसे उसका कभी अहम् नहीं होना चाहिये।

मैं क्या हूं? मुझमें क्या ताकत है? क्या सोच–समझ है? ज्ञान का कुछ भी तो नहीं है। ऐसे–ऐसे विद्वान् हैं संसार में जो एक–एक शब्द की गम्भीरता में आपको इतना ले जाएँ, इतना ले जाएँ कि एक महीने तक उनका वक्तव्य ही पूरा न हो। ऐसे–ऐसे विद्वान् हैं। वाक्य–व्यवस्था, उनका वाग्प्रवाह देखते बनता है। अपने से अधिक को जो नजर में रखता है, उसे अपनी शक्ति का कभी अहम् नहीं होता । यदि आप त्याग भी करते हैं, तो भी,ध्यान रखिये, आप से अधिक त्यागी संसार में अनेक हैं। **त्याग करना अलग चीज है, और त्याग का अहम् होना बिलकुल अलग चीज है।** हो सकता है कोई मुनि उत्कृष्ट त्यागी है, जरुर वह अपने–आप में त्यागी है। दुनिया की दृष्टि में वह महान् है। दूसरो के लिए अनुमोदना का कारण है। जो उससे कम तपस्वी है, उनके लिए प्रेरणा देने वाला है, किन्तु यदि त्यागी स्वयं कहे कि मैं ऊँचा और दूसरे नीचे, **तो त्याग है पर वास्तव में वह है नहीं; क्योंकि उसमें त्याग का 'अहम्' है।** 'त्याग' और 'त्याग का अहम्' दोनों साथ–साथ नहीं चल सकते । शायद वह त्याग भी अहम् के लिए ही है। मान लीजिए आप धनवान् है और आप में, प्लेन में उडने की शक्ति है। आप प्लेन की सवारी कर रहे हैं। दूसरा व्यक्ति ट्रेन की सवारी कर रहा है। तीसरा व्यक्ति बस की सवारी कर रहा है। चौथा साइकिल पर सवार है, और हम–जैसे पैदल भी चल रहे हैं। यदि प्लेन में उड़ने वाला, बस में चलने वाले की, ट्रेन में चलने वाले की ,बाइसिकिल पर चलने वाले की मजाक बनाता है, तो निश्चित रूप से उसे अपने साधन का अहम् है। हाँ, दूसरे जरुर कहेंगें कि भाई शक्ति–सम्पन्न आदमी है इसलिए प्लेन से जा रहा है। दूसरों का कहना तो ठीक है, किन्तु प्लेन में बैठने वाला यदि दूसरों का उपहास करें, मजाक करें ,उन्हें कमजोर और स्वयं को अधिक माने तो ज्ञानियों की दृष्टि में वह ज्ञानी नहीं है। ज्ञानियों की दृष्टि में वह तपस्वी नहीं है, क्योंकि तप का क्या अहम्?

क्रमशः



विमलवाणी के मोती

❑ *श्रीमती बबीता सिंघई, जबलपुर*

- **हे आत्मन!** परिणाम जितने निर्मल रहेंगे, उतनी ही शीघ्रता से संसार बंधन से मुक्त हो जाओगे।
- स्वयं अर्जित कर्मोदय को हम नहीं रोक सकते परन्तु कर्मोदय में हर्ष–विषाद नहीं करना यह हमारे पुरुषार्थ का कार्य है।
- बाह्य उत्तम समागम की प्राप्ति पुण्य का फल हे और अंतरंग निर्मलता पुरुषार्थ का फल है।
- हजार मन ज्ञान से एक मुट्ठी चारित्र श्रेष्ठ है।
- लाखों शत्रुओं से उतनी हानि नहीं होती, जितनी क्रोधादि परिणामों से हो जाती है।
- असयंम से तन, धन व यश का नाश होकर, आत्मा का पतन होता है।
- हमारे परिणामों में ही सुख–दुख है। शुद्ध परिणामों से सुख और अशुद्ध परिणामों से दुख होता है।
- जिस प्रकार विपरीत भोजन से स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, उसी प्रकार विषय–कषाय से आत्मा का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है।
- द्रव्य का होना तो पूर्व उपार्जित पुण्य से होता है परन्तु उसका सदुपयोग विरले पुण्यात्मा ही कर पाते है।
- आत्मा की हानि शारीरिक रोग से नहीं, विकारी भावों से है।
- हे आत्मन! प्राणी मात्र को सुखी देखने की भावना, उनका हित करने का प्रयत्न करना मानवता है।
- आत्मा हितैषी, इन्द्र व चक्रवर्ती के भोगों को भी रोग समझता है।
- योग–निरोध की चिन्ता होती है, पर कषाय–निरोध की उपेक्षा की जाती है। **हे विमल आत्मन! कषाय ही संसार है।**
- चोर – चोरी करता है पर धनवान सैकड़ों अनीतियों, अन्याय व असत्य के बल पर धन छीनता है। वास्तव में दोनों ही अपराधी है।
- जितने अंशों में ब्रह्मचर्य की रक्षा होती है, उतने ही अंशों में शारीरिक व मानसिक शक्ति विकसित होती है।
- घंटे भर के लिए भी यदि कोई तुमसे मिले तो प्रेमपूर्वक अपने सरल व्यवहार से उसके हृदय में अमृत भर दो और पग–पग पर केवल यही वितरण करो।
- यदि निर्मलतापूर्वक तथा तात्विक विचार पूर्वक अपने को देखा जाय तो अपने में ही तीर्थ और शन्ति का सागर है।

- जिसे क्षमा का स्वाद आ गया, उसे क्रोध दूर से ही छोड़ देता है।
- वर्तमान में धन से ही खानदानी समझे जाते हैं। पूर्व में धर्म से समझे जाते थे। **वास्तव में धर्मी ही खानदानी होता है।**
- संसार रूपी कुटुम्ब के घर अपनी आत्मा मेहमान के समान है।
- जो ज्ञानी को पहिचानता है वहीं ज्ञानी बन जाता है।
- अपनी प्रवृत्ति निर्मल बनाओं, उस पर तुम्हारा अधिकार है।
- राजपाट व स्त्रियों का त्याग सरल है किन्तु मान सत्कार–पूजा का त्याग कठिन है। यही भव भ्रमण का कारण है।
- **हे विमल आत्मन!** मोह के उदय से ही बड़ी–बड़ी भूले होती हैं। उस भूल को निकालना ही श्रेयोमार्ग है।
- वर्तमान में निस्वार्थ समागम मिलना बहुत दुर्लभ है। अतः सर्वोत्तम समागम तो अपनी आत्मा में रागादि परिणति को घटाना है। **हे विमल आत्मन! मनुष्य भव का यही लाभ है।**
- अन्य प्राणियों पर दया व रक्षा करने वाले मानव विश्व में बहुत हैं। अपनी दया व रक्षा करने वाले विरले ही हैं।
- अपने दोषों को देखने की आदत डालों, तभी तुम्हें पता चलेगा कि तुम्हारा मन ही दोषों से भरा है और फिर दूसरों के दोष देखने की फुर्सत ही नहीं मिलेगी।
- अपनी शान्ति के बाधक हम स्वयं ही हैं। चेतन–अचेतन कोई भी पदार्थ शान्ति का बाधक नहीं जैसे बर्तन में रखी गई शराब विकृति का कारण नहीं हैं।
- **हे आत्मन!** सुख न तो संसार में है, न मोक्ष में है। न कर्मोदय मे है – न कर्मो के अभाव में। सुख तो स्वयं के पास है। इस निराकुल सुख का, आत्मा के साथ तादात्म्य सम्बन्ध होते हुए भी, मोहवश हम उसे अन्यत्र खोजने में लगे रहते है। जैसे कस्तूरी हिरण के पास है पर वह खुशबू के लिए बाहर घूमता है।
- वचन की सुन्दरता से अन्दर की प्रवृत्ति भी सुन्दर हो, यह जरूरी नहीं है।
- **संसार भयावह है परन्तु मुक्ति भी संसार से ही होती है।**
- पुरुषार्थ के अभाव में मुक्ति सम्भव ही नहीं है।
- किसी के मुख से कोई बात विरुद्ध सुनकर उसे अपना विरोधी मत मान बैठो। विरोध का कारण ढूढ़ों, उसे मिटाने की सच्चे हृदय से चेष्टा करो।
- सुख इन्द्रिय–विषयों में नहीं है, सुख इच्छाओं के रोकने मे है।

आचार्य महाराज ने एक दिन हमें बताया था हमारे गुरुदेव महावीर कीर्ति जी महाराज से हमारे सम्बन्ध में कोई आकर कुछ कहता तो सदैव कहते – विमलसागर को मैंने ऐसे शुभ मुहूर्त में दीक्षा दी है कि वो इस युग में धर्म की महान् प्रभावना करेगा।

उनका श्रीवत्स चिह्न उनकी महान निर्भयता का प्रतीक है। वह किसी से डरने वाला नहीं है, धैर्यशील है। उसे किसी की चिन्ता नहीं है, वह धर्म के बड़े–बड़े कार्य करेगा।

– उपाध्याय मुनि भरत सागर जी



आचार्यश्री शिखरचन्द पहाड़िया एवं उनकी धर्मपत्नी प्रेमलता पहाड़िया को आशिर्वाद देते हुए

वात्सल्य रत्नाकर सन्मार्ग दिवाकर परमपूज्य आचार्य १०८

शुभकामनाओं सहित



एक ही वस्तु को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से देखा व समझा जा सकता है- यही... अनेकान्त का मूल रहस्य है।

परमपूज्य, वात्सल्य रत्नाकर, सन्मार्ग दिवाकर

आचार्य श्री विमल सागरजी महाराज

के ७९ वें जन्म दिवस पर
चरणों में शत्-शत् नमन

विनीत

शान्ति प्रसाद जैन
मरकुरिया रोड
धनबाद (बिहार)



आचार्य श्री विमल सागर जी
महाराज
जन्म जयती महोत्सव

परमपूज्य आचार्य प्रवर
श्री विमल सागर
महाराज
के युगल चरणों में
नमोऽस्तु

विनीत
सुरेश चन्द जैन

प्रतिष्ठान
रमेश रेडीमेड कम्पनी
4450 पहाडी धीरज
सदर बाजार- दिल्ली 6

मेरी भूल बताने वाला मेरा मित्र है–

शत्रु व मित्र में समभाव ही उन्नति का साधक है।

विमल वाणी



परमपूज्य आचार्य 108
श्री विमल सागर महाराज
के 79 वें जन्मोत्सव पर
सादर चरणों में नमोस्तु

विमलसिन्धु तुमको प्रणाम

ब्र. ब. डॉ.प्रमिला जैन

अवतरित हुए इस जगती पर तुम जग उपकारक पुण्य धाम,
श्री विमल सिन्धु तुमको प्रणाम। श्री विमल सन्धिु तुमको प्रणाम,

मानापमान समान जिनके व्रतों में निश्चल मेरु सम,
लोकेषणा से परे रहत जो उपयोग निश्चल धेनु सम।
अनियत विहारी नियमित विचारी उपदेश दिया फिर धाम–धाम,
यथाजात यतिवर श्री विमल सिन्धु तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम।। 1 ।।

✪

क्रूर नहीं निर्भीक सिंह सम, चिन्मय मणि के हो अभिलाषी,
निद्रा जयी इन्द्रिय विजयी मिताहारी हितमितभाषी।
सूर्य प्रभा धारक ओजस्वी सहे परीषह अति दुख खान,
मोक्षमार्ग साधक यतिवर श्री विमल सिन्धु तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम।। 2 ।।

✪

पदयात्री हो पाणिपात्री भविजन को हो तुम सुखदायी,
गंगा सम निर्मल मन धारक रत्नत्रय निधि हो गुणाग्राही।
धर भेष दिगम्बर परम पवित्र छोड़ा धन वैभव और काम,
तुम हो सच्चे साधक गुरुवर श्री विमल सिंधु तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम।। 3 ।।

✪

अपने प्रति कठोर व्रज सम, हो नवनीत मृदु पर के प्रति,
ध्यानाध्ययन मे लीन रहे नित है अटूट भक्ति गुरु के प्रति।
पावन व्यक्तित्व है आपका पावन है क्रिया सारी,
विमल सिधु के चरणों में मन वच तन से है धोक हमारी,
करुणा के सागर गुरुवर तुम वात्सल्य भाव की हो मूर्ति।
तुमको पाकर हे दयानिधे मन नाच उठा हे संयम की मूर्ति,
किस मुख से करूँ गुणगान तुम्हारा, हो अनन्त गुण धाम।
बद्धांजलि "प्रमिला" करती हे विमल सिन्धु। तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम।। 4 ।।

✪ ✪ ✪

तपःपूत

❑ डॉ. निजामुद्दीन, कश्मीर

आचार्य विमल सागर जी एक सन्तात्मा हैं। उन्होंने अपने धर्मादेशों से, प्रवचनों से जन मानस को अभिप्रेरित किया और एक बहुवर्ग को सन्मार्ग दिखाया। बड़ी संख्या में लोगों को जैनधर्म की विधि अनुसार साधु दीक्षा दी है। 45 चातुर्मास वो अब तक कर चुके हैं और 38 व्यक्तियों को मुनिधर्म में दीक्षित भी कर चुके हैं। 22 महिलाओं को आर्यिका दीक्षा भी दी है। 40 से अधिक को क्षुल्लक/क्षुल्लिका दीक्षा दी है। यह सब इसलिए बताया जा रहा है कि उन्होंने लोगों में धर्म की सम्यक् भावना उत्पन्न की, उन्हें प्रबोधित किया। जब हम उनके तपस्वी/ उपवासी जीवन पर एक दृष्टि डालते है तो आश्चर्यान्वित हो जाते हैं। **उपवासों की लम्बी श्रृंखला वहाँ मिलती है और मिलता है परम संयमी, पूर्णतः निरासक्त, निष्प्रही, निष्परिग्रही और इन्द्रियजयी व्यक्तित्व।**

गीता में योगीश्वर कृष्ण ने तीन प्रकार के तपों का उल्लेख किया है। (1) शारीरिक (2) वाचिक (3) मानिसक। शारीरिक तप के द्वारा व्यक्ति आचरण को शुद्ध, पवित्र बनाता है। उपवास या व्रत द्वारा शरीर स्वस्थ्य एवं निरोगी हो जाते हैं। वाचिक तप द्वारा मधुर शन्तिमय और हितप्रद वचन बोले जाते हैं जिनसे उदिवग्नता समाप्त होती है। मानसिक तप से मन की शुद्धि–साधना की जाती है। मौन धारण किया जाता है और मन को प्रसन्न रखा जाता है। जब व्यक्ति तप और उपवास की साधना करता है तो वह तन–मन–वचन सब प्रकार से शुद्ध हो जाता है। **आचार्य विमल सागर जी ने तप और उपवास कर अपने को तपःपूत बनाया है।** रामचरित–मानस में तुलसीदास जी ने पार्वती के तप–उपवास का वर्णन किया है–

नित नव चरह उपज अनुरागा, बिसरी देह तपहिं मनु लागा।
सबंत हसस मूल फल खाए, सागु खाई सब बरष, गवाए।
कछु दिन भोजनु वारि बतासा, किए कठिन कछु दिन उँपवासा।
बेल पाति महि, परई सुखाई, तीनि सहस सबंत सौई साई।
पुनि परिहरि सुखानेउ परना, उमहि नामु तब भयउ अपरना। (बालकाण्ड)

यह है घोर–तप–उपवास। सूखे पत्ते खाने भी छोड़ दिए तब कहीं जाकर पार्वती का "अपर्णा" हुआ। **श्री विमल सागर जी महाराज** ने अपने उपवासित जीवन में ग्यारह वर्षो से अन्न नहीं लिया और घी–तेल–नमक–दही को भी परित्यक्त कर दिया। उन्होंने और भी कठिन उपवास किए जैसे– चरित्र शुद्धि व्रत के 1234 उपवास, तीस चौबीसी के 720 उपवास। उनकी यह उपवास–साधना और स्वादिष्ट वस्तुओं का पूर्णतः त्याग करना साधारण साधु वृत्ति के व्यक्ति का काम नहीं है। दही–घी आदि का त्याग करना "**रस–परित्याग तप**" कहा गया है।

खीरदहि सप्पिमाइ पणीयं पाणभोयणं।
परिवज्जणं रसाणं तु मणियं रसविवज्जणं।

वस्तुतः इन्द्रियों का उपशमन "**उपवास**" कहलाता है और जो साधु जितेन्द्रिय होते हैं, वे भोजन करते हुए भी उपवासी होते हैं–

उवसमणो अक्खाणं, उपवासो वण्णिदो समासेण।
तम्हा भुजंता वि य, जिदिंदिया होंति उपवास।।

जो साधु या व्यक्ति स्वाध्याय या शास्त्राभ्यास के लिए अल्प आहार करते हैं वे आगमानुसार "**तपस्वी**" माने जाते हैं। **आचार्य श्री का जीवन तपोज्जवल हैं। उन्होंने अपनी वृत्तियों का परिष्कार किया है और तप के बाह्य तथा अभ्यन्तर तप की साधना की है। ऐसे तपःपूत व्यक्तित्व को बार–बार नमन्। त्रिकाल नमन्**

❑❑❑

वन्दौं दिगम्बर गुरु-चरण

❑ नरेन्द्र प्रकाश जैन, फीरोजाबाद

ज्योतिष-शास्त्रो मे पद्मिनी स्त्री, राजहंस पक्षी और निर्ग्रन्थ तपोधनों के बारे मे कहा गया है कि वे जहा/जिस देश मे भी विचरण करते हैं, वहा सदा मगल छाया रहता है। महाभारत मे एक प्रसग आता है कि युद्धस्थल मे उपस्थित अर्जुन मोहग्रस्त था। वह द्विविधा मे था कि युद्ध शुरु करे या न करे? तभी योगिराज श्रीकृष्ण की दृष्टि कुछ दूर सामने विहार करते हुए एक निर्ग्रन्थ तपस्वी पर पड़ती है। वह अर्जुन को निर्देश देते है– **"पाण्डु-पुत्र रथ पर आरुढ़ होकर गाण्डीव उठाओ, अब देर न करो। बहुत अच्छा शकुन हुआ है। यह देखो, सामने दिगम्बर मुनि जा रहे हैं। उनका दर्शन बहुत शुभ है। युद्ध में तुम्हारी विजय सुनिश्चित है।'' ''मराठी में एक कहावत प्रचलित है– 'साधु-सन्त एति धरा, तोचि दिवाली-दसरा'** अर्थात् जिस स्थान पर साधुओं के चरण पड़ते हैं, वहा एक साथ दशहरा और दिवाली सरीखा आनन्द छा जाता है।

दिगम्बर सन्तो की महिमा का वर्णन करने मे भला कौन समर्थ है,

सदा प्रणम्य आचार्यश्री

पूज्य आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज वय, ज्ञान, तप और अनुभव में वृद्ध एक महान् सन्त हैं। उनका सघ देश के सबसे बडे मुनि-सघो मे से एक है। आज के विषम काल मे अल्पज्ञानी और अतिवृद्ध साधुओं का निर्वाह कठिन से कठिनतर होता जा रहा है किन्तु आचार्यश्री के पुण्य-प्रताप से उनके संघ के सभी साधुओ और त्यागियो का निर्वाह सम्यकप्रकारेण हो रहा है। यह बडी बात है। वह जहा भी रहते है, उनके निमित्त से सैकडों-हजारों लोग सस्कारित होकर निर्व्यसन जीवन की प्रेरणा प्राप्त करते रहते है। उनके भक्तो की सख्या बहुत बडी है और वे देश के हर भाग मे पाए जाते है।

त्याग-तपस्या में तो वह अद्भुत ही हैं। एक दिन तथा पर्व आदि में दो दिन छोड़कर वह निरन्त्र आहार लेते हैं। उनके हाथ हर समय माला पर रहते हैं। चौबीस घण्टो में वह तीन-साढ़े तीन घण्टो से अधिक सोते नही। इस वृद्धावस्था में भी वह स्फूर्तिमय हैं। भले ही कमर झुक गई है किन्तु तेजपुंज चेहरा सदा उन्नत रहता है।

आचार्यश्री वात्सल्य-मूर्ति हैं। उनकी आँखों से सतत स्नेह झरता रहता है। '**अर्धावतारन-असिप्रहारन मे सदा समता धरन**' के वह मूर्तिमान प्रतीक है। एक बार जो उनके सान्निध्य मे पहुँचता है, वह उनका ही होकर रह जाता है। वह हर समय भीड से घिरे रहते है। लोगो को उनके चरणो मे मानसिक शान्ति मिलती है।

उनके इन सद्गुणों की हम आराधना करते हैं। वह एक शान्त-सरल स्वभाव के साधु हैं और सदा प्रणम्य हैं।

एक विनम्र अपील

यद्यपि यह **79 वीं जन्म-जयन्ती** तो एक होनहार बालक नेमीचन्द्र से सम्बन्ध रखती है, तथापि द्रव्य निक्षेप से इसे हम उनकी भी मान सकते है। इस अवसर पर हम सभी भक्तजनें से यह अपील अवश्य करना चाहेगे कि अयाचकवृत्ति वाले इस उत्कृष्ट सन्त के समक्ष कभी याचक बनकर खडे न हों। याचनाये हमेशा लौकिक इच्छा-पूर्तियो के लिए की जाती है, जबकि आशीर्वाद मिलता है वैराग्य, वीतरागता और मन शान्ति की प्राप्ति के लिए। हम सब उनका मगल आशीर्वाद तो सदा प्राप्त करते रहे कन्तु उनके सामने अपनी लौकिक कामनाये/याचनाये प्रस्तुत कर उनके आत्मकल्याण, जिसकी उम्र के इस पडाव पर उन्हे सर्वाधिक आवश्यकता है, मै बाधाये न खड़ी करे। यदि सन्त से कुछ मागना ही है तो व्रत मांगे या संयम के सस्कार मागे। सन्त के पास जो है, वही तो मांगना चाहिए। साधु-सेवा से अपने पुण्य-भण्डार मे जब वृद्धि होगी, तब लौकिक साधन ते स्वत मिलेगे ही। यह एक धर्मपुत्र की सभी धर्म-बन्धुओ से मार्मिक अपील है। पूज्य आचार्यश्री के पुनीत चरणो में भी यह प्रार्थना है कि वह भी भक्तो को सम्यग्दर्शन के नि:कांक्षित अग के पालन की प्रशस्त प्रेरणा देते रहे।

पूज्य आचार्यश्री सदा जयवन्त रहें और अपने रत्नत्रय की साधना में निरन्तर उत्कर्ष को प्राप्त होते रहें, इस मंगल कामना के साथ उन्हें शतश: प्रणाम। ❑❑❑

एक जीवन्त संस्था

❑ जैनेन्द्र कुमार जैन

धन्य है वे माता पिता जिन्होंने आप जैसे सन्त शिरोमणि को जन्म देकर हम दिशाहीन, अज्ञानी जीवो, को सन्मार्ग पर लाने के लिए एक अचूक सम्बल प्रदान किया है।

काफी अन्तराल के बाद निर्ग्रन्थ दिगम्बर चारित्रधारी मुनियों का एक नया युग दक्षिण प्रान्त से **आचार्य श्री शान्ति सागर जी महाराज** के द्वारा प्रारम्भ हुआ। इससे पूर्व निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधु हमारे बीच देखने को नहीं मिलते थे। मात्र भट्टारकगण जैनधर्म के प्रचार–प्रसार मे अपना योग दान देते थे। **आचार्य श्री शान्तिसागर. महाराज**, उत्तर भारत के फिरोजाबाद आगमन पर आठ वर्षीय बालक नेमीचन्द के भाव यज्ञोपवीत (जनेऊ) धारण करने के हुए। क्या पता था यह होनहार बालक आगे चलकर **विमल सागर** के रूप मे हम अज्ञानियो का अज्ञान दूर करने मे सहायक बनेगा।

इस महान विभूति ने गर्भावस्था मे ही सम्मेद शिखर की यात्रा पर अच्छे सस्कारों का पोषण किया। माँ के वियोग के कारण पिता की नेक शिक्षाओ ने आपके हृदय मे और भी धार्मिकता के भाव जागृत कर दिये। मुरैना विद्यालय मे सस्कृत अध्ययन के लिए जाने पर प मक्खन लाल जी और नन्दलाल शास्त्री जो आगे चल कर मुनि सुधर्म सागर के नाम से जाने गये जैसे विद्वानो के सन्सर्ग ने आपकी जीवनधारा को ही बदल दिया। शास्त्रीय परीक्षा पास करने के बाद आप कुछ समय के लिए अध्यापन मे लग गये। किन्तु आपके भाव सासरिक बधन से हटकर वैराग्यमय होते गये। **आचार्य चन्द्र सागर जी एवं वीर सागर जी महाराज** के सम्बोधन से आपने महाव्रत धारण करने के भाव बना लिए। एक बार **आचार्य वीर सागर जी महाराज** ने अपने भाषण मे विद्वान वर्ग के प्रति कटाक्ष करते हुए कहा कि – ''**विद्वान अपनी योग्यता से दूसरे के चरित्र धारण में सहायक तो बनते हैं किन्तु वे स्वयं चारित्र धारण से वंचित रहते हैं**। आपको यह बात चुभ गई। उन्होने आचार्य श्री से सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण कर इस सासारिक बधन से विरक्ति ले ली। आपने क्रमश क्षुल्लक एव ऐलक के व्रतो को धारण करके **आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी** से निर्ग्रन्थ साधु बनने की प्रार्थना **श्री दिगम्बर सिद्धक्षेत्र सोनागिरि (म.प्र.)** पर की और मुनि दीक्षा ग्रहण कर **विमल सागर** नाम पाया। आप यथा नाम तथा गुण के आधार पर एक परोपकारी, सरल स्वभावी निष्ठावान योगी के रूप मे उभरकर जन–जन के हृदय मे छा गये है। आप अपने गुरु से शिक्षा पाकर थोडे से ही समय मे ज्योतिष, आयुर्वेद आदि विषयो के प्रकाण्ड ज्ञाता बन गये। आपने अपनी सेवा और निष्ठा से वे सभी विधिया अर्जित करली जो गुरु के पास भी उपलब्ध थी।

आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद आपने अनेक बार भारत के सभी प्रान्तो मे भ्रमण कर भारत की कई भाषाओं पर अपना अधिकार जमा लिया। आप जहाँ भी पहुँच जाते है वह स्थान तीर्थ स्थल के रूप मे परिवर्तित हो जाता है। आप जहाँ भी जाते है आपके द्वारा कोई न कोई पारमार्थिक कार्य अवश्य किया जाता है, जैसे पाठशालाएँ/ औषधालय/ सरस्वती भवन आदि–आदि। **श्री सम्मेद शिखर का समवशरण, राजगिर का सरस्वती भवन, श्रवण बेल गोला का स्वाध्याय भवन एवं सोनागिरि तीर्थ क्षेत्र** पर किये गये निर्माण कार्य चौबीसी टोक आगे आने वाली पीढी के लिए प्रेरक बनेगे।

वर्तमान युग में चारित्र धारण की जो प्रेरणा आचार्य श्री ने अपने चारित्र एवं ममतामयि भवना से दी है, वह सराहनीय है। आपने अपने सम्बोधन मे ससार के अनेक भव्य जीवों का कल्याण कर उन्हे सम्मार्ग पर लगाया है। आपके इस उपकार को कभी भुलाया नही जा सकता। आपके अलौकिक तेज से लोगों का अज्ञान तिमिर नष्ट हुआ है। आपकी भावना ससार के सम्पूर्ण प्राणियो के सक्लेश हरने की होती है। **आपका सानिध्य प्रत्येक प्राणी के लिए अमोध अस्त्र के समान है जो सांसारिक बाधाओं से छुट्टी दिलाता है।**

वीर प्रभु से कामना करता हूँ कि आप स्वस्थ्य एव निरोग रहते हुए, हम समस्त ससारी प्राणियों के लिए अपना सन्मार्ग दर्शन देते रहे, जिससे अपने को मोक्ष मार्ग मे स्थित बनाए हुए अपना कल्याण कर सके। आपके ससर्ग मे आने वाला हर व्यक्ति आत्म विभोर हो उठता है।

मैं त्रिकाल वंदन करता हुआ शत्–शत् नमन आपके चरणों में समर्पित करता हुआ, अपनी अभिवन्दना एवं विनयाञलि प्रस्तुत करता हूँ। ❑❑❑

अविस्मरणीय प्रसंग

❑ शशिप्रभा जैन "शशांक"

चन्दनं शीतलं लोके चन्दनादपि चन्द्रमा।
चन्द्र–चन्द्रनयोर्मध्ये शीतला साधुसंगतिः।।
साधूनां दर्शनं पुण्यं तीर्थभूता हि साधवः।
कालेन फलति तीर्थ, सद्यः साधु समागमः।।

सन् 1963, माह मई, को मेरे सद्गुरुदेव, आत्मानुभव आत्मसाक्षात्कार एवं आत्मदर्शन केसतत साधक दिव्य तेजोमय शक्ति के प्रखर दिवाकर, निमित्तज्ञान दर्शक, भव्य जीवों को तारने वाले **परम पूज्य श्री 108 आचार्यप्रवर विमलसागरजी महाराज** का जैन बालाश्रम में शुभागमन हुआ। मैं चातक पक्षी रुपी संस्थावासिनी उस महान अमृत तुल्य स्वाति की बूंद रुपी दिव्य ज्योति को पाकर निहाल हो गई। गुरु–चरणों में झुकी रही जब तक सद्साधनामय पुनीत करों में सुशोभित पीछी का श्रेष्ठतम आर्शीवाद नहीं मिला। जिनकी ममतामयी मृदु वाणी आज भी श्रवणों में तरंगित होती रहती है, संसारी प्राणियों की मंगलमयी कामनाओं की पूर्ति हेतु जो **सद्धर्मवृद्धिरस्तु** का सतत आर्शीवाद दे रहे हैं, पावन रत्नत्रय की उस परम विभूति के साथ व्यतीत क्षणों का स्मरण उनको नित प्रति प्रणाम करता है।

पहले नम्बर पास होगी

मैंने तब मैट्रिक की परीक्षा दी थी पर परीक्षाफल नहीं निकला था। परम अग्रज भाई श्री प्रकाशचंद्र जी सम्पादक युगवीर आचार्यश्री के दर्शनार्थ आये थे। मैंने देखा, अन्य भक्तजन महाराजश्री के इर्दगिर्द बैठकर, कुछ–कुछ पूछ रहे हैं और गुरुश्री बड़ी सौम्यता, सहजता से सबको प्रश्न का उत्तर दे रहे हैं। सोचा कि मैं भी आचार्यश्री से कुछ पूछूं। मैंने प्रकाशभाई से अनुरोध किया। उन्होंने कहा– **हाँ शशिबहिन। निसंकोच पूछो। महाराजश्री तो निमित्तज्ञानी हैं, भविष्य की बाते बता देते हैं जो सत्य निकलती है। क्या पूछना चाहती हो? मैंने कहा– अब आपको क्या बताऊँ? मुझे श्रद्धेय माँ श्री चन्दाबाई अपार ममतमयी मातृत्व का स्नेह मिला था, उन्होंने परीक्षा के पूर्व ही हिदायत दे रखी थी कि मैट्रिक प्रथम श्रेणी से पास करोगी तो आगे पढ़ायेंगे, वरना.... मैं सहमी सहमी** थी। आगे पढ़ाई की तीव्रेच्छा थी। मैंने गुरुदेव के निकट पहुंचकर विनम्र नमन करके पूछने का साहस किया। महाराजश्री ने मेरी मनःस्थिति को समझा और प्यार से कहा– **क्या बात है बेटी? मैंने कहा–महाराजश्री, क्या मैं मैट्रिक परीक्षा में पास हो जाऊँगी? उन्होंने तपाक से कहा– अरे तू तो First Number (Scholarship) भी प्राप्त करेगी।** मैंने आत्मीय खुशी बटोरकर कहा –**सच महाराज।** उन्होंने कहा– **सच, लिखकर दे दूं क्या?** मैं खुशी से उनके चरणों में नतमस्तक हो गयी, आँखें सजल होकर उनके पावन चरण कमल पर बूंद रुप में टपक पड़ीं। रिजल्ट आया। महाराजश्री के वचनामृत से शतप्रतिशत सफलता देकर मेरा मान बढ़ाया तभी दूसरे दिन महाराजश्री ने अपने प्रवचनों के मध्य ब्रह्मचर्य पर हृदयग्राही बातों से मुझे ऐसा प्रभावित कया कि मैंने सभी के बीच ब्रह्मचर्य व्रत लेने की प्रतिज्ञा की। सबने आश्चर्य किया। कुछ एक मोही जनों ने बाधा भी डाली। किसी ने कहा– **जब तक आश्रम में रहोगी तब तक का व्रत ले लो।** मैंने सबकी सुनी, अपनी गुनी और आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। तुलसीदास ने कहा भी है–

साधु चरित शुभ सरिस कपासू। निरस विशद गुणमय फल जासू।।
जो सहि दु:ख परिछिद्र दुरावा। बन्दनीय जेहि जग जस पाया।।
शठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहाई।।
विधि हरिहर कवि कोविद वानी।। कहत साधु महिमा सकुचानी।।

दुष्ट से दुष्ट अधर्मी भी क्यों न हो, वह भी सत् साधु-संतों की संगति को पाकर साधु ही हो जाता है। पारस को छू छूकर लोहा स्वर्ण बन जाता है। ब्रह्म, विष्णु, महेश, कवि, पण्डित स्वयं सरस्वती भी उनकी अनुपम महिमा का वर्णन करने में सकुचा जाते हैं।

जैन दिगम्बर ऋषि-सन्तों की परम्परा में, समाज-देश-धर्म की भलाई तुम्हारे बाद ये देवियाँ करेंगी। माँ श्री ने हाथ जोड़ लिये।

विरोधी भी नत मस्तक हो गये

महात्माओं की वाणी सदैव सत्यरुप का मार्गदर्शन कराती है क्योंकि वह दृष्टा के रुप में होती हे। आचार्य गुरुवर कहीं तो नारियल के समन कठोर तो कहीं फल की तरह अत्यन्त मृदुल। बच्चों के मध्य बच्चे, युवकों में युवक और वृद्धों मे वृद्ध बनकर उन्हीं श्रेणी के अनुकूल जैसे कुम्हार भीतर-बाहर हाथ देकर बर्तन की पिटाई कर, ठोंक-ठोंककर उसे समान सुन्दर रुप देता है वैसे ही गुरुवर भव्यजनों, शिष्यगणों के दोषों, पापमयी वृती के वमन कराने के लिये सदैव धर्मघुटी पिलाकर अनुशासन रखने में सक्षम है। जैन-अजैन सबके प्रति वे समदर्शी है। आपकी तप-आराधना मे उपसर्ग भी आये। दिगम्बरत्व पर विरोधी जनों ने कटाक्ष भी किये, पर वाह री धन्य दिगम्बर मूर्ति! आपने अपने आध्यात्मिक प्रखर तेज से शत्रुदल को भी अपने समक्ष झुका दिया।

कुएँ लबालब भर गये

जैन दिगम्बर मुनियों की परम्परा मे उनके जीवन मे उपसर्ग का अतीव महत्व बताया है। निश्चय स्वरुप के वन्दनीय सम्यक्दृष्टि मुनीश्वर विकाररहित भावों से जब उपसर्गों पर विजय पाते हैं तो स्वत: वहाँ अतिशय होता है और वह स्थान पुण्यमयी तरण-तारण रुप होकर अभिवन्दनीय बन जाता है। आचार्य गुरुवर के मुनिजीवन से महती अतिशयात्मक क्रियाएँ हुई है। खारे पानी के कुएँ मीठे पानी में परिवर्तित हो गये। महाप्रभु आदीश्वर नाथ के मूर्ति के प्रक्षालन जल को गुरुदेव के हाथो कुएँ में डाले जाने से शुष्क कुएँ भी जल से लबालक भर गये। सिंह, व्याघ्र, सर्प, भेडिये जैसे जानवरों ने आपके समक्ष क्रीड़ाएँ की और दर्शन करके आपसे अपनी भाषा मे गरजगरज फुफकार कर चले गये, ममता-समता की प्रतिमूर्ति के साथ हँस-खेलकर। कोई बाधा नहीं। उन तिर्यंच प्राणियों का भी उद्धार हो गया उन महामना निर्ग्रन्थ का सान्निध्य पाकर। आपके स्वानुशासन और परानुशासन की पराकाष्ठा चकित कर देती है। पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने, जिनवाणी की रक्षा, तीर्थरक्षा, मानवधर्म की रक्षा मे आप सदैव जागृत है। आपके इतने विशाल संघ की महिमा स्मरणीय है, अनुकरणीय है। ■

वक्त के साथ साथ जो चल सकें ये जमाना उनका है।
फूल के साथ जो कांटे भी चुन सकें ये जमाना उनका है।
ये जमाना उनका नहीं जिनके सीने में डर है खौफ है यारों,
सिर पे जिनके कफन है दोस्त ये जमाना उनका है।
– डॉ. शिव "सिद्धार्थ"

वात्सल्य एवं स्थितिकरण के अपूर्व उदाहरण

संहिता सूरि पं नाथूलाल जैन शास्त्री

जगत के प्राणियों को दुखी देखकर उनके कल्याण की कामना अपायधर्म्य ध्यान कहलाता है। यह सम्यकदृष्टि गृहस्थ एवं मुनि को होता है जो शुभोपयाग के अन्तर्गत पुण्य परिणाम है।

श्री परम पूज्य आचार्य विमल सागर जी के समीप प्रतिदिन सैकड़ों दुखी व्यक्ति आते है और उन्हें वे पंचपरमेष्ठी के नाम का स्मरण करते रहने का उपाय बताते हैं। यद्यपि यह नाम प्रत्येक उपदेशदाता बता सकता है परन्तु आचार्य श्री तपस्वी है उनकी वाणी में जो अतिशय है उसी के प्रभाव से भक्तजनों को लाभ होता है। उनमें यह विशेषता है कि वे भक्त को बिना संकेत प्राप्त हुए उसके घर के वातावरण और उसकी पीड़ा या उसकी समस्या को जानकर उसकी चिकित्सा भी बता देते हैं।

अनेक वर्षो से उक्त क्रम चला आ रहा है जिसके कारण हमारों लोग आचार्य श्री के ऋणि हैं और कृतज्ञ बने हुए है आश्चर्य यह है कि उनके दर्शनार्थ एव अपनी मनोकामना पूर्ण करने को नम्बर आने पर भी हर व्यक्ति प्रथम पहुंचने का प्रयत्न करता है। कभी-कभी वातावरण क्षुब्ध भी हो जाता है परन्तु ऐसी किसी भी परिस्थिति मे आचार्य श्री को कभी रचमात्र भी अशान्त होते हुए नही देखा गया। सदैव वे शान्त व प्रसन्नचित्त ही दिखलाई देते हैं।

'मा कश्चित् दुख भाग्भवेत्'' कोई दुखी न रहे इस दृष्टि से आचार्य श्री दूर-दूर से अपने समीप आने वाले बन्धुओं का जिनका अन्यत्र समाधान नहीं हो पाता समाधान करते है।

लोकमान्य आचार्य के प्रति जनसामान्य कृतज्ञ हैं इसलिय उनकी हीरक जयन्ती पर और उसके पूर्व से ही दानशील लोग साहित्य प्रकाशन हेतु पर्याप्त अर्थ देते हैं वर्तमान में 75 ग्रन्थ प्रकाशन की योजना कार्यान्वित हो रही है।

आचार्य श्री द्वारा वात्सल्य भाव के साथ स्थितिकरण हेतु अपने संघ को अविचलित में योग देना भी उल्लेखनीय है। यदि संघ के किसी भी विरक्त को सहानुभूति एवं मार्गदर्शन न मिले तो उसका अविचलित हो जाना स्वभाविक हो जाता है।

''आदहिदं कादव्वं जं सक्कइ परहिंद च कादव्वं'' आत्म हित करना चाहिए और जितनी शक्ति हो परहित भी करना चाहिए। इस वाक्य का आचार्य श्री पालन करते हैं और अपने आत्मकल्याण की ओर अग्रसर रहते हैं।

मैं उनके दीर्घ स्वास्थ्य लाभ कामना के साथ उसकी मन, वचन, काय से नमन अभिवन्दन नमोस्तु करता हूं। ■

सिद्धि प्रदाता

ब्र. धर्मचन्द्र शास्त्री

युग प्रमुख, चरित्र शिरोमणि, वात्सल्य रत्नाकर, निमित्तज्ञानी, आचार्य प्रवर, सन्मार्ग दिवाकर **श्री विमल सागर जी महाराज** के व्यक्तित्व का दर्शन करते समय मन में अनेक प्रकार की भावनाएँ उभरती हैं। जब–जब ज्ञान की आंखों में श्रद्धा की ज्योति जगती है तो आचार्य श्री के स्वच्छ, सौम्य, धवल, निर्ग्रन्थ देह के भीतर एक दिव्य व्यक्तित्व की प्रतिमा का दर्शन होता है। उनका व्यक्तित्व कितने रमणीय रंगों में रंगा है यह कहना कठिन है। समझ पाना भी कठिन है सिर्फ अनुभूति होती है उनके विविध सुरम्य रुपों को देखकर कभी लगता है आचार्य श्री सरलता की साकार मूर्ति हैं। विनम्रता के पुंज हैं। कभी–कभी उनकी दिव्य साधना की छवि के दर्शन होते हैं तो लगता है ज्ञान का सागर हिलोरें मार रहा है। उनसे बात करते समय लगता है कि वाणी मिश्री से भी मीठी है। प्रकृति से सरल एव नम्र आचार्य श्री का जीवन साधनामय है। 79 वर्ष की आयु होने पर भी ज्ञान, ध्यान, जप, तप, स्वाध्याय, धर्मोपदेश, जिन वन्दना, तीर्थ दर्शन, आत्म चिंतन में निरंतर तल्लीन रहते हैं। **आचार्य प्रवर इस युग के सर्वप्रिय लोकोपकारक महापुरुष हैं।**

आपकी आत्मा आपाय विचय नामक धर्म ध्यान में सदा लीन रहती है। आत्म चितन के पश्चात जो भी समय मिलता है वह लोककल्याण की पवित्र भावना के अनुसार ससारी प्राणियों को देते रहते हैं तथा हजारो संसारी प्राणी आपके दर्शन एवं वाणी से आत्म कल्याण कर रहे हैं। आचार्य महाराज के प्रथम दर्शन का सौभाग्य शाश्वत तीर्थराज सम्मेद शिखर जी में सन 1972 मे प्राप्त हुआ। तदनतर पूर्व महाराज के दर्शन राजगृही, अजमेर, श्रवण बेलगोला, जयपुर, नीरा, गिरनार, बम्बई आदि स्थानों पर तो होते ही रहे हैं किन्तु अब तो आपके चरण सानिध्य में रहने का सुअवसर प्राप्त हो रहा है। आपका वात्सलय सदा मिला है। ऐसे महान कर्मयोगी के प्रति मैं अपनी पूर्ण आस्था रखता हूँ तथा वीर प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि आचार्य श्री का वरद् हस्त युगों–युगों तक मिलता रहे। **ऐसे परम पूज्य तपोधन आचार्य श्री के पादमूल में अपनी भावपूर्ण शब्दावलि अर्पित करता हूँ।** आचार्य श्री की विमल छत्र–छाया संसारी प्राणियों को मिलती रहे ताकि सभी प्राणी शान्ति प्राप्त कर सकें। यही मंगल कामना है। ■

मैंने पूछा

ब्र.मुरारी लाल

मैंने आचार्य गुरुवर श्री विमल सागर जी से एक दिन पूछा गुरुदेव! आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी में क्या विशेषता थी जो आपने अन्य आचार्यों को छोड़कर अनसे दीक्षा ली।

आचार्य म. ने मुस्कुराकर उत्तर दिया– प्रथम बात तो यह कि **आचार्य श्री शान्ति सागर जी महाराज ने हमें आचार्य महावीर कीर्ति के पास दीक्षा लेने की सलाह दी थी।**

द्वितीय यह कि **आचार्य महाराज अपने व्रतों का निर्दोष रीति से पालन करते थे। वे सिंह वृत्ति आगम निष्ठ, निर्भीक, शुद्ध आहार पद्धति को स्वीकार करने वाले अनेक गुणों के स्वामी थे।**

आचार्य श्री विमल सागर जी अपनी गुरु परम्परा पर चल रहे हैं। आपका जैसा नाम है वैसे ही गुण आपमें मौजूद हैं वस्तुत: आप अति सरल परिणामी हैं तथा आपके हृदय में प्राणी मात्र के उद्धार की भावना है। आपने **स्व. आचार्य श्री सुधर्म सागर जी** से एक ऐसी विद्या का अध्ययन किया है जिसेक द्वारा आप प्राणी मात्र के दुखों को दूर करने में सक्षम हैं **वह है मंत्र तंत्र विद्या।** आप जीवों के चेहरे मात्र को देखकर उसकी पीड़ाओं को जान लेते है आपका निमित्त ज्ञान ऊँचे दर्जे का है।

पंडित अवस्था में–

गृहास्थावस्था के समय की घटना (फिरोजाबाद की) मुझे याद आती है – पं. नेमिचन्द जी (आचार्य श्री) हमारे घर पर प्रात: ५ बजे अचानक पधारे। मैंने कहा– "पधारिये मित्र" (मैं व नेमिचन्द्र एक साथ पढ़ते थे) प. ब्रह्मचारी ने कहा– मैं चंद्रप्रभु मंदिर जा रहा हूं वहीं पूजन करुंगा। मैंने प्रात: के भोजन की प्रार्थन की। ब्रह्मचारी जी ने कहा– मंदिर जी में पहला निमत्रण जिसका आयेगा मैं उसे ही स्वीकार करुंगा अभी कुछ नही कहता मदिर जी में मुझसे पहले पं. यतीन्द्र कुमार जी भी निमंत्रण देने पहुंच चुके थे परन्तु वे बाहर ही बातों में लग गये और मेरा निमंत्रण स्वीकृत हो गया।

ब्रह्मचारी घर पधारे। सहसा हमारी बहन को देखकर कहा– तुम्हारे दुपट्टे का कोना किसी ने काट लिया है। बहिन ने स्वीकार किया। तभी वे बोले "तुम्हारे एक बालकक की मृत्यु हो चुकी है" बहन ने यह भी स्वीकार कर लिया।

उसी समय एक महिला ने मकान में प्रवेश किया ब्रह्मचारी जी ने मुझे इंगत किया कि वही यह महिला है जिसने पल्ला काटा है। आपके निमित्त ज्ञान की प्रखरता ने सबको आश्चर्य में डाल दिया था।

शिक्षा गुरु के साथ–

एक बार आचार्य विमल सागर जी पंडित अवस्था में **स्व. आचार्य सुधर्म सागर जी** के साथ विहार कर रहे थे। झाबुआ मार्ग में कुछ दुष्ट लाठी डंडे आदि लेकर आचार्य श्री के नगर में प्रवेश के विरोध में उपसर्ग करने आये आचार्य श्री ने पं. नेमिचन्द (आ.वि.सा.) को कहा– पंडत जी हमारे कमण्डल की टोटी आगे करके जल की धारा छोड़ते हुये णमोकार मत्रोच्चारण करते हुए चलते चलो ध्यान रखना की जल की धारा अखंड चलती रहे जैसे ही दुष्ट लोग आचार्य संघ के सामने आये आचार्य ने अपनी पिछी को घुमाया और आगे बढ़ गये।

इधर आचार्य श्री पर उपसर्ग करने वाले आपस में लड़ पड़े और आचार्य श्री संघ सहित निर्बाध रुप से गंतव्य तक पहुंच गये। ऐसे थे आपके शिक्षा गुरु।

दीक्षा गुरु के साथ–

आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी महाराज के साथ आप क्षुल्लकांवस्था में निडर हो विहार कर रहे थे कि बड़वाह का भयानक जंगल आया। रात्रि निकट थी गुरु महाराज के आदेश से भयानक जगल में सर्वसंघ ने पड़ाव डाला श्रावकों ने बहुत इन्कार किया पर धीर वीर आचार्य श्री न माने।

सामयिक को बैठते समय आचार्य श्री ने दिशाबंधन किया तथा एक रेखा खींची सभी त्यागियों को आदेश हुआ कि पूर्व रात्रि इस रेखा के बाहर कोई नहीं जायेगा।

प्रातः चार बजे पास में स्थित जलाशय पर पानी पीने के लिये एक बड़ा शेर दहाड़ता हुआ आया और आचार्य श्री को नमन कर शांत भाव से लौट गया। कुछ समय पश्चात एक चीता भघर्रा और बच्चों सहित एक रीछनी भी क्रम से आई सभी जलाशय पर पानी पीकर शान्त भाव से चले गये किसी ने आचार्य श्री व संघ पर उपसर्ग नहीं किया ऐसी थी आचार्य श्री के दीक्षा गुरु महावीर कीर्ति जी की महिमा।

दुष्ट सब शांत हो गये–

फिरोजाबाद में मेला लगने वाला था परन्तु मेला स्थल पर तेल मिल मालिक ने कब्जा कर लिया था जैन समाज मे तहलका मच गया 144 धारा लागू हो गई आदोलन समाप्त होने पर मेले का आयोजन हुआ। इस अवसर पर आचार्य श्री विमल सागर जी को लाने की योजना जैन समाज ने बनायी। बाहुबली दि.जैन नई बस्ती के मंदिर के शिखर पर कलशारोहण का निश्चय भी नयी बस्ती कीपंचायत ने किया।

मैं और महेन्द्र कुमार आचार्य श्री का आर्शीवाद लेने पहुंचे आचार्य श्री के दर्शन अलीगढ़ के रास्ते पर हुए। हमने कहा गुरुदेव ! रोकड़ निल है काम बड़ा है और समय भी कम है आपके आर्शीवाद के इच्छुक हैं।

आचार्य श्री ने आर्शीवाद दिया– चिन्ता न करो सब ठीक हो जायेगा और इस अवसर पर पधारने की स्वीकृति दे दी। जब आचार्य श्री आ रहे थे तब ब्राम्हणों ने संघ पर उपसर्ग के लिये बदमाशों को बुलाया आहारोपरान्त ब्राह्मण लोग आचार्य श्री से शास्त्रार्थ करने लगे पर उनके सामने सबको चुप रहना पड़ा।

तभी एक दुष्ट व्यक्ति को उग्रसेन जी राजपुर वालों ने पास बुलाया और पूछा "तू यहाँ क्यों आया है" (वह व्यक्ति आचार्य श्री के पास के गाँव का था) उसने सारी बात बताई। उग्रसेन जी ने कहा– तुम नहीं जानते हमारे समाज वाले बाबा है वह फौरन सभी को लेकर चला गया।

पश्चात बदमाशों की टोली ने गाँव से आगे आकर दोनों दिशाओं से संघ को घेर लिया तथा भद्द वचन कहने लगे।

तभी आचार्य श्री ने बदमाशों के सरदार का नाम लेकर बुलाया। सरदार अपना नाम सुनते ही हक्का–बक्का रह गया, ये मुझे कैसे जानते है। वह शीघ्र आया और आचार्य श्री के चरणों में क्षमा याचना कर नतमस्तक हो गया।

उपसर्ग करने वालों ने अपना सिर झुकाया और अपने दुखों से छूटने का उपाय आचार्य महाराज से पूछा। सबने आपकी शक्त्यानुसर त्याग लिया। मद्य, मांस, मधु को छोड़ा तथा आगे कभी भी दिगम्बर साधुओं पर उपसर्ग नहीं करने का नियम लिया। उसके बाद आचार्य श्री फिरोजाबद पधारे। आपके सानिध्य में मेला और कलशारोहण का कार्य सानन्द सम्पन्न हुआ। कलशारोहरण का जुलूस इतना शानदार निकला कि उस जैसा आज तक मैंने नही देखा।

इस प्रकार ऐसी घटनाएँ आपके जीवन मे आज भी हो रही हैं। आपके गुणों को लिखने में ब्रहस्पति भी समर्थ नहीं है।

पानी मीठा हुआ–

अभी विहार करते हुए आचार्य श्री संघ सहित सिहोनिया अतिशय क्षेत्र पर पधारे वहाँ दो गाँवों के कुएँ का खारा पानी आपके द्वारा दिये गये गधोदक को डालने से मीठा हो गया।

ऐसे परमपूज्य आचार्य शिरोमणि के चरणों में शत–शत वन्दन करते हुए दीर्घायु की कामना करता हूं।

सरल तरल है साधु सुजान

❑ सन्ध्या जैन "श्रुति" जबलपुर

बहु भाषाओं के ज्ञाता
आगम में अनुपम निष्णात
प्रवचन शैली प्रखर आपकी
सारी दुनिया में विख्यात
ज्ञान के सागर सन्मार्ग दिवाकर
है विपुल आपका आत्म ज्ञान।

✪

सृजन शील संयमी साधु तुम
कान्ति झलकती श्री मुख पर
अविरल धारा निकल पड़ी है
ज्ञान धर्म की मिलजुल कर
चिन्तन प्रिय मुनि विमल सागर जी
हो अमर आपका यह संधान

✪

सरस्वती के वरद् पुत्र हो
आचार्यों में श्रेष्ठ महान
सरल तरल है साधु सुजान
श्रद्धा नत है मेरा प्रणाम

❑ ❑ ❑

वात्सल्य मूर्ति

ब्र.रवीन्द्र कुमार शास्त्री

मेरा अपना सौभाग्य है कि विगत अनेक वर्षों से वात्सल्य मूर्ति आचार्य श्री के दर्शनों का लाभ लेता हुआ अपना जीवन सार्थक कर रहा हूँ। जब भी दर्शन के लिये जाता हूँ प्रसंन्नता से जी भर जाता है और प्राप्त होता है मंगल आर्शीवाद एवं मार्गदर्शन।

पिछले चार वर्ष पूर्व जम्बूद्वीप स्थल पर कुछ दिन आचार्य श्री को ससंघ लाने का भी शुभ अवसर प्राप्त हुआ था। आचार्य श्री 1 मार्च 1987 से 17 मार्च 1987 तक जम्बूद्वीप स्थल पर रहे और पावन मूर्ति के सानिध्य में यहाँ पंचकल्याणक महोत्सव तथा दीक्षा समारोह सम्पन्न हुआ। यह प्रथम अवसर था एक साथ 17 दिन तक आचार्य श्री का सानिध्य मेरे लिए प्राप्त करने का। सभी जीवों में किस प्रकार समता की दृष्टि रखकर वात्सल्य देते हैं यह प्रत्यक्ष में यहाँ अनुभव किया था किसी के प्रति राग एवं किसी के प्रति उपेक्षा करके संघ का संचालन सम्भव नहीं हैं, इसलिए आचार्य श्री अपने सभी शिष्यों के प्रति एवं संसार के समस्त प्राणियों के प्रति विशेष प्रीति–अप्रीति न करके सबको समान रुप से आर्शीवद प्रदान कर स्वल्याण के साथ पर कल्याण द्वारा जन–जन के प्रिय एवं श्रद्धा के पात्र बन गये हैं। ऐसा वात्सल्य मूर्ति आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज के चरणों में उन जैसे कुछ गुणों के अविर्भाव हेतु स्वकल्याण की मंगल भावना के साथ नमन करते हुए उनके दीर्घ जीवन की कामना करता हुआ श्रद्धा सुमन समर्पित कर रहा हूं तथा यही भावना करता हूं कि इसी प्रकार संसारी प्राणियों को आपका आर्शीवाद व वरद्‌हस्त चिरकाल तक प्राप्त होता रहे। ■

विमल–भांवाजलि

❑ श्रीमती संतोष मोतीवाला, एडवोकेट

हे विमल वारिधि, सुधा–उदधि
वात्सल्य दिवाकर तुमको आज नमन है।
जय–जयवन्त सदा तुम होव
महके आज चमन हैं।
मेरे अन्तर की वह धारा
वो फूल किनारों को तोडे
तट बन्ध सभी मेरे छूटे
भव बंधन सभी मेरे छूटे
कण–कण को मैं भांक रहा था
हर क्षण तेरा प्रतिविम्ब मिला
मैं शांति–सुधा की धारा पाने
तेरे पल–पल वो संजो रहा
तेरी पावन मुस्कान का सम्बल पाकर
मेरा नश्वर जीवन सार्थक हो पावें
यही मूक कामना है मम अर्न्तमन की।

१०८ सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज एक महानिधि

❑ जैनेन्द्र कुमार जैन, फिरोजाबाद

विरले ही मनुष्य होते हैं जो सन्मार्ग का मार्ग बताते हैं। देखा जाय तो सौर मण्डल के दिवाकर में ताप और उष्णता देखने को मिलती है किन्तु **सन्मार्ग दिवाकर आचार्य एवं सिद्धपुरुष विमलसागर जी महाराज** में रंचमात्र भी क्रोध संताप नहीं है। धन्य हैं पिताश्री बिहारीलाल जी और धन्य हैं माताश्री कटोरीबाई जिन्होंने हमें एक अनोखा नक्षत्र दिया है जिसने संसर सागर से तिरने और उभरने का सन्मार्ग बताया है।

आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी महाराज एक चतुर पारखी (जौहरी) थे उन्होंने पं.श्री नेमिचन्द्र रुपीरत्न को परखा और उनमें रत्नत्रय के संस्कार पिरो दिये जो स्वयं मार्ग जानता है। वह अन्य को मार्ग दर्शन दे सकता है सम्यगदर्शन, सम्यकज्ञान, और सम्यगचारित्र धारण कराने वाले **आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी महाराज** आपके दीक्षा गुरु रहे जिन्होंने अपनी सभी कलायें और संस्कार अपने शिष्य में समाहित कर दिये जो रत्नत्रय धारी दिगम्बर मुनि में होने चाहिये। जिस प्रकार एक कुम्भकार कच्ची मिट्टी के घड़े को एक हाथ से हथौड़ी लेकर धीरे-धीरे चोट मारता है और दूसरे हाथ से अन्दर से सहारा देता है मिट्टी के घड़े को हथौड़े की चोट उसका वर्धन करती है और चोट भी नहीं पहुंचाती है। घड़ा भी टूटता नही है। शनैःशनैः घड़ा बड़ा होता जाता है और आग तपन घड़े को पक्का कर देती है। उसी प्रकार दीक्षा गुरु ने अपने शिष्य **मुनि श्री विमलसागर जी** में सभी गुण भर दिये जो एक चारित्रधारी दिग.जैन मुनि में होने चाहिये। पंचाचार्य का स्वयं पालन करते हुए अपने शिष्य को पंचाचार्य के पालनें के लिए प्रेरणा देने का कार्य किया आचार्य श्री ने तथा रत्नत्रय के पालन करने के नियमों को कठोरता से पालन करने को बाध्य किया। उनके अंतरंग में परोपकार के भाव थे, बाहर में कठोरता के भाव प्रकट होते थे। वास्तव में कठोर हृदय सरल हृदयी होता है।

सच्चा गुरु वही है जो अपने शिष्य को कठोरत के भाव दिखाकर अर्न्तरंग में सरलता के भाव बनाकर उसका उपकारी बनता है। शिष्य की ताड़ना और प्रताड़ना गुरु का कार्य होता है।

जो शिष्य गुरु की ताड़ना व प्रताड़ना सहन कर लेते हैं वे पक्के ज्ञानवान और धैर्यवान बन जाते है। जिस प्रकार कच्ची मिट्टी का घड़ा पानी भरने से टूट जाता है किन्तु वही घड़ा तपन के बाद पक्का हो जाता है पानी उसका कुछ बिगाड़ नहीं सका है। जो शिष्य गुरु का आदर करते हैं वे सभी कुछ गुरु से प्राप्त कर लेते हैं चिन्तन और मनन के बाद वे सभी गुण युक्त हो जाते हैं। आचार्य श्री ने अपने गुरु के वचनों का अनुसरण और अनुकरण कर संसार निवृत्ति का मार्ग चयन किया और उग्र साधना का मार्ग अपनाया।

अपने गुरु की गुरु परम्परा को निभाते हुए, सन्मार्ग दिवाकर की अपने में ज्योति जलायी। आपक सम्बोधन और करुणा समस्त प्राणियों के लिये परमहितैषी बन जाता है। आप सन्मार्ग दिवाकर के समान प्रतिभावान और विभूतिवान निधि के रुप में हैं।

प्रायः यह देखा जाता है विद्वान शास्त्रज्ञ भी कभी चारित्रधारण की बात सोचते नहीं हैं। ऐसा आचार्य श्री के लिये नहीं कहा जा सकता है। स्वयं उन्होंने चारित्र धारण किया अपितु अपने अन्य सहपाठी विद्वानों को भी चारित्र धारण करने के लिए प्रेरित किया। पूर्व नामधारी राजकुमार शास्त्री

कोटला आचार्य श्री की सर्वप्रेरणा से **आचार्य पार्श्वसागर नामक** चारित्रधारी दिगम्बर जैन संत बन गये संलेखना सहित समाधिमरण को प्राप्त कर उन्होंने जीवन सफल बनाया उसी श्रंखला में अनेकों भव्य जीवों ने अपना आत्मकल्याण कर अपना जीवन सफल बनाया।

सन्मार्ग की इस कड़ी में अनेकों महान आत्माओं का आपके द्वार आत्मकल्याण हुआ। **आचार्य 108 सन्मति सगर जी महाराज जो (आचार्य) महावीर कीर्ति महाराज के पुत्राधिकारी बने गणनी आर्यिका का 105 विजयमति माता जी, 108 उपाध्याय भरतसागरजी महाराज** आपकी ही करुणा की देन हैं। जिस प्रकार एक दीपक हजारों दीपकों को प्रकाशवान बनाकर अपने अस्त्वित्व को नहीं खोता है। सन्मार्ग के प्रणेता आचार्य श्री ने अपने सभी शिष्यों मे प्रगाढ़ संस्कार दिये हैं जो आपने अपने गुरु से विरासत में प्राप्त किये हैं। सरलता, करुणा, ममता आदि गुण आपकी पहचान हैं।

अपनी कठोर वाणी से प्राणीमात्र को कष्ट पहुचाया जाना सम्भव है। किन्तु अपनी प्रिय वाणी से और संबोधन से किसी की वेदना को दूर करना बड़ी जटिल बात है। आचार्य श्री अपने प्रिय वचनों से कष्ट निवारक और ह्रदयस्पर्शी, महत्व का कार्य करते है। आपने कितने ही भव्य आत्माओं को अपने सम्बोधन से उत्कृष्ट चारित्र के मार्ग पर अग्रसर बनाया है। तथा वर्तमान में भी उसी उपकार की धारा आपके द्वारा प्रवाहित बनी हुई है। कोई भी कैसा भी प्राणी आता है वह आपकी शरण मे आपका शरणागत बन जाता है।

आपकी करुणामयी मुस्कान संसार ताप का हरण करती है तथा सभी संकटों का निवारण करती है। कोई भी कैसा भी व्यथित ओर संकट मे प्राणी आता है आपकी प्रसन्न मुद्रा उसके सब रोग–शोक व्यथा को नष्ट कर देती है। आपके पास आने वाला कभी निराश नहीं लौटता है। एक बार के सम्बोधन से उसे अलौकिक सन्मार्ग दिवाकर की किरणें उसके सताप को हरण कर लेतीं हैं।

संसार बंधन से विरक्ति और निवृत्ति आपके सम्बोधन से संभव है। कितने ही भव्य प्राणी आपके सम्बोधन से संसार सागर से फिर गये और कितने ही भव्य आत्माएं तिरने का आपके सन्मार्ग दिवाकर की किरणों से प्रकाशित अपनी आत्माओं का उद्धार कर रहे हैं। विरक्ती के मार्ग पर पहुंचना आपका एक सरल गुण है।

चारित्र चक्रवर्ती, करुणामूर्ति, वात्सल्य रत्नाकर, कलिकाल सर्वज्ञ सन्मार्ग दिवाकर की इस 79 वीं जन्म जयन्ती महोत्सव को हम **सन्मार्ग दिवाकर दिवस** के रुप मे मनाने जा रहे है। हम सब का यह परम कर्त्तव्य है कि हम ऐसा कोई सन्मार्ग मय कृत्य करे जो सन्मार्ग के रुप मे स्थायी बन सके। सन्मार्ग दिवाकर दिवस पर हम प्राणीमात्र के लिये परोपकार के सत्कार करके उन्हें सन्मार्गमय बना सकें। प्रथम त्यागी व वृतियों के लिये आश्रम बीमार व असहाय साधर्मी बन्धुओं के लिये उपचार व चिकित्सा सहायता प्रदान करना। अज्ञान तिमिर के निवारण के लिए शिक्षा और हितोपदेश की व्यवस्था करना। असहाय व दीन–हीन व्यक्तियों के लिये अभयदान की व्यवस्था करना तथा साधर्मी उद्धमियों के उत्कर्ष का मार्ग बनाना तथा साधर्मी बन्धुओ के पति संगठन और अपनत्व की भावना रखाना पुनीत उद्देश्य होना चाहिए संसार के समस्त प्राणीमात्र जीव एकूदसरे के परोपकारी बन अपना आत्मकल्याण करें यही हमारा सन्मार्ग दिवस का औचित्य होगा।

वात्सल्य रत्नाकर ग्रन्थ का प्रकाशन आचार्य श्री के वास्तविक गुणों का सूर्य को दीपक दिखाने सद्दश्य है। वास्तव में जितने भी गुणों का बखान किया जाये उतने अपर्याप्त हैं। लेखनी उन शब्दों का वर्णन नहीं कर सकती है जो आचार्य श्री में सन्मार्ग के गुण विद्यमान हैं।

मैं परम कृपालु सन्मार्ग दिवाकर श्री के चरणों में अपनी विनयान्जली प्रस्तुत करता हुए शत शत नमन और त्रिकाल वंदन करता हुआ नमोस्तु करता हुए वीर प्रभु से कामना करता हँ कि आप हजारों–हजारों वर्ष हमारे बीच स्वस्थ्य व निरोग बने रहते हुए हमारे जीवन में सन्मार्ग की किरण बिखेरते रहें। ❑ ❑ ❑

जैन जागृति

❑ छोटे लाल जैन एम.ए. एल.एल.बी., झांसी

"सच मानो विजय एकता की होगी तुम आपस में जरा एक होकर देखो।"

★

जैन-धर्म और जैन जाति हित, सब अपना सहयोग बढ़ाओ।
सब मतभेदों से दूर रहो, और अब एक पंक्ति में आ जाओ।
जैन-संघ बनाकर, इस दुनिया को, अपनी शक्ति दिखा दो।
रहो प्यार से सभी जैन, कटुता को दूर भगादो।
सच मानो विजय एकता की होगी, तुम आपस में जरा एक होकर देखो।।

★

तुम पंथवाद की जहरीली बारूद, न बिखराओ प्यारे।
अब आपस में लड़ने का, सब जोशीला नाटक बंद करो।
जो प्यार कुछ लोगों की, गुमराही मुट्ठी में है तड़फ रहा।
अब उसके सारे बंधन खोलो, उसको स्वछंद करो।
सच मानो विजय एकता की होगी, तुम आपस में जरा एक होकर देखो।।

★

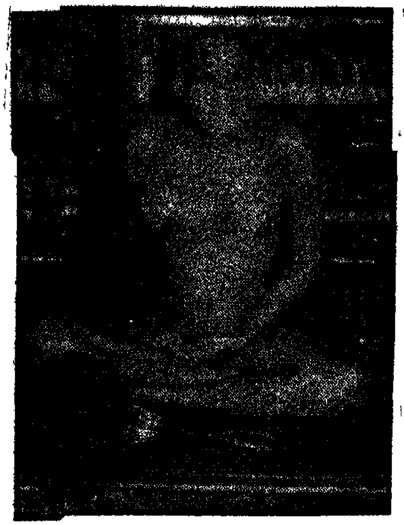
संगठन घृणा से नहीं, आदर और प्यार से होता है।
सुख शांति देश से नहीं, मानवता और प्यार से पलते हैं।
आदमी देह से नहीं, नेह और मैत्री से जीता है।
अब सब कटु भावों को त्याग, जरा निकट आकर देखो।
सच मानो विजय एकता की होगी, तुम आपस में जरा एक होकर देखो।।

★

श्वेताम्बर और "दिगम्बर", जैन धर्म की दो शाखाऐं जानो।
"पंचामृत" हो या हो 'जलाभिषेख' तुम इसमें भेद नहीं मानो।
कम्प्यूटर युग की इस दुनिया में, तुम आगे बढ़ते जाओ।
सब मतभेदों से दूर रहो, और एक पंक्ति में आ जाओ।
सच मानो विजय एकता की होगी, तुम आपस में जरा एक होकर देखो।।

★

अब लड़ने का है समय नहीं, और भेदभाव मत तुम जानो।
मनभेद मिटादो सारे अब, सब भाई-भाई को पहिचानो।
वैज्ञानिक युग की इस बेला में, कर्मठ तुम हो जाओ।
हर जैन हमारा बन्धु है, सब जैन एक कहलाओ।
सच मानो विजय एकता की होगी, तुम आपस में जरा एक होकर देखो।।



परमपूज्य आचार्य 108

श्री विमल सागर जी महाराज

के युगल चरणों में सविनय

नमोस्तु

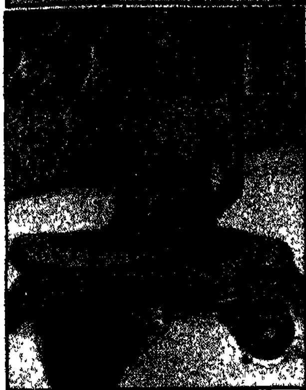
卐

विनीत

सरदार मल निर्मल कुमार पाटनी

ए–51 जनता कालोनी

जयपुर (राज.)



आचार्य विमल सागर जी संघ परिचय

❑ *महावीर प्रसाद जैन सेठी*

जिन आगम के प्रचार प्रसार हेतु, श्रमण नायक जो कि **आचार्य** के नाम से जाने जाते हैं **तप–त्याग–संयम–अपरिग्रह, अचौर्य, ब्रह्मचर्य** आदि का श्रावकों को ज्ञान देते तथा इन सबसे अभिभूत हो जो श्रेष्ठी श्रावक ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार कर श्रमण पथ का राही बनना चाहता है, उसे श्रमण पाठशाला में श्रेणियों की कसौटी में परख कर श्रमण बनाकर अपना संघ का विस्तार करते रहते हैं। श्रमण निर्माण की यही प्रक्रिया कालान्तर से चली आ रही है . और आज भी प्रचलित है। ऐसे मुनिराज आगम मे वर्णित 28 मुलगुणों, के धारक होते है।

दिगम्बर जैन साधु आरम्भ और परिग्रह से रहित होते है। तिल तुष मात्र परिग्रह भी उनके पास नहीं होता है, जो कि दिगम्बर शब्द की सार्थकता को स्वमेव सिद्ध करता है। दिगम्बर साधु धीरता/गम्भीरता के धारक होते है। वे सदैव शत्रु–मित्र में सद्भाव रखते है। इन्हे किसी से भय नही होता है। हाँ! उन्हें भय तो है , मात्र अशुभ बन्ध का, पाप सहित जीवन न बन जाये। और इसी भय से भयभीत हुए ये मुनिराज निरन्तर आत्म ध्यान की और उन्मुख होते रहते हैं। **इनकी वृत्ति सदैव सम्यग्दर्शन/ सम्यग्ज्ञान एवं सम्यचारित्र के लिए ही होती है जैन दर्शन में रत्नत्रय कहा गया है।**

श्रमणों के नायक आचार्य कहलाते हैं, जो साधुओं के 28 मूलगुणों के अतिरिक्त निम्न आठ गुणों के भी धारक होते है–

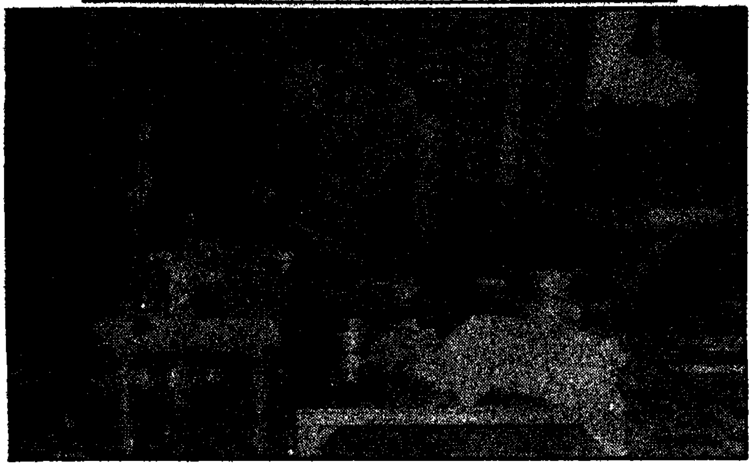
(1) आचार (2) आधार (3) व्यवहार (4) प्रकार (5) आयापाय दर्शन (6) उत्पीड़न (7) अपरिश्रावित्व (8) निर्यापकत्व।

साधुओं मे जो साधु बहुज्ञानी हैं, वे जिनके हृदय मे जीवों के प्रति ज्ञानमय सत्यमार्ग के उपायों से उनके दुख दूर करने की भावना भी रहती है, ऐसे साधु आचार्य परमेष्ठी द्वारा "पाठक" संज्ञा से उद्घोषित होते हैं। ऐसे साधु को **उपाध्याय परमेष्ठी** कहा जाता है। उपाध्याय परमेष्ठी अन्य साधु परमेष्ठी के समान ही होते है किन्तु उनमे मात्र यह विशेषता रहती है कि वे किसी योग्य बेला मे साधुओं को पढाते हैं– शिक्षा देते है।

चारित्र चक्रवर्ती सन्मार्ग दिवाकर–वात्सल्य भावी देश के वयोवृद्ध आचार्य परमपूज्य 108 श्री विमल सागर जी ने, फल्गुन सुदी त्रयेदशी वि.स 2009 मे मुनि दीक्षा अगिकार कर श्रावक जगत को जिन धर्म के प्रति आस्था जगाने का अद्वितीय कार्य किया है। आपके संघ में **उपाध्याय परमेष्ठी पूज्य 108 श्री भरत सागर जी महाराज** है जो आचार्य श्री के दिशा निर्देशन मे पूरे सघ को ज्ञान बोध दे रहें है। वर्तमान में **निमित्त ज्ञान भूषण आचार्य श्री 108 विमलसागर जी महाराज** एवम् साथ चातुमार्स कर रहे संघ का परिचय निम्न प्रकार है–

5 महाव्रत–	अहिंसा/ सत्य/ अचौर्य/ ब्रह्मचर्य/ परिग्रह/ त्याग।
5 समिति–	ईर्या/ भाषा/ एषणा/ आदान निक्षेपण/ व्युत्सर्ग।
5 इन्द्रिय निरोध–	स्पर्श/ रसना/ घ्राण/ चक्षु/ कर्ण।
6 आवश्यक–	समता/ स्तुत/ वदना/ प्रतिक्रमण/ प्रत्याख्यान/ कायोत्सर्ग।
7 अन्यगुण–	केशलोच/ अचेलकत्व/ अस्नानव्रत/ अदन्तधावन/ क्षितिशयन/ स्थितिभोजन/ एव भक्ति
(28 मूलगुण)	

आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज



जन्म स्थान	–	कोसमा (जिला एटा) उ.प्र.
जन्म तिथि	–	आश्विन कृष्ण सप्तमी वि.स. 1973
पिता का नाम	–	श्री लाला बिहारी लाल जी
माता का नाम	–	श्रीमती कटोरी बाई
गृहस्थावस्था का नाम	–	नेमीचन्द
जाति	–	पद्मावती पुरवाल
शिक्षा संस्था	–	मोरेना विद्यालय (म.प्र.)
शिक्षा	–	शास्त्री (हिन्दी, संस्कृत एवं प्राकृत भाषा)
यज्ञोपवीत सस्कार	–	**स्व. चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्ति सागर जी** महाराज से – फिरोजाबाद में।
शूद्र जल त्याग	–	**आचार्य कल्प श्री चन्द्र सागर जी से।**
दो प्रतिमा व सात प्रतिमा व्रत	–	**आचार्य श्री वीर सागर जी से।**
क्षुल्लक दीक्षा	–	बड़वानी में **आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी से**
	–	नामकरण – **क्षु. वृषभ सागर जी**
	–	दीक्षा तिथि– आषाढ़ सुद्री 5 वि.स. 2007 सन् 1950।
ऐलक दीक्षा	–	धर्मपुरी में **आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी से**
	–	नामकरण– **सुधर्म सागर जी**
	–	दीक्षा तिथि – माघ सुद्री द्वादशी, विं.सं. 2008 सन् 1951।
मुनिदीक्षा	–	**सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पर, आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी महाराज से**
	–	नामकरण – **मुनि विमल सागर जी**

	–	दीक्षातिथि – फाल्गुन सुदी त्रयोदशी वि.सं. 2009, सन् – 1952।
आचार्य पद	–	टूण्डला नगर (उ.प्र.) में वि.सं. 2017 सन् 1960।
कुल चातुर्मास	–	45 क्षुल्लक/ ऐलक/ मुनि अवस्था में 10 आचार्य पद में 35
त्यागी जीवन में व्रत व उपवासों की संख्या	–	3266 उपवास ● चारित्र शुद्धिव्रत के .... 1234 ● जिन सहस्र नाम व्रत के .... 1008 ● तीस चौबीसी के .... 720 ● भक्ताम्बर ....48 ● तत्वार्थ सूत्र ....10 ● जिनगुण सम्पत्ति व्रत के ....63 ● कर्मदहन के .... 148 ● णमोकार मत्र के ....35 3266 **इसके अतिरिक्त कवलचन्द्रायण, मुक्तावली, अष्टान्हिका, कनकानवली, दशलक्षण आदि अनेक व्रत आपने किये है।**
आजीवन त्याग	–	अन्न का त्याग (11 वर्ष से) तथा घी–नमक–दही व तेल का त्याग।
रत्नत्रय से विभूषित	–	● मुनिदीक्षा 40 ● आर्यिका दीक्षा 24 ● ऐलक दीक्षा 1 ● क्षुल्लक दीक्षा 21 ● क्षुल्लिका दीक्षा 17 **इसके अतिरिक्त आपने हजारों नर–नारियों को संयम पथ में देशव्रती बनाया।**
उपाधियाँ		● **चारित्र चक्रवर्ती पद** –सन् 1962 बाराबंकी ● **निमित्त ज्ञानभूषण पद** – सन् 1973 में श्री सम्मेदशिखर जी ● **सन्मार्ग दिवाकर पद** – सन् 1979 में श्री सोनागिरि (म.प्र.) ● **करुणानिधि** – सन् 1983 में औरंगाबाद ● **वात्सल्य मूर्ति, अतिशय योगी**–सन् 1985 में लोहारिया (राज.) ● **कलिकाल सर्वज्ञ** – सन 1990 में श्री सोनागिरि में

इसके अतिरिक्त तीर्थोद्धारक/ चूड़ामणि/ खण्ड विद्या धुरन्दर उपाधियाँ भी आपको प्राप्त है।

संस्कृति (निर्माण) कार्य –
- समवशरण रचना – श्री सम्मेद शिखर जी।
- सरस्वती भवन – राजगृही।
- नंगानंग प्रतिमाएँ, चौबीसी यंत्र, श्रुत स्कंध, स्याद्वाद विमल ज्ञानपीठ सभा भवन, स्याद्वाद नगर–सोनागिरि (म.प्र.)
- सरस्वती भवन – गोमटेश्वर
- मानस्तम्भ व जिनबिम्ब – लोहारिया (राज.)

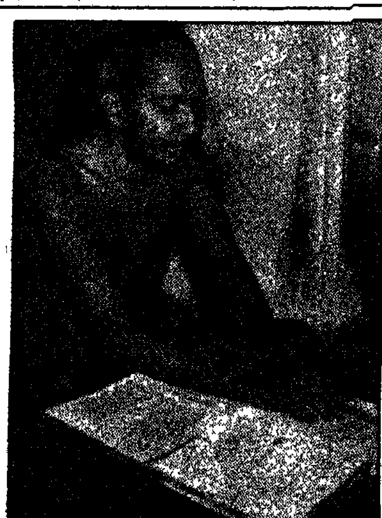
इसके अतिरिक्त अनेकों मन्दिरों व तीर्थ पर नवनिर्माण व जीर्णोद्धार का कार्य आपके उपदेश से भारत देश में हुआ है। आपके सानिध्य में भारत देश में अनेकों स्थानों पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा व वेदी प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई है तथा अनेकों जगह पाठशालाएं खोली गई है।

–विशेष–

हाल ही में तीर्थराज श्री सम्मेद शिखर जी में तीस चौबीसी का निर्माण आपके पावन सानिध्य में हो रहा है

साहित्य – श्री मज्जिन सहस्रनाम, वृहद सिद्ध चक्र मण्डल विधान (संस्कृत), श्री महामृत्युञ्जय पूजा विधान आदि।

[illegible]





उपाध्याय मुनि श्री 108 भरत सागर जी महाराज

जन्म स्थान – लोहारिया (राजस्थान)
जन्म तिथि – चैत्र शुक्ल 9 सं. 2006 (रामनवमी)
पिता का नाम – श्री किशन लाल जी
माता का नाम – श्रीमती गुलाब बाई
गृहस्थावस्था का नाम – छोटेलाल

क्षुल्लक दीक्षा – **अजमेर (राजस्थान) में आचार्य श्री विमलसागर जी से**
- नामकरण – **क्षु. श्री शान्ति सागर जी**
- दीक्षातिथि – 26 मई, 1969

मुनि दीक्षा – **तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर जी में आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज से।**
- नामकरण – **मुनि श्री भरत सागर जी**
- दीक्षातिथि – 6 नवम्बर 1972

उपाध्याय पद – **श्री सोनागिरि सिद्धक्षेत्र (म.प्र.) में आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज से।**
तिथि – 7 सितम्बर 1979।

साहित्य – अनुवाद – धम्म रसायणं
आप आगम के गूढ़ ज्ञाता है साथ ही श्रावकों के समझ में आने योग्य भाषा के उत्कृष्ट शिल्पकार है। आपके सानिध्य/ दिशा निर्देशन में आचार्य श्री 108 विमल सागर जी महाराज के हीरक जयंती प्रसंग पर 75 आगम ग्रन्थों के प्रकाशन का वन्दनीय कार्य सम्पन्न हुआ है। आपने गुरु के प्रति समर्पित श्रद्धाभाव से वात्सल्य रत्नाकर ग्रन्थ के प्रकाशन में अतुलनीय कार्य किया है जो ग्रन्थ को सदैव यादगार बनाने में सदैव वन्दनीय रहेगा।

सस्कृति (निर्माण) – **पूज्य गुरु श्री विमल सागर जी महाराज के सानिध्य में** हुऐ निर्माण, पंचकल्याणक, दीक्षा आदि कार्यों में आधार स्तम्भ के रूप में स्तुत्य कार्य किया है।

- **जो अंतर के अनन्त सौन्दर्य को नहीं पहिचानता, वह बाहर का सौन्दर्य दिखाता है।**

मुनिगण परिचय



मुनि श्री 108 अजित सागर जी

जन्म स्थान – सिंगपुर (सतना) म.प्र.
पूर्व नाम – हजारीलाल जी
पिता का नाम – लक्ष्मीचन्द जी
माता का नाम – चतुरी बाई
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री सन्मति सागर जी



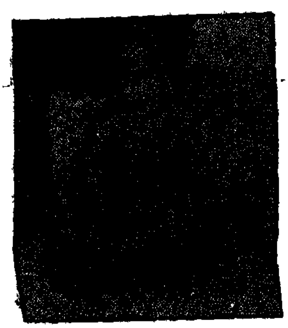
मुनि श्री 108 वीर भूषण जी

जन्म स्थान – सोड़ा (भिण्ड) म.प्र.
पूर्व नाम – पन्नालाल जी
पिता का नाम – श्री बिहारी लाल जी
माता का नाम – श्रीमती राजमति जी
दीक्षा स्थान – भातपुर
दीक्षा वर्ष – सन् 1980
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री निर्मल सागर जी



मुनिश्री 108 श्रवण सागर जी

जन्म स्थान – प्रतापगढ़ (राज.)
पूर्व नाम – मांगीलाल जी
पिता का नाम – श्री बृजलाल जी
माता का नाम – श्रीमती कमलाबाई
दीक्षा स्थान – पोदनपुर (बम्बई) महा.
दीक्षा वर्ष – सन् 1983
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



मुनिश्री 108 निरंजन सागर जी

जन्म स्थान – राठौड़ा (उदयपुर) राज.
पूर्व नाम – त्रिलोकचन्द जी
पिता का नाम – श्री चम्पालाल जी
माता का नाम – श्रीमती चूनी बाई
दीक्षा स्थान – लोहारिया (राज.)
दीक्षा वर्ष – सन् 1985
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



मुनिश्री 108 हेमन्त सागर जी

जन्म स्थान – डूंगरपुर (राज.)
पूर्व नाम – अमृत लाल जी
पिता का नाम – श्री कस्तूर चन्द जी
माता का नाम – श्रीमती सूरज देवी
दीक्षा स्थान – सालुम्बर (राज.)
दीक्षा वर्ष – सन् 1986
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री अजित सागर जी



मुनिश्री 108 मधु सागर जी

जन्म स्थान – गंज बासौदा
पूर्व नाम – मक्खनलाल जी
पिता का नाम – श्री हजारीलाल जी
माता का नाम – श्रीमती दौलत बाई
दीक्षा स्थान – जयपुर (राज.)
दीक्षा वर्ष – सन् 1987
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



मुनिश्री 108 विराग सागर जी

जन्म स्थान – रामगढ़ (राज.) डूंगरगढ़
पूर्व नाम – विरधीचन्द जी
पिता का नाम – श्री कस्तूर चन्द जी
माता का नाम – श्रीमती माणक देवी
दीक्षा स्थान – भीण्डर
दीक्षा वर्ष – सन् 1988
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री अजित सागर जी



मुनिश्री 108 विष्णु सागर जी

जन्म स्थान – कुसुमा (एटा)
पूर्व नाम – मुरारी लाल जी
पिता का नाम – श्री प्यारेलाल जी
माता का नाम – श्रीमती कुन्था देवी
दीक्षा स्थान – फिरोजाबाद (उ.प्र.)
दीक्षा वर्ष – सन् 1986
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



मुनिश्री 108 चैत्य सागर जी

जन्म स्थान – इन्दौर (म.प्र.)
पूर्व नाम – शान्तिलाल जी
पिता का नाम – हीरालाल जी
माता का नाम – श्रीमती अनूप बाई
दीक्षा स्थान – श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष – 25 जुलाई 1993
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



मुनिश्री 108 अनेकान्त सागर जी

जन्म स्थान – लोहारिया (राज.)
पूर्व नाम – धूल जी
पिता का नाम – श्री जीवराज जी
माता का नाम – श्रीमती समनी बाई
दीक्षा स्थान – श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष – 1994
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी

आर्यिका संघ परिचय



आर्यिका 105 श्री आदिमति जी

जन्म स्थान – कामा
पूर्व नाम – मैना बाई
पिता का नाम – श्री सुन्दरलाल जी
माता का नाम – श्रीमती मन्नोबाई जी
दीक्षा स्थान – मुक्तागिरि
दीक्षा वर्ष – संवत् 2021
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी

आर्यिका 105 श्री कल्याणमती जी

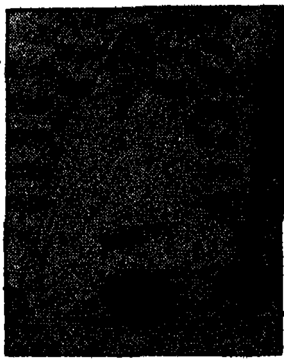
जन्म स्थान – मोबारिक पुर (उ.प्र.)
पूर्व नाम – बिलासवती
पिता का नाम – सम्मेसिंह
माता का नाम – समुद्री माई (शातिमती माता जी)
दीक्षा स्थान – अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी
दीक्षा वर्ष – सन् 1964
दीक्षा गुरु – आचार्य 108 श्री शिवसागरजी

आर्यिका 105 श्री पार्श्वमती जी



जन्म स्थान	–	पाणुंदा (उदयपुर)
पूर्व नाम	–	सागर बाई
पिता का नाम	–	श्री हुकमीचन्द जी
माता का नाम	–	श्रीमती केशर बाई
दीक्षा स्थान	–	श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष	–	संवत् 2039
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी

आर्यिका 105 श्री नन्दामती जी



जन्म स्थान	–	आहारन (आगरा)
पूर्व नाम	–	जयमाल देवी
पिता का नाम	–	श्री मुन्नीलाल जी
माता का नाम	–	श्रीमती कपूरी देवी
दीक्षा स्थान	–	श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष	–	वि.सं. संवत् 2039
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी

आर्यिका श्री 105 श्री सुरत्नमति जी



जन्म स्थान	–	गुणौर (म.प्र.) पन्ना
पूर्व नाम	–	सुधा देवी
पिता का नाम	–	श्री वेणी प्रसाद जी
माता का नाम	–	श्रीमती कमला देवी
दीक्षा वर्ष	–	5 फरवरी 1976
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री धर्मसागर जी

आर्यिका श्री स्याद्वादमती जी

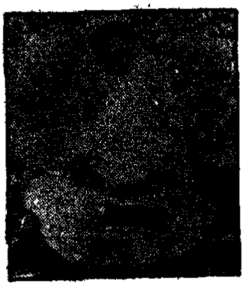


जन्म स्थान	–	इन्दौर
पूर्व नाम	–	एरावती
पिता का नाम	–	श्री धन्नालाल जी
माता का नाम	–	श्रीमती कमला देवी
दीक्षा स्थान	–	श्रवण बेलगोला (कर्नाटक)
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1981
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



आर्यिका श्री मोक्षमती जी

जन्म स्थान – एटा
पूर्व नाम – रमेश कुमारी
पिता का नाम – श्री शाहूलाल जी
माता का नाम – श्रीमती गुणमाल देवी
दीक्षा स्थान – आचार्य श्री विमल सागर जी



आर्यिका श्री मुक्तिमती जी

जन्म स्थान – औरंगाबाद
पूर्व नाम – मीना, बोहरा
पिता का नाम – श्री बंशीलाल जी
माता का नाम – जानकी देवी
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



आर्यिका 105 श्री प्रसन्नमति जी

जन्म स्थान – उरड़ परसिंहा (महा.)
पूर्व नाम – शकुन्तला देवी
पिता का नाम – श्री गुणधर जी
माता का नाम – श्रीमती झिंगबाई आगरकर
दीक्षा स्थान – श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष – 25 जुलाई 1993
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



आर्यिका 105 श्री श्रेष्ठमति जी

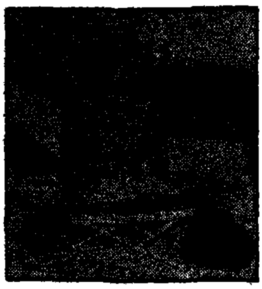
जन्म स्थान – अजमेर (राज)
पूर्व नाम – कुमुदिनी जैन
पिता का नाम – डॉ. पं. लाल बहादुर शास्त्री
माता का नाम – श्रीमती नीरजा देवी
दीक्षा स्थान – श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष – 27 मई 1993
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी

पूज्य क्षुल्लकगण परिचय



क्षुल्लक 105 श्री रतन सागर जी

जन्म स्थान	–	सोनी (भिण्ड) म.प्र
पूर्व नाम	–	रामचरण जी
पिता का नाम	–	श्री श्यामलाल जी
माता का नाम	–	श्रीमती राजमती
दीक्षा स्थान	–	सुजानगढ़ (राज)
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1968
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लक 105 श्री अकम्पन सागर जी

जन्म स्थान	–	पचोखरा ग्राम
पूर्व नाम	–	महिपाल
पिता का नाम	–	श्री झामनलाल जी
माता का नाम	–	श्रीमती सुख देवी
दीक्षा स्थान	–	फिरोदाबाद (उ प्र)
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1986
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लक 105 श्री जितेन्द सागर जी

जन्म स्थान	–	छिकाऊ (आगरा) उ प्र
पूर्व नाम	–	प्रेमचन्द
पिता का नाम	–	श्री अनन्तराम जी
माता का नाम	–	श्रीमती जानकी देवी
दीक्षा स्थान	–	फिरोजाबाद
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1986
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लक 105 श्री सम्मेदशिखर सागर जी

जन्म स्थान	–	पचोखरा ग्राम
पूर्व नाम	–	ऋषभचन्द्र जी
पिता का नाम	–	श्री झम्मनलाल जी
दीक्षा स्थान	–	श्रीमती सम्मेद शिखरजी(बिहार)
दीक्षा वर्ष	–	6 जून 1993
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लक 105 श्री कुन्दकुन्द सागर जी

जन्म स्थान	–	हरदुआ (खमरिया) म.प्र.
पूर्व नाम	–	बाबूलाल जी
पिता का नाम	–	श्री रघ्घीलाल जी
माता का नाम	–	श्रीमती उजियारी बाई
दीक्षा स्थान	–	टीकमगढ़
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1990
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विराग सागर जी

क्षुल्लक 105 श्री स्वयम्भू सागर जी

जन्म स्थान	–	फिरोजाबाद
पूर्व नाम	–	सोहनलाल जी बजाज
पिता का नाम	–	श्री बद्री प्रसाद जी
माता का नाम	–	श्रीमती मथुरा देवी
दीक्षा स्थान	–	श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष	–	चेत सुदी 5 सं. 2051
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लक 105 श्री धैर्य सागर जी

जन्म स्थान	–	पमारी ग्राम (आगरा) उ.प्र.
पूर्व नाम	–	धन्य कुमार जैन
पिता का नाम	–	श्री मुन्शीलाल जी जैन
माता का नाम	–	श्रीमती गुणमाला देवी जैन
दीक्षा स्थान	–	श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष	–	सवत् 2051
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी

पूज्य क्षुल्लिका गण परिचय

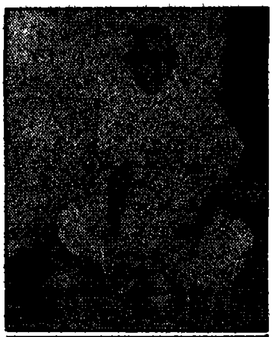
क्षुल्लिका 105 श्री विजयश्री जी

जन्म स्थान	–	बांदा (उ.प्र.)
पूर्व नाम	–	शांती बाई
पिता का नाम	–	श्री हीरालाल जी
माता का नाम	–	श्रीमती इन्द्राणी बाई
दीक्षा स्थान	–	श्रवण बेल गोला
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री देश भूषण जी



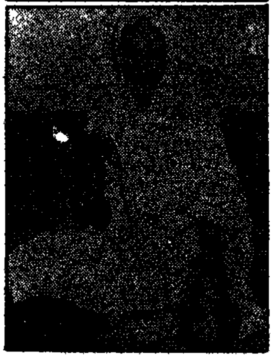
क्षुल्लिका 105 श्री श्रीमती जी

जन्म स्थान	–	रुकड़ी ग्राम (कोल्हापुर)
पूर्व नाम	–	मालती बाई
पिता का नाम	–	श्री नेमिनाथ जी
माता का नाम	–	श्रीमती सोना बाई
दीक्षा स्थान	–	राजगृही जी
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1971
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लिका 105 श्री शीतलमती जी

जन्म स्थान	–	इन्दौर (म.प्र.)
पूर्व नाम	–	सज्जन बाई
पिता का नाम	–	श्री चौथमल जी
माता का नाम	–	श्रीमती केशर बाई
दीक्षा स्थान	–	जयपुर (राज.)
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1969
दीक्षा गुरु	–	आचार्य देशभूषण जी



क्षुल्लिका 105 धैर्यमती जी

जन्म स्थान	–	हूपरखेड़ा (महाराष्ट्र)
पूर्व नाम	–	ललिता बाई
पिता का नाम	–	श्री गनपत राय जी
माता का नाम	–	श्रीमती शारदा बाई
दीक्षा स्थान	–	गिरनार जी
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1984
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लिका 105 श्री उद्धारमती जी

जन्म स्थान	–	औरंगाबाद
पूर्व नाम	–	रेखा
पिता का नाम	–	श्री दामोदर जी
माता का नाम	–	श्रीमती बसन्ता बाई
दीक्षा स्थान	–	सोनागिरि जी (म.प्र.)
दीक्षा वर्ष	–	सन् 1989
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लिका 105 श्री विवेकमती जी

जन्म स्थान – बाढ़
पूर्व नाम – जनमती
पिता का नाम – श्री नन्द कुमार जी
माता का नाम – श्रीमती दुलारा देवी
दीक्षा स्थान – सोनागिरी जी (म.प्र.)
दीक्षा वर्ष – सन् 1988
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी

क्षुल्लिका 105 श्री विजयश्री जी

जन्म स्थान – समदौरी (महाराष्ट्र)
पूर्व नाम – उज्वला
पिता का नाम – श्री भूपाल
माता का नाम – श्रीमती वसन्ती देवी
दीक्षा स्थान – सेन्धी (कुथलगिरि)
दीक्षा वर्ष – विजय दशमी सं. 2047
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री बाहुबलि सागर जी



क्षुल्लिका 105 श्री आनन्दमती जी

जन्म स्थान – नागौर (राजस्थान)
पूर्व नाम – कु नन्दा पाटनी
पिता का नाम – स्व. श्री बालचन्द जी पाटनी
माता का नाम – श्रीमती सुरजी देवी
दीक्षा स्थान – श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष – 25 जुलाई 1993
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी



क्षुल्लिका 105 श्री चेतनमती जी

जन्म स्थान – बम्होरी डूण्डा (सागर) म.प्र.
पूर्व नाम – चन्दाबाई
पिता का नाम – श्री प्यारेलाल जी
माता का नाम – श्रीमती रुकमनबाई
दीक्षा स्थान – श्री सम्मेद शिखर जी
दीक्षा वर्ष – सं. 2051
दीक्षा गुरु – आचार्य श्री विमल सागर जी

संघ संचालिका ब्रह्मचारिणी चित्रा बाई

श्रीमती ब्रह्मचारिणी चित्राबाई का जन्म हुपरी (दक्षिण) निवासी श्री पारस जी के घर में हुआ था। आपकी माताजी का नाम कृष्णा बाई गड़करी था। परिवार के धार्मिक वातावरण से अभिभूत आपका आरम्भिक जीवन धर्म के प्रति श्रद्धा का बिन्दु बना। आपका विवाह कोल्हापुर निवासी श्री रामचन्द्र जी दिगे के साथ हुआ था। आपको एक पुत्र की प्राप्ती हुई। अशुभ कर्मोदय से आपको वैधव्य दुख सहना पड़ा। विपरीत परिस्थतियों में आपने अपने पुत्र को सुसंस्कारों से ज्ञान दिलाते हुए स्वयं साधुओं की सेवा मे जीवन व्यतीत करने लगी।

आप विगत पैंतीस वर्षों से देश के वयोवृद्ध आचार्य, चारित्र चक्रवर्ती, निमित्त, वेत्ता, परमपूज्य **आचार्य श्री 108 विमल सागर जी मुनिराज** के संघ का संचालन योग्यता एवं तत्परता से कर रही है। गुरुवर आचार्य प्रवर के आशीष से आप आचार्य संघ की व्यवस्थापिका का सेवा कार्य सम दृष्टि पूर्वक रात–दिन लगन से करती रहती है।

परमपूज्य आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज के संघ में अनेक ब्रह्मचारी–ब्रह्मचारीगण बहिनें हैं जो आचार्य श्री के मार्गदर्शन में अपना जीवन सफल कर रहे है। इनमें प्रमुख है– ब्र ब प्रभा पाटनी/ ब्र.ब. सरोज जी/ ब्र.ब. कुसुम जी/ ब्र.ब. कमला बाई जी (भिण्ड)/ ब्र.ब. चन्दाबाई जी/ ब्र.ब. कमलाब्राई जी (उदयपुर)/ ब्र.ब उर्मिला जी/ ब्र.ब. कैलाशी बाई जी/ ब्र.ब्रा. कमलाबाई जी (मुरैना)/ ब्र.ब. पुतली बाई जी/ ब्र.ब. कमलाबाई जी (सावला)/ ब्र.ब. रेश्माबाई/ ब्र.ब. कुकड़ा बाई/ ब्र.ब्र लालमणि जी एवम् ब्रह्मचारी जयमल जी। ❑❑❑





आर्यिका प्रमुख श्री सुपार्श्वमती जी एवम् उनका संघ

बालपन में ही वैधव्य को प्राप्त हुई एक अनपढ़ बालिका। जिसे न ही सासारिक रीति–रिवाजों का ज्ञान था और न ही अपने वैधव्यपन का। घर के सदस्यों के आदेशानुसार घर के एक कोने मे पड़ी हुई वह बालिका जिसे शायद स्वयं ही कोई विषाद था पर घर के अन्य लोगों के समक्ष उसके शून्य भविष्य की चिन्ता थी। उसके समक्ष एक लम्बे जीवन का अन्धकार व्याप्त था और शायद उसे इतना भान भी न था कि वैधव्य क्या है? उसके लिए तो बस एकाकी जीवन बिताने की व्यवस्था थी। उस बालिका को **पू.आ. इन्दुमती जी** को सान्निध्य प्राप्त हुआ और उनका सान्निध्य उनका मातृवत् स्नेह उनका दृढ अनुशासन, आगम के प्रति पूर्ण श्रद्धा उसके जीवन मे एक अविस्मरणीय प्रतिभा का पदार्पण कर सका।

राजस्थान के एक ग्राम **मैनसर** में श्री हरकचन्द जी चूडीवाल के घर मे जन्मी वह बालिका जिसका नाम भॅवरी रखा गया, जिसके लिए माता ने न जाने कितने स्वप्न सजोये होंगे पर शायद उसके भाग्य में इन सासारिक सुखों का अभिशाप (हाँ अभिशाप ही कहना होगा) होना नहीं था। उसका भाग्य तो उसे उस उच्च पद पर आसीन करने वाला था, जिसे पाने का श्रेय यदा–कदा यत्किंचित् को ही होता है। तत्कालीन रीति–रिवाजों के अनुसार भँवरी का विवाह भी नागौर निवासी श्री इन्द्रचन्द्र बड़जात्या से हुआ, पर यह विवाह शायद नाम मात्र के लिए था क्योंकि दो माह के अल्पकाल मे ही भँवरीबाई को भाग्य ने, वैधव्य की भँवर ने निगल लिया और शोक संतप्त परिवार कर्मों की गति न्यारी'' पर मौन होकर रह गया।

कालचक्र घूमता गया और **पू.आ. 108 वीरसागर जी महाराज** के सघ का आगमन हुआ जिसमें **पू.आ. इन्दुमती जी** ने भॅवरीबाई को धर्म मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया, जिनके सहज प्रस्ताव पर उसके कदम माताजी के साथ हो पड़े, यह जाने बिना कि मै अशिक्षित हूँ अज्ञानी हूँ और कहाँ यह साधना का मार्ग, लेकिन उसे पता ही नहीं था, कि **परम पूज्य इन्दुमती माता जी** का साथ उसके जीवन में एक चमत्कार एव आलोक लेकर आया हुआ था। फिर आगे जाकर वही हुआ और शायद उस बालिका का यह वैधव्य ही उसे आज इस परम पूज्य आर्यिका पद को धारण कराने मे निमित्त बना। एक सुखद सयोग उस बालिका को मिला, उसको जिसने पाठशाला का द्वार भी नहीं देखा था। एक तरफ उसके पाप कर्म का उदय होकर निर्जरा हुई और और दूसरी ओर उस पुण्य कर्म का उदय हुआ जिसकी कल्पना उस समय किसी ने भी न की होगी। रास्ते के पत्थर को एक पारखी मिला, जिसने उस पत्थर को एक ऐसा आकार दिया और उस आकार ने लाखों लाख मानवों के हृदय में दृढ़ अध्यात्म की भावना प्रवाहित कर दी।

उत्कृष्ट लगन, गहन चिन्तनशीलता एवं संसार के प्रति नीरसता ने उसे आज नारी समाज, जैन समाज और विद्वानों की श्रेणी में सर्वोत्कृष्ट स्थान दिलाया। एक अनपढ़ बाल जीवन मे वैधव्य

को प्राप्त हुई एक अपेक्षिता ने, संयम का कंटकपूर्ण मार्ग अपनाकर, आत्म-प्रेरणा पाकर दीक्षा लेने की इच्छा प्रकट की और आर्यिका इन्दुमती जी का आर्शीवाद पाकर **आचार्य वीरसिंधु महाराज से** दीक्षा ग्रहण की। दीक्षित होने के बाद चारित्र्य और तप त्याग की अग्नि में अपने आपको तपाकर इतना परिपक्व कर लिया है कि आज सारा समाज उनके चरणों में नतमस्तक है और इन्हें गणिनी आर्यिका का पद प्रदान किया।

पूज्य आर्यिका श्री की निरन्तर अध्ययनशीलता, गहन चिन्तन, सारी शंकाओं को सहज ही निर्मूल कर देता है। उनकी ममतामयी सूरत अनायास साधर्मी बन्धुओं में, उनके प्रति श्रद्धा भाव उत्पन्न करती है। उनकी ज्ञान गंगा में डूबे रहने की लालसा बनी रहती है।

पूज्य आर्यिका इन्दुमती जी का सान्निध्य पाकर आज समाज के समक्ष पूज्य गणिनी 105 आर्यिका सुपार्श्वमती जी के रूप में देश के पूर्वांचल में ससंध बिहार कर रही हैं। देश का यह भाग जहाँ कभी किसी जैन साधु का विहार नहीं हुआ, जहाँ के लोगों को कभी साधु-साध्वियों का सत्संग प्राप्त नहीं हुआ, उस दुर्गम प्रदेश में पूज्य **स्वर्गस्थ आर्यिका इन्दुमती जी** ने ससंघ पदार्पण किया था और **पूज्य आर्यिका सुपार्श्वमती जी** ने उसी दुर्गम प्रदेश में पुनः पर्दापण कर जैनागम के सिद्धान्तों की ज्ञान वर्षा की और उस सारे प्रेदश का समाज चाहे व जैन हो या अजैन हो, सभी पूज्य माता जी के प्रवचनों से प्रभावित हुये हैं। जहाँ एक ओर पूज्य आर्यिका श्री का जैनागम में दृढ श्रद्धान, चारित्र में दृढता तथा तप त्याग में कठोर अनुशासन है, वहीं दूसरी ओर उनकी वाणी में मधुरता एव सर्वसाधारण के प्रति समता भाव है। उनकी प्रवचन शैली में अनोखा आकर्षण है जो जैन-अजैन सभी श्रोताओं के हृदय में भीतर तक प्रवेश कर आत्म-कल्याण की ओर अग्रसित होने की प्रेरणा देता है। आज के इस भौतिक युग में मानव सभ्यता एवं सुधारवाद की आड़ लेकर विधवा विवाह, विजातीय विवाह, भोग सामग्री के पीछे अंधाधुन्ध दौड़ रहा है। दूसरी ओर इसी युग में ये आर्यिकाश्री ससार की वास्तविक दशा से भिज्ञ होकर मानव को इनसे दूर रहने की प्रेरणा दे रही हैं, जो कि अनुशसनीय है।

आर्यिकाश्री की अपनी गुरु माता के प्रति अगाढ़ श्रद्धा एवं भक्ति उनकी शिष्यता के गुण को पूर्णता देती है। उनकी निम्न रचना उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है–

"गुरु की महिमा वरणी न जाये, गुरु गोविन्दा से बढ़कर है।
गुरु की सेवा में निज जीवन, अर्पण हो पाया अवसर है।।
मन भावन मेरी गुरु माता, आदर्श बनी नारी जग में।
पाया मैंने मातृत्व सदा, तब चरणों की पावन रज में।।
गुरु का आशीष मिला मुझको, जो मेरे मन को हितकर है।
गुरु की सेवा में निज जीवन, अर्पण हो पाया अवसर है।।
अवलम्बन तेरा पूज्य मात, मेरा जीवन आधार बना।
तेरे आँचल की छाया में, पथ का पत्थर आकार बना।।
तेरी अमृत वाणी, मेरे आकुलित हृदय को सुखकर है।
गुरु की सेवा में निज जीवन, अर्पण हो पाया अवसर है।।
मैं भूल नहीं पाती, तेरी उस सौम्य मूर्ति, उस दृढ़ता को।
तेरी उस त्याग तपस्या को, उस निज जननी-सी ममता को।।

तेरा सामीप्य सुरुचिकर था, तेरा वियोग अब दुखकर है।
गुरु की सेवा में निज जीवन, अर्पण हो पाया अवसर है।।

आर्यिकाश्री द्वारा पूज्य इन्दुमती जी के यम सल्लेखन व्रत के समय की गई वैय्यावृत्ति एक उदाहरण बनकर अमिट छाप छोड़ गई है, अपने हाथों को ही मल–मूत्र का पात्र बनाकर, जरा भी मन में घृणा भाव न लाते हुये, दिन को दिन नहीं समझा, और रात को रात नहीं। अन्तिम क्षण तक पूज्य गुरु के समीप रहकर, पलपल में उन्हें सचेत करती रहीं, मानों अपना यही एक लक्ष्य बना लिया था, उस समय उनका साहस, धीरता, सेवा भाव, संबोधन उनकी तत्परता देखते ही बनती थी। एक तरफ गुरु के बिछड़ने का भावी वियोग था, तो दूसरी ओर अपने कर्तव्यों का भाव। अपने कष्टों की परवाह न करते हुये **पूज्य इन्दुमती जी के समाधिमरण** के समय उनके द्वारा किया गया वह संबोधन, वह वैय्यावृत्ति युगों–युगों तक इतिहास के पृष्ठों में अंकित रहेगी।

भारतवर्ष में जैन समाज में विद्यमान आर्यिकाओं में शिथिलाचार विरोधी एव आचार्य समर्थक तपोनिष्ठ साधिका के रूप में **पूज्य सुपार्श्वमती माताजी** सदैव गणनीय हैं। सुधारवाद के नाम पर फैल रहे शिथिलाचार का आर्यिका जी ने घोर विरोध किया है, उनका यही कहना है आगम के विरुद्ध कोई कार्य नहीं होना चाहिये, चाहे कितने भी संकट सामने आवें, कितने ही प्रलोभल दिये जायें, हमे अपने शास्त्रों के विरोध में नहीं जाना है। उन्होंने "कहानजी पंथ" का विरोध किया और आगम के प्रतिकूल मान्यताओं के प्रति संघर्षरत् हैं। सांसारिक सुखों की क्षण भंगुरता पर अपनी गहनतम विचारशैली के माध्यम से उन्होंने कहा है कि–

"जीवन की सफलता भोगो की मात्रा पर निर्भर नहीं है। भोग जीवन का स्वार्थ पूर्ण और संकीर्ण मार्ग हैं, ऐसा जीवन उच्चतर आर्दश का प्रतनिधित्व नहीं कर सकता, क्योंकि सर्वोत्कृष्ट ऐश्वर्य भी धीरे–धीरे नष्ट हो जाता है। चक्रवर्ती की संपदा का भी नाश होते देर नहीं लगती। अनायास प्राप्त होने वाले देव तथा भोगभूमियों के भोग भी स्थिर नहीं हैं। तो इन कठिनाई से प्राप्त होने वाले भोगों की बात ही क्या है? प्राप्त हुये भोगों को मानव भोग ही नहीं पाता है कि उसे संसार छोड़कर चला जाना पड़ता है। सांसारिक सुख, ऐश्वर्य और इन्द्रिय भोग क्षण भंगुर हैं। इससे प्राणी को कभी तृप्ति नहीं होती है। इसलिए सुख और शान्ति के इच्छुक मानव को भोगों का त्याग कर संयम को स्वीकार करना चाहिये। संयम ही आत्मोत्थान का समीचीन मार्ग है।"

उक्त सत् विचार **पूज्य आर्यिका सुपार्श्वमती** जी के स्वानुभव अमृत रूप की एक बुंद है। ऐसे गहन अध्ययन, दृढ़ संयम, आगम अनुकूल आचरिक हैं। **पूज्य आर्यिका सुपार्श्वमती** जिन्होंने ऐसे दुर्गम क्षेत्रों में पर्दापण करके जैन समाज में व्याप्त बुराईयों, शिथिल आचरण को झकझोर कर उनमें आगम के अनुकूल एक नई चेतना जागृत की है।

आर्यिकाश्री का गहन अध्ययन उनके ज्ञान को उजागर करता है, उनके स्वानुभव में उसकी छाप स्पष्ट झलकती है। उन्होंने अनेक शास्त्रों की टीकायें कीं, अनुवाद किये, चरित्र कथायें लिखीं, नारियों के उत्थान हेतु, उनके चारित्रिक विकास हेतु साहित्य सृजन किया। **"नारी का चातुर्य"** इसका जीता–जागता प्रमाण है। **"दशधर्म"** में उन्होंने उत्तम क्षमादि दशधर्मों का विभिन्न कथानकों सहित बहुत ही श्रेष्ठ विवेचन किया है, दश धर्मों को समझने में यह पुस्तक उत्तम मार्ग दर्शिका है। उन्होंने **"परमाध्यात्म तरंगिणी", सागारधर्मामृत, अनगारधर्मामृत, तत्वार्थराजवार्तिक** जैसे क्लिष्ट ग्रंथों की हिन्दी टीकायें कीं, **भगवान् महावीर और उनका संदेश, नये विवक्षा, प्रणामांजलि,**

प्रतिक्रमण, मोक्ष की अमर बेल, रत्नत्रय तथा जैन कथा आदि अनके रचनायें लिखीं। **वरांग चरित्र** में संयम की महत्ता, अंतरंग एवं बहिरंग परिग्रह का त्याग कर राजकुमार वरांग द्वारा शिवरमणी का वरण करने का कथानक उनकी सरल एवं सुलभ शैली का प्रतीक है। जो रोचक होने के साथ-साथ मानव मन में धर्म के प्रति आस्था की ज्योति प्रज्जवलित करती है। पंचकल्याणक क्या है? उनकी क्या महत्ता है? इसका सटीक उत्तर उनकी रचना **''पंचकल्याणक क्यों किया जाता है''** में मिलता है। **''मेरा चिंतवन''** में तो उन्होंने अथाह ज्ञान को उड़ेल कर रख दिया है जो साक्षात् गागर में सागर है। ऐसे विचारों का सागर, ऐसे अनुभवों का सागर, जो सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक सभी क्षेत्रों से संबंधित होते हुये दिग्भ्रमित मानव को एक ऐसा आलोक प्रदान करता है जो इस भव सागर से वास्तव में पार ले जाने वाली नैया है।

भौतिक सुखों के पीछे अनवरत भागती इस भीड़ में आर्यिकाश्री का भोगों के प्रति उपेक्षित रूप संयम की साधाना, सृष्टि को आलोकित करने वाले सूर्य के समान प्रज्जवलित है। किंचित् भी शिथिलाचार को समर्थन न देना, विधवा विवाह और अंतर्जातीय विवाह का निर्बाध विरोध करने का साहसिक कदम उठाया आर्यिकाश्री ने। आगम के प्रति अटूट श्रद्धा, संयम में दृढ़ता, उत्कृष्ट चारित्र की धनी, परम विदुषी और साथ में वाणी में माधुर्य, शंकाओं का सहज समाधान, अंतर तक पैठ जाने वाले उपदेश यह सभी एक साथ विद्यमान हैं, पूज्य माताश्री में।

अनेक जैन स्त्री रत्नों के उदाहरण उनके सामने हैं, नारियाँ ही गिरते चरित्र को उठाने में समर्थ हैं। नारियाँ अपनी शक्ति पहचानें और मानव समाज का उत्थान करें।

प.पू. आर्यिका सुपार्श्वमति माताजी के साथ निम्न आर्यिका श्री अपना पावन वर्षायोग कर रही हैं-



आर्यिका 105 श्री विद्यावती जी

जन्म स्थान	-	नालगढ़ (राज.)
पूर्व नाम	-	शान्तिबाई
पिता का नाम	-	नेमीचन्द जी बाकलीवाल
माता का नाम	-	भवँरी बाई
दीक्षा स्थान	-	सुजानगढ़
दीक्षा वर्ष	-	सं. 2018 (कार्तिक शुक्ल-12)
दीक्षा गुरु	-	आचार्य 108 श्री शिव सागर जी



आर्यिका 105 श्री सुप्रभावती जी

जन्म स्थान	-	कुरुलवाड़ी (महा.)
पूर्व नाम	-	प्रभावती
पिता का नाम	-	नेमचन्द जी शाह
माता का नाम	-	रतन बाई
दीक्षा स्थान	-	कुम्भोज बाहुबली
दीक्षा वर्ष	-	संवत 2024
दीक्षा गुरु	-	मुनि श्री 108 समन्तभद्र महाराज



आर्यिका 105 श्री नेमवती जी

जन्म स्थान	–	त्रिलोकपुर
पूर्व नाम	–	देव कुमारी
पिता का नाम	–	सुखानन्द अग्रवाल
माता का नाम	–	जुगनू देवी
दीक्षा स्थान	–	कानकी (प. बंगाल)
दीक्षा वर्ष	–	2043
दीक्षा गुरु	–	ग. आर्यिका 105 श्री सुपार्श्वमती जी



आर्यिका 105 श्री भक्तिमती जी

जन्म स्थान	–	राजापुर (महाराष्ट्र)
पूर्व नाम	–	बसन्ती देवी
पिता का नाम	–	बंशीलाल जी
माता का नाम	–	कुसुम देवी
दीक्षा स्थान	–	विजयनगर कामरूप (आसाम)
दीक्षा वर्ष	–	सवंत 2048
दीक्षा गुरु	–	ग. आर्यिका 105 श्री सुपार्श्वमती जी

पूज्य गणिनी आर्यिका रत्न श्री सुपार्श्वमती माताजी के संघ में जबलपुर, मध्यप्रदेश नगर की विदूषी बाल ब्रह्मचारिणी बहिन डॉ. प्रमिला जैन भी है। आपने सन् 1971 में आर्यिका श्री सुपार्श्वमति माता जी के संघ में प्रवेश प्राप्त कर अपने जीवन को धर्ममार्ग की ओर आरुढ़ किया। आपका संक्षिप्त परिचय निम्न है–



जन्म स्थान	–	जबलपुर (म.प्र.)
नाम	–	डॉ प्रमिला जैन
पिताजी का नाम	–	स्व. श्री सिघई रामचन्द्र जी जैन
माताजी का नाम	–	श्रीमती पुत्ती बाई
गृह त्याग	–	सन् 1971
प्रेरणा	–	ग. आर्यिका १०५ श्री सुपार्श्वमतिजी

तीर्थराज श्री सम्मेद शिखर जी में पावस प्रवास कर रहे सभी आचार्यों/ मुनिराजों/ आर्यिकाओं/ ऐलक श्री/ क्षुल्लक श्री/ क्षुल्लिका श्री एवम् त्यागी–व्रतियों के पावन युगल चरणों में विनयमयि नमन – वंदन ❑❑❑



आचार्य 108 श्री विमल सागर जी और वर्षा योग

❑ श्रीमती सरोज बाकलीवाल

चातुर्मास का अर्थ चार महीने होता है। कोई भी चार माह चातुर्मास है– यही शब्दार्थ है इसका। किन्तु वर्षा योग में इस चातुर्मास से सम्बन्ध नहीं है वरन् सम्बन्ध है वर्षा ऋतु (श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक) के चार माह से। यह (वर्षा योग काल) ऐसा समय है कि इस समय सभी साधु वर्ग वर्षा के निमित्त से जीवों की विशेष उत्पत्ति हो जाने के परिणाम स्वरूप अहिंसा/ करूणा के पालन में एक स्थान पर रहते हैं अथवा जीवो की रक्षार्थ हेतु अपना स्थान नियत कर स्व–पर हेतु धर्म ज्ञान की प्राप्ति करते/ कराते हैं। ससारी प्राणी भी स्व कल्याण हेतु साधुओं के नियत स्थान पर जाकर ज्ञानार्जन कर अपना जीवन धन्य बनाने का प्रयास करते हैं।

परम पूज्य सन्मार्ग दिवाकर, चारित्र चक्रवर्ती, श्रमणोत्तम, निमित्त ज्ञान भूषण, कलिकाल **सर्वज्ञ श्री 108 आचार्य विमल सागर जी मुनि महाराज** ने सन् 1950 मे क्षुल्लक पद स्वीकार कर श्रमण पथ की यात्रा का शुभारम्भ बड़वानी (म.प्र.) से प्रारम्भ की। सन् 1950 से सन् 1995 तक आप 45 चातुर्मास–क्षुल्लक, ऐलक, मुनि, आचार्य पदों पर रहकर कर चुके हैं। स्व कल्याण के साथ–साथ, पर कल्याण के भाव आपके करूणामय हृदयस्थल में सदैव देखे जाते रहे हैं। आपका वात्सल्यमय व्यवहार स्वत: ही श्रावकों को अपने पास बुलाता रहता है। ऐसे परम तपस्वी ज्ञानभूषण आचार्य श्रेष्ठ के पावस काल एवं दीक्षित त्यागीवृन्दों की जानकारी प्रस्तुत है सुधी श्रावकों के लिए–

क्र.	स्थान	सन्	विक्रम संवत्	तत्कालीन दीक्षा–पद	विशेष
1	बडवानी	1950	2007	क्षुल्लक	
2	इन्दौर	1951	2008	ऐलक	
3	भोपाल	1952	2009	ऐलक	
4	गुनौर	1953	2010	मुनि	
5	ईशरी	1954	2011	मुनि	
6	पावापुरी	1955	2012	मुनि	
7	मिर्जापुर	1956	2013	मुनि	
8	इन्दौर	1957	2014	मुनि	
9	फल्टन	1958	2015	मुनि	
10	पन्ना	1959	2016	मुनि	
11	टूण्डला	1960	2017	आचार्य पद	
12	मेरठ	1961	2018	आचार्य	(चारित्र चक्रवर्ती पद से विभूषित)
13	ईशरी	1962	2019	आचार्य	
14	बाराबंकी	1963	2020	आचार्य	
15	बडवानी	1964	2021	आचार्य	(गुरु शिष्य का साथ में चातुर्मास)
16.	कोल्हापुर	1965	2022	आचार्य	

क्र.	स्थान	सन्	विक्रम संवत्	तत्कालीन दीक्षा–पद	विशेष
17.	सोलापुर	1966	2023	आचार्य	
18	ईडर	1967	2024	आचार्य	
19.	सुजानगढ़	1968	2025	आचार्य	
20	दिल्ली (पहाड़ी धीरज)	1969	2026	आचार्य	
21.	श्री सम्मेद शिखर जी	1970	2027	आचार्य	
22	श्री राजगृही जी	1971	2028	आचार्य	
23.	श्री सम्मेद शिखर	1972	2029	आचार्य	
24.	श्री सम्मेद शिखर	1973	2030	आचार्य	(निमित्त ज्ञानभूषणपद)
25.	श्री सम्मेद शिखर	1974	2031	आचार्य	(युगल आचार्य चातुर्मास गुरु शिष्य)
26.	श्री राजगृही जी	1975	2032	आचार्य	
27.	श्री सम्मेदशिखर	1976	2033	आचार्य	
28	श्री टिकैत नगर	1977	2034	आचार्य	
29.	श्री सोनागिरि	1978	2035	आचार्य	
30.	श्री सोनागिरि	1979	2036	आचार्य	(सन्मार्ग दिवाकर)
31.	नीरा (पूना)	1980	2037	आचार्य	
32.	श्री गोमटेश्वरबाहुबली श्रवण बेलगोला	1981	2038	आचार्य	(आ.कुन्थुसागर जी एवं ऐलाचार्य मुनिश्री विद्यानन्दजी के साथ)
33.	बम्बई–पोदनपुर बोरीवली	1982	2039	आचार्य	
34.	औरंगाबाद (सोना मगल कार्यालय)	1983	2040	आचार्य	(करूणानिधि)
35	श्री गिरनार जी	1984	2041	आचार्य	(आचार्य श्री निर्मलसागर जी के साथ)
36	लोहारिया (राज)	1985	2042	आचार्य	(वात्सल्यमूर्ति)
37	फिरोज़ाबाद	1986	2043	आचार्य	
38	जयपुर (खानिया)	1987	2044	आचार्य	
39	श्री सोनागिरि	1988	2045	आचार्य	
40.	श्री सोनागिरि	1989	2046	आचार्य	(युग प्रमुख चारित्रशिरोमणि)
41	श्री सोनागिरि	1990	2047	आचार्य	
42	श्री सोनागिरि	1991	2048	आचार्य	(कलिकाल सर्वज्ञ)
43.	श्री सम्मेद शिखर जी	1992	2049	आचार्य	
44	श्री सम्मेद शिखर जी	1993	2050	आचार्य	
45	श्री सम्मेद शिखर जी	1994	2051	आचार्य	

- आचार्य श्री ने अपने साधुत्व काल में चारित्र शुद्धि के 1234 उपवास/ जिन सहस्त्र नाम व्रत के 1008 उपवास/ तीन चौबीसी के 720 उपवास एवम् कनकवली आदि के अनेक व्रत किये हैं।
- आप क्षुल्लक अवस्था में क्षु.वृषभ सागर जी/ ऐलक अवस्था में ऐ.सुधर्म सागर जी के नाम से जाने जाते रहे हैं।
- वर्तमान में पूज्य आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज तीर्थराज श्री सम्मेद शिखर में पावस प्रवास ससंघ कर रहे हैं।
- त्याग–संयम–तपस्या के श्रेष्ठी निमित्तज्ञानी आचार्य श्री के चरणों में शत्–शत् नमन–वंदन

आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज द्वारा दीक्षित त्यागीवृन्दश्री

जिन संस्कृति के प्रचार–प्रसार हेतु आचार्य परमेष्ठी जिन दीक्षा देकर अपने संघ का निर्माण करते है। सभी दीक्षित साधु–साध्वियां आचार्य परमेष्ठी के सानिध्य में ज्ञानार्जन करते हैं तथा आगम के गूढतम अर्थों को समझकर उनका प्रचार करते हैं। आचार्य परमेष्ठी, वात्सल्य रत्नाकर परमपूज्य विमल सागर जी महाराज ने अपने श्रमण काल में वर्तमान तक ४0–मुनि दीक्षा/ 24–आर्यिका दीक्षा/ 1–ऐलक दीक्षा/ 21–क्षुल्लक दीक्षा/ 17– क्षुल्लिका दीक्षा एवं अनेक श्रेष्ठीयों को ब्रह्मचार्य व्रत दिये है। आपके द्वारा प्रदत्त दीक्षा जानकारी निम्नानुसार–

श्रमण गण

1.	श्री 108 मुनि सुवर्णसागरजी	(मेरठ में समाधि)
2.	श्री 108 मुनि चन्द्रसागरजी	(पुरलिया में समाधि)
3.	श्री 108 मुनि पार्श्वसागरजी	
4	श्री 108 मुनि अरहसागरजी	(श्री सम्मेदशिखर में समाधि)
5.	श्री 108 मुनि सुमतिसागरजी	(इशरी में समाधि)
6.	श्री 108 मुनि सम्भवसागरजी	(समाधि)
7	श्री 108 मुनि सन्मतिसागरजी	(आचार्यपद)
8.	श्री 108 मुनि वीरसागरजी	(श्री शिखरजी में समाधि)
9.	श्री 108 मुनि सुधर्मसागरजी	(श्री गजपंथा में समाधि)
10.	श्री 108 मुनि नेमीसागरजी	
11.	श्री 108 मुनि अनन्तसागरजी	(श्री शिखरजी में समाधि)
12.	श्री 108 मुनि सुव्रतसागरजी	
13.	श्री 108 मुनि विनयसागरजी	
14	श्री 108 मुनि विजयसागरजी	
15.	श्री 108 मुनि वासुपूज्यसागरजी	(श्री शिखरजी में समाधि)
16.	श्री 108 मुनि सकलकीर्तिजी	
17.	श्री 108 मुनि बाहुबलिसागरजी	(श्री सोनागिर में समाधि)
18.	श्री 108 मुनि भरतसागरजी	(उपाध्याय पद, सोनागिर में)
19.	श्री 108 मुनि शीलसागरजी	
20.	श्री 108 मुनि आनन्दसागरजी	(समाधि)
21.	श्री 108 मुनि मतिसागरजी	(समाधि)
22.	श्री 108 मुनि पार्श्वकीर्तिजी	(समाधि)
23	श्री 108 मुनि भूतबलीजी	
24.	श्री 108 मुनि पुष्पदन्तजी	(वर्तमान में आचार्य पद)
25.	श्री 108 मुनि वर्धमान सागरजी	(समाधि)

26. श्री 108 मुनि श्रवणसागर जी
27. श्री 108 मुनि विरागसागर जी
28. श्री 108 मुनि सिद्धान्तसागरजी
29. श्री 108 मुनि नेमीसागरजी
30. श्री 108 मुनि निरंजनसागरजी
31. श्री 108 मुनि अमरसागरजी
32. श्री 108 मुनि गोम्मटसागरजी (समाधि)
33. श्री 108 मुनि मधुसागरजी
34. श्री 108 मुनि देवसागरजी
35. श्री 108 मुनि सोमप्रभसागरजी (समाधि श्री सोनागिरि में)
36. श्री 108 मुनि सुहागसागरजी (समाधि)
37. श्री 108 मुनि विष्णुसागरजी
38. श्री 108 मुनि चिदानन्दसागरजी
39 श्री 108 मुनि चैत्य सागरजी
40. श्री 108 मुनि अनेकान्त सागरजी

श्री आर्यिका गण

1. श्री 105 आर्यिका सिद्धमतीजी (श्री शिखरजी में समाधि)
2. श्री 105 आर्यिका विजयमतीजी
3 श्री 105 आर्यिका आदिमतीजी
4. श्री 105 आर्यिका श्रेयमतीजी (श्री शिखरजी में समाधि)
5. श्री 105 आर्यिका सूर्यमतीजी (जयपुर में समाधि)
6. श्री 105 आर्यिका पार्श्वमतिजी
7. श्री 105 आर्यिका पार्श्वमतिजी (श्री शिखरजी में समाधि)
8. श्री 105 आर्यिका ब्राह्मीमतीजी
9. श्री 108 आर्यिका पार्श्वमति जी
10. श्री 105 आर्यिका जिनमतिजी (श्री गोमटेश्वर में समाधि)
11 श्री 105 आर्यिका नन्दामतीजी
12. श्री 105 आर्यिका सुनन्दामतीजी
13. श्री 105 आर्यिका पद्मावतीजी (श्री शिखरजी मे समाधि)
14. श्री 105 आर्यिका विमलावतीजी
15. श्री 105 आर्यिका भरतमतीजी
16. श्री 105 आर्यिका नंगमतीजी
17. श्री 105 आर्यिका गोम्मटमतीजी (श्री सोनागिरि मे समाधि)
18. श्री 105 आर्यिका स्याद्वादमतीजी
19. श्री 105 आर्यिका मनोवतीजी

20. श्री 105 आर्यिका धवलमतीजी
21. श्री 105 आर्यिका मोक्षमतीजी
22. श्री 105 आर्यिका मुक्तिमतीजी
23. श्री 105 आर्यिका प्रसन्नमति जी
24. श्री 105 आर्यिका श्रेष्ठमति जी

श्री ऐलक जी

1. श्री ऐलक वैराग्य सागरजी (समधि)

श्री क्षुल्लकगण

1. श्री 105 क्षुल्लक ज्ञानसागरजी
2 श्री 105 क्षुल्लक उदयसागरजी (समाधि)
3. श्री 105 क्षुल्लक रतनसागरजी
4. श्री 105 क्षुल्लक श्रुतसागरजी
5. श्री 105 क्षुल्लक जम्बूसागरजी
6 श्री 105 क्षुल्लक वृषभसागरजी
7. श्री 105 क्षुल्लक विपुलसागर जी
8. श्री 105 क्षुल्लक उत्साहसागरजी
9. श्री 105 क्षुल्लक तीर्थसागरजी
10. श्री 105 क्षुल्लक धवलसागरजी
11 श्री 105 क्षुल्लक मुक्तिसागरजी
12. श्री 105 क्षुल्लक स्याद्वादसागरजी
13. श्री 105 क्षुल्लक अकम्पनसागरजी
14. श्री 105 क्षुल्लक जितेन्द्रसागरजी
15 श्री 105 क्षुल्लक पवित्रसागरजी
16. श्री 105 क्षुल्लक मोतीसागरजी
17. श्री 105 क्षुल्लक नवीनसागरजी (समाधि–सोनागिरि)
18. श्री 105 क्षुल्लक स्वयंभूसागरजी
19. श्री 105 क्षुल्लक स्वभाव सागरजी
20. श्री 105 क्षुल्लक सम्मेदशिखर सागरजी
21. " " " धैर्य सागर जी

श्री क्षुल्लिका गण

1. श्री 105 क्षुल्लिका वैराग्यमतीजी (समाधि)
2. श्री 105 क्षुल्लिका संयमतीजी (समाधि)
3. श्री 105 क्षुल्लिका विमलमतीजी
4. श्री 105 क्षुल्लिका श्रीमतीजी

5. श्री 105 क्षुल्लिका जयश्रीजी
6. श्री 105 क्षुल्लिका चेलनामतीजी
7. श्री 105 क्षुल्लिका ज्ञानमतीजी
8. श्री 105 क्षुल्लिका कीर्तिमतीजी
9. श्री 105 क्षुल्लिका नियममतीजी
10. श्री 105 क्षुल्लिका धैर्यमतिजी (समाधि सम्मेदशिखर)
12. श्री 105 क्षुल्लिका सिद्धान्तमतीजी
13. श्री 105 क्षुल्लिका उद्धारमतीजी
14. श्री 105 क्षुल्लिका विवेकमतीजी
15. श्री 105 क्षुल्लिका तीर्थमतीजी
16. श्री 105 क्षुल्लिक आनन्दमती जी
17. श्री 105 क्षुल्लिका चेतनमती जी

युग - युग जीओ

■ *ब्र. बहिन प्रभादेवी पाटनी*

आचार्य विमलसागर गुरुवरजी, करते जनकल्याण।
वात्सल्य रत्नाकर गुरु की, करते जय-जयकार ॥टेक॥

मोहनी मूरत तेज तपस्या, लखते पाप नशाय।
विमल गुरु के चरण कमल की करते जय-जयकार ॥१॥

ध्यान मूर्ति करुणा के सागर अतिशय योगीराज।
निमित्त ज्ञानी विमल गुरु की, करते जय-जयकार ॥२॥

बाल ब्रह्मचारी यतिवरजी, विमल विशद हैं उदार।
शान्ति सुधारस के हो दाता, तुमरी जय-जयकार ॥३॥

जिन भक्ति के अमर भ्रमर हो, वन्दन करें त्रिकाल।
तीर्थोद्धारक चूड़ामणि की, करते जय-जयकार ॥४॥

पतितोद्धारक शिव के कर्ता, शिवपुर पंथीराज।
युग-युग जीओ मेरे गुरुवर करते जय-जयकार ॥५॥

रात्रिभोजन का त्याग: एक वैज्ञानिक अध्ययन

❑ डा. ज्ञानचन्द जैन

जैन साधु बार–बार उपदेश देते हैं कि जीवों की रक्षा हेतु हमें दिन में ही भोजन कर लेना चाहिए पर आधुनिक विज्ञान के पाठी कितने ही जैने ऐसे कुतर्क उठाते देखे–सुने जाते हैं कि प्राचीन काल में बिजली आदि के तेज प्रकाश का अभाव था, सो उस समय दिन में भोजन कर लेना उचित था, पर वर्तमान में अत्याधिक तीव्र प्रकाश के साधन उपलब्ध होने से रात में भोजन कर लेने से जीवों का घात नहीं होता। सो यह मन्तव्य दोषपूर्ण एवं अवैज्ञानिक है। इस तथ्य को भली प्रकार समझने हेतु हमें विभिन्न प्रकार के प्रकाशों का अध्ययन करना होगा।

प्रकाश हमें सूर्य से, चन्द्र से, ताराओं आदि से, बिजली के बल्ब से, गैस जलाने से, मोमबत्ती से एवं और भी कई साधनों से प्राप्त होता है। यह सभी प्रकार वास्तव मे इकाई या ELEMENT नहीं हैं, वरन् स्कंध या मिश्रण या COMPOUNDS हैं। एक तिकोने काँच या PRISM की सहायता से हम प्रत्येक प्रकाश के अंशों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। जब हम सूर्य के प्रकाश की एक किरण को प्रिज्म से गुजारते हैं तो वह किरण क्रम से नौ अंशों में विभाजित हो जाती है। इन नौ के नौ अशों को स्पेक्ट्रम (SPECTRUM) कहते हैं। इन नौ अंशों में बीच के सात अंशों को हम लाल–पीले–नीले–बैंगनी आदि रंग की किरणें के रूप में आँख से देख सकते हैं, पर किनारे के दो अंश देखे नहीं जा सकते। इन दोनों के सद्भाव का निर्णय इनकी गर्मी को महसूस करके किया जा सकता है। लाल रग की किरण के बाहर का अंश **इंफ्रारैड** (INFRARED) और बैंगनी किरण के बाहर का अश **अल्ट्रा वायलेट** (ULTRA-VOILET) कहा जाता है। बीच की सातों रंगीन किरणों के रंग ठीक वहीं हैं जो आकाश से बने इंद्रधनुष में होते हैं। यह सब की सब किरणें गरम नहीं हैं।

मनुष्य एवं पशुपक्षी व पेड़–पौधे जो भोजन खाते हैं, उसका पचना पूर्व कथित दोनों गर्म स्वभाव वाली किरणों पर निर्भर है। सूर्य के प्रकाश को छोड़कर जब अन्य स्रोतों से प्राप्त प्रकाशों का स्पेक्ट्रम बनाते हैं तो पाते हैं कि चाँद व तारों के प्रकाश में और ट्यूबलाइट आदि के प्रकाश में पूर्व कथित दोनों गर्म किरणें हैं ही नहीं। कार्बन या आर्क लैम्प के प्रकाश में, एक वेल्डिंग के प्रकाश में वे किरणें बहुत कम शक्ति की रहती हैं। कम शक्ति की इन्फ्रारैड और अल्ट्रा वायलेट भोजन पचाने में सहायक नहीं हो सकतीं।

रिफ्रैक्शन आफ लाईट (REFRACTION OF LIGHT) के कारण यह पाया गया है कि सूर्य अपने उदयकाल से एक मुहूर्त (48 मिनिट) पहले दिखने लग जाता है और वास्तविक अस्त–काल के एक मुहूर्त पश्चात् भी दिखता रहता है। अत: यह सिद्ध है कि उपरोक्त दोनों गर्म किरणें सूर्य के उदय के 48 मिनिट पश्चात पृथ्वी पर आती हैं और सूर्य–अस्त के 48 मिनिट पहले ही पृथ्वी पर आना बन्द हो जाती हैं। इन कारणों में से प्रत्येक जीव को दिन में खाना खा लेना चाहिये। सूर्य उदय के 48 मिनिट पश्चात और सूर्य अस्त के 48 मिनिट पूर्व खाना खा लेना चाहिये। ऐसा करने से भोजन पूर्ण रूप से हजम होगा और शरीर बलवान बनेगा।

आपने सुना होगा कि वैष्णव विद्वान् सूर्य ग्रहण के काल में भोजन करने का निषेध करते हैं। इस का वैज्ञानिक पहलू यही है कि सूर्यग्रहण के वक्त सूर्य से किसी भी गरम किरण की प्राप्ति नहीं होती। अतः हमारा हित इसी में है कि हम केवल सूर्य के सद्भाव में ही भोजन करें। कितने ही जैन रात में केवल अन्न से बने पदार्थों का ही त्याग करते हैं, **दूध के बने पदार्थ और फल मेवा आदि खा लेते हैं। सो कोशिश यह होनी चाहिये कि सभी खाद्यों का रात में त्याग रहे।**

यह धारणा भी भ्रामक है कि बल्ब आदि के अत्याधिक प्रकाश में जीवों का घात नहीं होता, सो रात को तेज रोशनी में भोजन कर लेना चाहिये। परीक्षण से पाया गया है कि कितने ही कीट पतंगे ऐसे हैं जो सूर्य के प्रकाश में सक्रिय नहीं होते। सूर्य–अस्त पर यह सक्रिय हो जाते हैं। रात में भोजन करने पर ये कीट–पतंगे भोजन में गिर कर स्वयं मरते हैं ओर हमारे स्वास्थ्य को हानि पहुंचाते हैं।

अस्तु: रात में भोजन करने से न केवल अन्य जीवों का घात होता है वरन् अपने निज स्वास्थ्य की भी हानि होती है। इसलिए रात्रिभोजन का त्याग करना चाहिये। इस त्याग से भी स्वास्थ्य की रक्षा तो होती ही है, साथ में **व्रताचारण के प्रति एक कदम भी उठेगा।** ❑ ❑ ❑

युद्ध में भी दया

नेपोलियन अपनी बड़ी सेना के साथ, जब आस्ट्रिया की राजधानी वियाना के पास पहुँचा तब उसने अपना एक दूत सन्धि प्रस्ताव लेकर नगर में भेजा। दूत को नगर के लोगों ने मार डाला। दूत के मर जानें की खबर जब नेपोलियन को मिली तो वह बहुत क्रुद्ध हो गया। अपनी फ्रन्सीसी सेना को उसने नगर घेरकर तोपों से गोले बरसाकर नगर के भवनों को नष्ट करने का आदेश दिया।

तोपों के गोले मध्य नगर के राजमहलों पर भी प्रहार करने लगे। सारा शहर तोपों के गोलों और आवाज व धुएँ से कांपने लगा। तभी नगर का मुख्य दरवाजा खुला। हाथ में सफेद झण्डा लिये एक दूत निकला। उसे नेपोलियन के सामने पहुँचा दिया गया। दूत ने कहा - सम्राट आपकी तोपों के गोले हमारे सम्राट के महल पर गिर रहे हैं, जहाँ सम्राट की पुत्री बीमार पड़ी है। यदि इसी प्रकार गोलीबारी होती रही तो सम्राट को महल खाली कर उनकी बीमार पुत्री को अन्यत्र ले जाना पड़ेगा।

नेपोलियन के सेना नायकों ने कहा कि - सम्राट हमें विजय मिलने वाली है, हमें आक्रमण में और तेजी लाना चाहिये। यह तो शुभ सन्देश हमें मिल रहा है। इस दूत को शीघ्र मार देना चाहिये। इससे हमारे दूत के मारे जाने का बदला भी मिल जायेगा।

नेपोलियन ने कहा - यह युद्धनीति की बात तो ठीक है, किन्तु मानवता का तकाजा है कि एक बीमार राजकुमारी पर दया की जाय। अपनी विजय चाहे खतरे में पड़ जाय परन्तु इस समय तोपों के मुंह तत्काल बन्द कर दिये जाय। दूत को नेपोलियन ने पुनः अपना पूर्व सन्धि प्रस्ताव लेकर वापस भेज दिया।

आस्ट्रिया के सम्राट ने जब नेपोलियन के द्वारा तोपों के बन्द करने और सद्भावनापूर्ण व्यवहार को दूत से सुना तो वह नेपोलियन से सन्धि करने को राजी हो गया।

एक निवेदन... आपसे

रतनलाल सी बाफणा, जलगाँव

महानुभाव

सादर–जयजिनेंद्र।

आपके यहाँ विराजित परम श्रध्देय अहिंसा धर्म की आराधना में तल्लीन सभी चारित्रात्माओं के पावन पवित्र चरणारविन्दो मे सादर सविधि सविनय वन्दना अर्जकर सुख साता पुछावें। गतवर्ष इस विषय को लेकर चातुर्मास काल मे पत्र दिया था, आज पुन: इस पत्र के माध्यम से मै जैन शासन के दसहजार साधु–साध्वियों का ध्यान देश मे बढ रही निरपराध व मासूम प्राणियों की हिंसा की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ, इस आशा के साथ कि इन मूक प्राणियों की दर्द भरी आवाज को जन 2 तक पहुँचाने मे वे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगे।

यो तो दुनिया के सभी धर्मों ने अपने 2 धर्मग्रन्थों मे अहिंसा धर्म की मुक्तकठ से प्रशंसा है परन्तु जैन धर्म मे जिस सूक्ष्मता व गहराई से अहिंसा का प्रतिपादन किया गया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। अहिंसा का जैन धर्म मे वही स्थान है जो शरीर में प्राणों का स्थान है। जैनों का कोई ऐसा शास्त्र या धर्मग्रन्थ नही है, जिसमें अहिंसा धर्म का वर्णन किसी न किसी रूप में न आया हो। व्दादशागी मे प्रथम स्थान को प्राप्त आचाराग सूत्र का प्रथम अध्ययन "शस्त्र–परिज्ञा" छ काय जीवों की हिंसा को त्यागने का प्रभावशाली ढग से निरूपण करता है। सूत्रकृताग में समस्त सिध्दान्तों का सार अहिंसा को बताते हुए कहा है कि

एव खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ कंचणं।
अहिंसा समयं चेव, एयावन्तं वियाणिया।।

अनगार धर्मामृत मे कहा है:–

सर्वेषां समयानां हृदयं, गर्भश्च सर्वशास्त्राणाम् ।
व्रतगुणशीलादीनाम् पिण्ड: सारोऽपि चाहिंसा।।

अर्थात - अहिंसा समस्त सिध्दान्तों का हृदय है, सर्वशास्त्रों का गर्भ है, व्रतादि का पिण्ड है, अत अहिंसा सारभूत है।

दशवैकालिक, प्रश्नव्याकरण, भगवती आदि सूत्रों में अहिंसा का विस्तृत विवेचन उसकी महता का प्रबल परिचायक है।

सम्पूर्ण जैन इतिहास अहिंसा व करुणा की करुण कहानियो से भरा पड़ा है। हमारे पूर्वजों ने एक 2 प्राणियों के प्राणों को बचाने के लिए अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया भरी जवानी में जहाँ सारा विश्व भौतिक सुखों के लिए लालयित रहता है, वहीं एक युवा राजकुमार ने केवल प्राणियो की रक्षा के लिये देव तुल्य भौतिक सुखों को ठोकर मार दी। अनेक महान जैन सन्तों ने बड़े–बड़े राजा महाराजाओं को अहिंसा धर्म का अनुयायी ही नहीं बनाया

अपितु उनके राज्य मे होने वाली पशुओं की हिंसा को बन्द करवा डाला। महामुनि गर्दभाली ने महाराजा संयति को, केशीस्वामी ने राजा परदेशी को, अनाथीमुनि ने मगध सम्राट श्रेणिक को,

आचार्य हेमचन्द्रजी ने परमार्हत राजा कुमारपाल को व जैन दिवाकर पू. चोथमलजी म.सा. ने महाराजा भूपालसिंहजी को इस ओर प्रेरित करके अनेकों प्राणियों को अभयदान दिलाने का महान कार्य किया।

ऋषि महार्षियों के इस अहिंसा प्रधान देश की वर्तमान दुर्दशा देखकर हृदय पीड़ा से व्यथित हो उठता है। पूर्व के कसाई उतने ही पशुओं को काटते थे जितने खाने वालों की आवश्यकता थी। आज तो मांस का निर्यात किया जा रहा है उससे प्रतिवर्ष 300 करोड़ की विदेशी मुद्रा प्राप्त की जा रही है। जिसे निकट भविष्य में 900 करोड तक बढाने का लक्ष्य है। 36 हजार छोटे बड़े कत्लखाने दिनरात पशुहत्या व्यवसाय में संलग्न है जिसमें देवनार ईदगाह, अलकबीर जैसे यांत्रिक कत्लखाने प्रतिदिन हजारों पशुओं को मौत के घाट उतारने में लगे हुए हैं। विदेशी मुद्रा कमाने की अन्धी दौड़ में सरकार देश की पशु संस्कृति को नष्ट करने मे जुटी हुई है। निर्यात का लक्ष्य पूरा करने के लिए आने वाले चंद दिनों में देश में ऐसे यान्त्रिक कत्लखाने लगाने की योजना है जिनका समय रहते समूचे अहिंसक समाज ने जबर्दस्त विरोध नहीं किया तो देश का समूचा पशुधन नष्ट कर दिया जावेगा। आने वाली पीढियों को उनके केवल नाम या चित्र ही पुस्तको में देखने और पढने को मिल सकेगे। पाकिस्तान में यह स्थिति आ चुकी है वहॉ सप्ताह में 2 दिन कत्लखाने बन्द करने पडते हैं पशुओ की कमी के कारण। ऋषियों के इस देश में क्या उनके रहते हुए यह पशुसपदा इसी तरह नष्ट कर दी जायेगी?

यह कहॉ का न्याय है कि अपना पेट भरने के लए किसी निरपराध का पेट काट दिया जाय। अपने जीवन के लिए किसी मासूम की जिंदगी समाप्त कर दी जाय। अपने स्वाद के लिए इन मूक प्राणियो का ससार उध्वस्त कर दिया जाय। अगर कोई जानवर आदमी को खाता है तो उसे आदमखोर कहते हैं तथा उसे मार देते है। परन्तु मनुष्य जो जानवरों को खाता है, उसे मनुष्य ही कहा जाता है, उसे कोई दण्ड नहीं दिया जाता यह कैसी विडम्बना है? जिन बिमारियों को हम जन्म देते हैं उन्हे मिटाने के लिए इन निरपराध प्राणियो की जान लेते हैं। हमें जीवन प्रिय है, क्या इन बेसहारा प्राणियों को जीवन प्रिय नही है? भगवान महावीर ने कहा है- सव्वे पाणापिआऊया-प्राण सभी को प्रिय है। सव्वे जीवावि इच्छन्ति जीविऊं न मरिज्झिऊ --सभी जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता, चाहे वह मनुष्य हो या पशु पक्षी। अगर इन्सान को कोई मारे तो उसे अपराधी घोषित किया जाता है पर अहिंसक जानवरों को मारना कोई अपराध नहीं माना जाता। जब तक इन्हे मारना कानूनन अपराध घोषित नहीं किया जाता यह विश्व शाति से नहीं रह सकता हम तो उस दिन का इतजार कर रहे है। जब सारा विश्व शाकाहारी बने, मनुष्य से भयभीत ये प्राणी भयमुक्त हो जाय। परन्तु वह दिन आने तक न जाने कितने करोड प्राणियो की जीवन लीला समाप्त कर दी जावेगी।

मासाहार किसी भी दृष्टि से मनुष्य का आहार नहीं हो सकता। वैज्ञानिक व शारीरिक दृष्टि से केन्सर कोढ व किडनी जैसे महारोगों का जन्मदाता है। प्राकृतिक दृष्टि से पर्यावरण को असन्तुलित करता है, धार्मिक दृष्टि से दुर्गति का प्रदाता है तथा आर्थिक दृष्टि से महँगा है। विदेशों में मांसाहार के दुष्परिणामों को जानकर करोड़ों लोग शाकाहार को अपना चुके है। मासाहार बड़ी तेजी से कम हो रहा है। अमेरिका जैसे विकसित देश मे 2 करोड लोग मांसाहार को छोड़ चुके हैं वहाँ शाकाहार क्रान्ति हो रही है। "डाइट ऑफ न्यू अमेरिका" पुस्तक की सर्वाधिक लोगों की शाकाहार के प्रति बढ़ती गहरी रुचि का प्रतीक कहा जा सकता है मेक्डानल जैसी मांस विक्रय करने वाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को अमेरिका छोड़कर भागने को मजबूर होना पड़ रहा है। उसी मेक्डानल कपनी को

400 दुकानों के लिए मांसाहारी भोजन के लिए भारत सरकारने लायसेंस दिया है। दुनिया का कोई भी धर्म या संस्कृति मांसाहार का समर्थन नहीं करती, बाहर देशों में शाकाहारियों की संख्या बढ़ रही है। लेकिन साधु सन्तों के इस अहिंसा प्रधान देश में आज मांसाहार व मद्यपान को विशेष प्रोत्साहन दिया जा रहा है। जो सभी दृष्टियों से अनुचित व निन्दनीय कृत्य है।

हजारों निष्पाप प्राणियों को रोज मौत के घाट उतारा जा रहा है। ये प्राणी बेजुबान हैं इनकी वेदना व्याकुलता और व्यथा को अपने मुँह से प्रकट करने में समर्थ नहीं हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम इनकी असह्य पीड़ा को अपनी जबान से लोगों तक पहुचाँए। जनता को पशुहत्या व मांसाहार के दुष्परिणामों से अवगत करावें। सत्य व तथ्य को उजागर करें तो करोड़ों प्राणियों की रक्षा हो सकती है। मित्ति में सव्वभुएसु का आदर्श हमें प्रभु महावीर से प्राप्त हुआ है। उसे साकार कर दिखावें, इसे घर घर पहुँचाए। जनमत अहिंसा के पक्ष में तैयार होगा इसी जनता में से सत्ताधारी लोग चुने जाते हैं। अहिंसक विचारों के लोग यदि सत्ता में आयेंगे तो निश्चित ही अहिंसा प्रचार में सुविधा रहेगी व वधशालाएँ बन्द हो सकेंगी।

मेरा सभ पू. सन्त सतियों के श्री चरणों में हृदय से निवेदन है कि आप इस कार्य को प्राथमिकता दें। केन्द्रिय की हिंसा के प्रति जितने जागरुक हैं उससे कई गुना अधिक पंचेन्द्रिय की हिंसा को रोकने के लिए सुनियोजित प्रयत्न अपेक्षित हैं। इसके लिए शाकाहार प्रशिक्षण शिविर आदि का आयोजन कर श्रावक–श्राविकाओं को इस ओर ध्यान देने हेतु प्रेरित करावें। मांसाहार मानवता पर कलंक है। जिसे हटाने के लिए सभी एक जुट होकर मांसाहारियों को शाकाहारी बनाने का महत्वपूर्ण कार्य हाथ में लें, तो देश का नक्शा बदल सकता है।

क्या आप जानते हैं?

देश में 5 बडे आधुनिक यांत्रिक कत्लखानें दिन रात खून की नदियाँ बहा रहे हैं। विशालकाय भैसों को काटने के 2 बड़े कत्लखाने है। बड़े–बड़े सार्वजनिक कत्लखानों की संख्या 3000 है। छोटे कत्लखानों की सख्या 36000 हैं।

रुद्रारम (आन्ध्र प्रदेश) का अलकबीर यान्त्रिक कत्लखाना प्रतिदिन 1500 भैसंपाडे व 6000 भेड बकरियों को काट रहा हैं।

देश में 65 प्रतिशत लोग मांसाहारी हैं। सूर्य की प्रथम किरण धरती पर पड़ने के पहले प्रतिदिन 25 लाख मुर्गे,

5 लाख बकरे 25 हजार गायों व भैसों की निर्मम कत्ल कर दी जाती हैं।

5प्रतिशत लोग रोज मांस खाते हैं। 25% लोग महीने में एक बार खाते हैं। 25% सप्ताह मे एक बार खाते हैं 10प्रतिशत पार्टियों मे खाते हैं। अर्थात भारत में 50 करोड़ लोग मांस खा रहे हैं।

हम क्या करें

☆ सभी दृष्टियों से मांसाहार हानिकारक है यह समझकर लोगों का हृदय परिवर्तन करना। ☆ यान्त्रिक कत्लखाने बन्द करवाना। ☆ मांस का निर्यात का बन्द करवाना। ☆ अवैधानिक कत्लखाने बन्द करवाना। ☆ देवों के नाम पर दी जाने वाली बलि बन्द करवाना। ☆ हिंसक सौन्दर्य प्रसाधनों का प्रयोग बन्द करवाना। ☆ प्राकृतिक चिकित्सा पध्दतियों का महत्व समझाना।

हम कैसे करें

(1) जहाँ भी जायें शाकाहार–सदाचार समिति की स्थापना कर इस कार्य का शुभारम्भ करें। (2) दिवालों पर अच्छे 2 वाक्य लिखवाकर अहिंसामय वातावरण बनावें। (3) शाकाहार प्रशिक्षण शिविर आयोजित कर अच्छे प्रचारक तैयार करें। (4) स्कूलों व कॉलेजों में भाषण कर बच्चों को शाकाहार का महत्व व मांसाहार की हानियों से अवगत करावें। (5) दैनिक समाचार पत्रों के माध्यम से सुन्दर लेख लिखकर अहिंसा के विचार जन–जन तक पहुंचावे। (6) कत्लखाने के दृश्य वीडियो फिल्म द्वारा गांव–गांव में दिखावे। (7) राजकीय नेताओं को अहिंसा का महत्व समझावे। (8) मांसाहारियों को शाकाहारी बनाकर, हृदय परिवर्तन कर शपथ दिलावे। (9) प्राणियों के संहार को बचाने के लिए कानून की बाजू पूर्णरूप से समझे। (10) स्टेशनरी, पत्र, लिफाफे, लेटरपॅड आदि पर "मानवीय आहार शाकाहार" "उत्कृष्ट आहार शाकाहार" जैसे वाक्यों का प्रयोग करें। (11) बड़े बड़े शहरों में अहिंसा सम्मेलनों का आयोजन करें।

अहिंसा प्रचार हेतु उपयोगी साहित्य

(1) कत्लखाने सौ तथ्य सचित्र – डॉ नेमीचंद जैन, मूल्य 10 रु. (2) अण्डे सौ तथ्य– डॉ नेमीचंद जैन, मूल्य 2 रु. 3) कत्लखाने के नरक–डॉ नेमीचंद जैन, (4) शाकाहार मासाहार प्रश्नोत्तर (हिन्दी, मराठी) रतनलाल सी. बाफना–मूल्य 13 रु (5) *आरोग्याची गुरुकिल्ली (मराठी)* डॉ धनजय गुंडे 6) मानवीय आहार शाकाहार (मराठी) श्री.ल.वा. मांडवगणे, जलगांव (7) Heads and Tails – (अंग्रेजी) श्रीमती मेनका गांधी (8) शाकाहार या मांसाहार फैसला आप करे– श्री गोपीनाथ अग्रवाल, दिल्ली मूल्य 1 रु.

नम्रनिवेदन

पू. सत, महासतियांजी महाराज सा से नम्र निवेदन है कि उपर्युक्त विषय को लेकर सारगर्भित–सुन्दर लेख लिखकर निम्न पते पर भिजवाने की कृपा करे। प्रभावशाली लेखों को समाचार पत्रों में व मासिक पत्रों में प्रकाशित किया जायगा। लेखों में अपने मौलिक विचार अवश्य लिखे।

निबन्ध भेजने की अंतिम तारीख 15/10/९४

देश भक्ति

इटली के इतिहास में जोसेफ गेरीबाल्डी का नाम बड़े आदर और श्रद्धा से लिया जाता है। वह वहाँ की एकता और स्वाधीनता के निर्माता माने जाते है। एक बार एक जोशीले व्याख्यान में उन्होंने नौजवानों से अपील की कि देश की आजादी की लड़ाई के लिये आगे आये।

एक युवक उनके पास पहुँचा और पूँछा - अगर मैं लड़ाई के लिये तैयार हो जाता हूँ तो मुझे आप क्या इनाम देगें ?

गेरीबल्डी ने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा - मुसीबतें, परेशानियां चोटे, घाव, जख्म . .. और शायद मौत। लेकिन यह याद रखों कि तुम्हारे जख्मों और कुर्बानी की बदौलत इटली आजाद हो जायेगा।



श्रीमान व श्रीमती आर के जैन ब्रह्मचर्य व्रत लेते हुए।



शुभ परिणाम से पुण्य होता है,

अशुभ परिणाम से पाप होता है

और .....

शुद्ध परिणाम से मोक्ष होता है।

विमल वाणी

७९ वाँ जन्मोत्सव

निमित्त ज्ञानी चारित्र चक्रवर्ती परमपूज्य आचार्य १०८

श्री विमलसागर जी महाराज

के पावन चरणों में

सविनय नमोऽस्तु........

विनीत

मानमल महावीर प्रसाद झांझरी

गौशाला– रोड, झुमरी तिलैया (विहार)

रेल्वे स्टेशन – कोडरमा

जिला – हजारीबाग



परमपूज्य सन्मार्ग दिवाकर

आचार्य १०८ श्री

विमल सागर जी महाराज

के ७९ वें जन्म दिवस पर चरणों में नमोऽस्तु

NEMICHAND SANJAY KUMAR JHANJHARI

GINNI EXPORTS

14, MADAN CHATTERJEE LANE
CALCUTTA - 700007
Tel. 2398154, 3218196 Tel. Fax. 330915
&
41/1, 5th Cross, 7th Main Road,
Shanti Nivas, SRIRAMPURAM
BANGALORE - 560 021
Tel. 080/ 3326507 Fax: 080/ 3346185.



हे आत्मन्
परिणाम जितने निर्मल रहेंगे
उतनी ही शीघ्रता से
संसार बन्धन से
मुक्त हो जाओगे।
आचार्य विमल सागरजी

महाराज के ७९ वें
जन्मदिवस पर
युगल पावन चरणों में
शत् शत् ...... नमोऽस्तु

विनीत

सतीश चन्द्र जैन जैसवाल

12 ए- लार्ड सिन्हा रोड
कलकत्ता - 71 (प. बंगाल)

निवास

128, बालीगंज, स्टेशन रोड - कलकत्ता - 19
फोन - 227788, 227979

जन्म-जयन्ती पर अभिवन्दन

केशरीमल काला

आचार्य–प्रवर ये बड़े दयालु तथा कृपालु रहें सभी पर।
करें ह्रदय से अभिवन्दन हम, इनकी जन्म–जयन्ती पर।।

'आ'– गम के निर्देशों पर चल, धारा है जिनने यह बाना।
उननें ही आतम को अपने सतत–प्रयासों से पहिचाना।।
'चा'– ह जहाँ हो वहीं रास्ता बना सकें आगे बढ़ने को।
चुना इन्होंने भी पथ अपना, उठा सका ऊँचा जो इनको।।
'रि'– श्ता–नाता तोड़ कुटुम्ब से, जोड़ा रिश्ता ऋषभदेव से।
आर्शीवाद पा करके जिनका, रमे रहें 'निज' में ये तब से।।
'प्र'– यत्न यथेष्ट–यथोचित करके, प्राप्त कर सके समता–धन।
ऐसे इन समता–धारी के, पॉव पड़ रहें हैं जन–जन।।
'व'– ज्र–लेप चढ़ा हो जिनके मन पर 'सम्यक्क रत्नत्रय' का
गिरने पाता असर नहीं तब उसआतम पर बाह्यजगत का।।
'र'– मना ही अपने में जिनने बना रखा हो दृढ़–निश्चय से।
झड़ने लगते कर्म–कषायन बंधे हुए जो इस आतम से।।
'ये'– अमल विमल–निर्मल दिलवाले पूज्य विमल सागर मुनिवर।
इनके चरण कमल में प्रेषित, भेट ह्रदय के भावों की भर।।
'व'– र्ष जयंती पचहत्तरवीं पर अभिवन्दन हम करें तिहारा।
स्वीकार कीजिए, विमल मुनीश्वर शत–शत बर प्रणाम हमारा।।
'डे'– रा डला इस वर्ष आपका, श्री सोनागिरजी– सिद्ध क्षेत्र पर।
नग–अनंग की प्रतिमाओं का स्थापन करवाया था जहाँ पर।।
'द'– म्भ और पाखंड भरी इस दुनिया की है टढ़ी चाल।
जिसे समझ कर सही दिशा में, कदम उठाये किया कमाल।।
'या'– त्रा में जहाँ बिछे–मिले उस पथ में कॉटे–ककड कितने।
हटा सके थे किन्तु उन्हें तप–त्याग संयम के बल से अपने।।
'लु'– भा कर इन्हें डिगाने वाले, आये होंगे कई प्रसंग।
ज्ञान श्रद्धा के आगे लेकिन कर न सके तप–संयम भंग।।
'त'– त्त्वज्ञ शिरोमणि, धर्म दिवाकर चरित्र चक्रवर्ती महाराज।
इस जन्म–जयन्ती पर हम थारी, माँग रहे हैं ठोस–इलाज।।
'था'– ह नहीं कहाँ तक डूबेंगे नगर गाँव कृषि भूमि वन।
नदी बाँध की बड़ी योजना लायेगी बर्बादी के क्षण।।

'कृ'– तांत जहाँ हो, चाहेगा वह, कर देगा हम सब का अन्त।
लेकिन उसकी बदनीयत का हो जाय सफाया अब हे सन्त।।

'पा'– र लगे इस विपदा से त्रस्त दुःखी कितने ये जीव।
मिलते ही आशीष आपका हो उनको आनन्द अतीव।।

'लु'– ढ़क जायगी अन्य दिशा मे, बेबस हो उनकी तकदीर।
नहीं कहीं के रह पावेंगे खोकर वे अपना बल धीर।।

'र'– हम–दया करुणा के सागर। आचार्यश्री महाराज हमारे।
अपनी जन्म जयन्ती पर वहाँ, हम सेवक को नहीं बिसारे।।

'हे'– र रहा है ह्रदय हमारा – आशीष भरा तव कृपा प्रसाद।
जिसे प्राप्त कर दिल को होगा सन्तोष भरा कितना आल्हाद।।

'स'– द् विवेक उपजायेगा आशीष भरा उपदेश तिहारा।
उन सब विपदाओं से हमको लगा सकेगा पार किनारा।।

'भी'– ड़ मिथ्या बातों की हट कर सोच सकेगी उनकी आतम।
तब होगा कल्याणकारी सब बाकी होगा मिथ्यातम।।

'प – प–पल पर आशीष तिहारा उभार सकेगा हम दुखियों को।
नही लगेगी देर वहाँ तब सत्य राह मिलने में हमको।।

'र'– ती भर भी समझ सके नहीं, 'जड चेतन' के भेद–ज्ञान को।
कैसे मिल पावे छुटकारा उन भौतिक कार्यों से जन को।।

'क'– रुणा निधान। आचार्यश्री मुनि विमलसागर के संघ में।
उपाध्याय भरतसागरजी, सदा लीन हैं निज आतम में।।

'रे'– ल पेल से दूर हमेशा, रखते हुए जहाँ अपने को।
तत्वचर्चा के सिवा व्यर्थ की बातों से दूर रखे अपने को।

'ह'– दय–स्पर्शी प्रवचन द्वारा पूज्य आर्यिका स्याद्वादमती।
श्रोतागण को कर लेतीं जो आकर्षित मुनि सघ प्रति।

'द'– मखमता से करने वाली संघ व्यवस्था सार–संभार।
ब्रह्मचरिणी चित्राबाई, योग्य–चतुर हैं सभी प्रकार।।

'य'– था योग्य मुनि संघ व्यवस्था आचार्यश्री के तप–प्रताप से।
समयानुकूल चल रही व्यवस्थित, मर्यादा में समुचित ढंग से।।

'से'– व्यय/ सेवक के भाव रुप हम, आचार्यश्री के चरण कमल में।
चढ़ा रहे श्रद्धा–सुमनों को भक्ति–भाव के काव्य विमल में।

'अ'– बोध अज्ञानी हम संसारी, भव–भव की खाते ठोकर।
चले जा रहे बिन सोचे ही, उसी राह को अपनाकर।।

'भि'– न भिना रही है क्रोधादि–कषायन की मक्खियाँ, हम प्राणिन पर।
मार रही हैं डक हमारी ना–समझी से उस आतम पर।।

'नं'– ग अनग स्वामिन से करते आज प्रार्थना यही सभी हम।
उपाय सुझावे ऐसा जिससे हो उनका वह हमला कम।

'द'– म सूख रहा है आघातों से, दवा कीजिए, हे स्वामी!
क्षमा कीजिए हमको मुनिवर, अनेक हैं हम में से जो स्वामी।।
'न'– ब्ज ज्ञान के ज्ञानी! तुझसे हाथ जोड़कर विनय हमारी।
रोगों की पहिचान सही कर लेने की तुझमें क्षमता भारी।।
'ह'– कीम और हाकिम भी हो तुम, शीघ्र करें उपचार हमारा।
आयु के दिन चंद बचे हैं, खींच रहे हैं ध्यान तुम्हारा।।
'म'– र्ज पुराना होकर मन को, कर डाला है कितना जर्जर।
उन दुःखों का शीघ्र अन्त हो, परम तपस्वी, हे मुनिवर।।
'इ'– च्छाओं का अन्त नहीं, वे उलझाती रहतीं दिन–रात।
खिलवाती रहतीं जीवन में यहाँ–वहाँ कितनों की लात।।
'न'– हीं उठने पाते हैं हम उनकी भारी–भरकमता से।
उपाय बतायें छुड़ा सकें जो अति शीघ्र ही, पिण्ड उन्हों से।।
'की'– कर के काँटो सम वे, चुभकर पहुंचाती दुःख भारी।
उन्हें कील कर बना दीजिए, जीवन हम सबका सुखकारी।।
'ज'– ड़ता की वह छाँव हमारे जीवन पर जो छाय रही है।
उसे मिटाने और हटाने की युक्ति का ज्ञान नहीं है।।
'न'– त मस्तक हो हाथ जोड़कर करें प्रार्थना, हे मुनिवर।
'रामबाण–आशीष' आपका, असर डाल सकता उस पर।।
'म'– हाराज! आपकी ऋद्धि–सिद्धि की महक, उड़ा सकती सब रोग।
तत्काल भला होकर जो लौटे ऐसे कहते वे सब लोग।।
'ज'– मीं बनी हो शैया जिनकी और ओढ़ना आसमान का।
भुजा बनीं मुलायम तकिया, पवन बना पखा उनका।।
'यं'– त्र–तंत्र और नियंत्रण जिनका, विषय वासनाओं पर पूरा।
सहते हुए बाईस परीषह, करते हैं कर्मन का चूरा।।
'ति'– सना तिरिया तथा तिजौड़ी पूर्ण रुप से त्यागा जिन्होंने।
नग्न दिगम्बर जैन–मुनि का बाना धारण किया उन्होंने।।
'प'– का मंजा हो त्याग–संयम से, आचार्य मुनि–पद, यह जिनका।
हम पचहत्तरवें वर्ष जयंती पर करते अभिवन्दन उनका।।
'र'– चा–पचा रग–रग में जिनके, सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान।
ऐसे पहुंचे सन्त गणों का करती है दुनिया गुणगान।।

■ ■ ■

सच तो यह है कि जिन्हें नाचना होता है, वे वन की कंकरीली पथरीली भूमि पर भी नाच लेते हैं और जिन्हें नाचना नहीं आता, वे प्रशस्त, समतल आंगन को भी वक्र (टेढ़ा) बताते हैं। कार्य करने की जिन्हें धुन होती है, वे अपना मार्ग बना लेते है। — आचार्य विद्यानन्द मुनि

वही मनुष्य संसार से
मुक्त होगा
जो अपने दोषों की
आलोचना करेगा
— विमल वाणी

सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव ● सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव

युग श्रेष्ठ सन्त
शिरोमणि वात्सल्य
हृदयि सन्मार्ग
दिवाकर परमपूज्य
आचार्य 108
श्री विमल सागर
महाराज के युगल
चरणों में
सविनय नमोस्तु

79 वाँ जन्म दिवस महोत्सव ●79 वाँ जन्म दिवस महोत्सव

विनीत

विनोद कुमार जैन, दीपा जैन
अभिषेक, नितिन, अंकित जैन

प्रतिष्ठान

जैन पेपर ट्रेडर्स

12 मक्की मार्केट, चावड़ी बाजार
दिल्ली— 110006

Phone . 3284309 & 3270282 (O)
2247668 & 2415789 (R)

चरखे का टूटे न तार

(पण्डित परम्परा का आर्थिक पक्ष)

❑ प्रोफेसर एल.सी.जैन, जबलपुर

यह सभी को ज्ञात है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में औद्योगिकरण से निरन्तर बेकारी बढ़ती जा रही है। इसका एक रूप भारत में जब उसे गरीबी, भुखमरी के चंगुल में फंसाता चला जा रहा था और भारत परतन्त्रता के कारण इस समस्या से उभर नहीं पा रहा था, उस समय महात्मा गांधी ने अलौकिक प्रतिभा से केवल एक सूत्र से आर्थिक ढांचे को एक स्वतन्त्र आधार देकर सभी का उद्धार कर दिया था। वह सूत्र था, **''चरखे का टूटे न तार, चरखवा चालू रहे।''**

आज मात्र दलाली का युग नहीं रहा, और उद्योगपति भी निरंतर प्रतिद्वंदिता के कारण इस देश में पेंचीदा समस्याओं में उलझते चले जा रहे हैं। तब प्रश्न उठता है कि हम जैन समाज के आर्थिक ढांचे को किस प्रकार मजबूत बनालें, जो न केवल हमारे लिए वरन् अन्य समाजों के लिए एक पथ प्रदर्शक बन जाये।

इस सम्बन्ध में एक अमोध उपाय दृष्टिगत हो रहा है। यदि धार्मिक ग्रंथों के हस्तलिपि निर्माण को हम पुनजीर्वित कर सके तो न केवल प्रत्येक मंदिर में अमूल्य निधियों के रूप में इनका क्रय प्रारम्भ हो जायेगा, किन्तु पण्डित वर्गको एक ऐसा कार्य भी मिल जायेगा जो उनकी विद्वता को तो बढावेगा ही, उनकी आर्थिक परिस्थित को भी मजबूत कर सकेगा। कारण निम्नलिखित है–

1 विगत की प्राचीन हस्तलिपियाँ अत्यंत दुर्लभ और जीर्णशीर्ण हो चुकी हैं, तथा मूल हस्तलिपि की कीमत हजारों रूपयों में आंकी जा रही हैं। इस प्रकार जो आज हस्तलिपि तैयार की जायेगी वह पचास वर्ष पश्चात अत्याधिक मूल्यवान हो जायेगी, क्योंकि उसका ऐतिहासिक महत्व ही बहुत अधिक होता है। मंदिरों की यह सम्पत्ति दिनदूनी रात चौगुनी मूल्यवाली सिद्ध होगी।

2. हस्तलिपि लेखन को अंततः ग्रामोद्योग में लाकर, शासन से विशेष सहायता ली जा सकती है जो आर्थिक आदि रूप में हो सकती है। भाषानुवाद कार्य भी साथ–साथ चल सकता है।

3 प्रत्येक मंदिर में न केवल हस्तलिपियाँ क्रय की जावें, वरन् उन हस्तलिपियों के निर्माण हेतु पण्डित, ब्रह्मचारी, त्यागी वर्ग भी नियुक्त किया जाये, जो न केवल प्रवचन ही करें, वरन् हस्तलिपि लेखन और उनका संरक्षण आदि अच्छी तरह से करते रहें।

4 जहाँ बड़े–बड़े धार्मिक ट्रस्ट हैं वे सैकड़ो की तादाद में पण्डितों को नियुक्ति करें जो मात्र हस्तलिपि, संरक्षण, प्रवचनादि तथा विधानादि में भी संलग्न रहें।

5 हाथ से लिखी सामग्री में वे प्राण समायु हुए होते हैं जो प्रेस से मुद्रित ग्रंथों में नहीं होते। इसके लिए विशेष कागज तथा अहिंसक स्याही, ताड़पत्र आदि खरीदे जायें और इस कार्य को चरखे की भांति निरन्तर चलाया जाता रहे। रहस्यमय सामग्री विशेष रूप से रखी जाए।

6. अखिल भारतीय स्तर पर भी खादी ग्रामोद्योग जैसी समितियों का गठन किया जाये और विशेषकर सिद्धान्तग्रंथों की हजारों हस्तलिपियों प्रत्येक भारतीय या विदेशी जिन मन्दिर की शोभा बढ़ाने निर्मित की जाएं।

आशा है, समाज तथा ट्रस्टादि गंभीरता पूर्वक विचार करेंगे कि ''लिपियों का टूटे न ताड़, लिपैया लागू रहे'' सूत्र कितना रहस्यमय है। कितना क्रांतिकारी हो सकता है। विशेषकर पण्डित, ब्रह्मचारी वर्ग को यह अभियान सफल बनाना होगा। ❑ ❑ ❑

है विमल आत्मन्!
मोह के उदय से ही बड़ी-बड़ी
भूलें होती हैं। उस भूल को
निकालना ही श्रेयोमार्ग है।
– विमल वाणी



सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव 94

बीसवीं सदी के अमरसन्त-जिनभक्ति के अमर प्रेरणास्रोत-करुणा निधि, सन्मार्ग दिवाकर प्रातः स्मरणीय आचार्य 108 श्री विमल सागर महाराज के पावन युगल चरणों में सविनय नमोस्तु

आचार्य विमल सागर जन्मोत्सव

विनीत

श्री रुखबदास नथ्थुसाव गहानकरी

प्रतिष्ठान– सन्मति एजेन्सीज
भारत पेट्रालियम डीलर्स
जालना (महा.) 431203

निवास– रविन्द्र आर. गहानकरी
"सिद्धा" नाथनगर, मंठा रोड
जालना (महा.) 431203

जैन मन्त्र-विद्या की विधाएँ

❑ डॉ. सोहनलाल देवोत, लोहारिया

आवश्यकताएँ तथा एषणाएँ सांसारिक जीवन की धुरी हैं। इस तथ्यानुसार संसार के किसी भी क्षेत्र का मानव चाहे वह राजा-रंक, साधक-सन्यासी, गृहस्थ-त्यागी, ज्ञानी-मूर्ख जो भी हो उसका जीवन अनादिकाल से अभिरुचि (Interest), मनोवृत्ति (Attitude), आदत (Habit), आवश्यकता (Need), प्रेरणा (Motivation), उद्देश्य (Aim), तथा जिज्ञासा (Curiosity) आदि के वशीभूत प्रतिक्षण अभिप्रेरित रहा है। मानव-मन की प्रकृत इच्छाओं को जैनाचार्यों ने शान्ति, पुष्टि, आकर्षण, वशीकरण, उच्चाटन, स्तम्भन, विद्वेषण या मारण आदि में वर्गीकृत कर आधुनिक मनोवैज्ञानिक मानव-मन की अन्तःप्रकृति को समझने हेतु एक नूतन दिशाबोध ही नहीं दिया है अपितु उन मनोकामनाओं की सिद्धि हेतु उन्हीं के नामकरण पर पृथक्-पृथक् मन्त्र-यन्त्र-तन्त्रों की विधा के रूप में वर्गीकरण के दिशा निर्देश द्वारा वैज्ञानिक खोज के लिए भी एक नूतन आयाम प्रस्तुत किया है।

पूर्वाचार्यों ने शान्ति-पुष्टि आदि की सिद्धि हेतु जिन मन्त्र, यन्त्र तथा तन्त्रों की रचना की है उसका हेतु क्या है? क्या मनुष्य अपने पुरुषार्थ द्वारा अपनी मनोकामना की सिद्धि नही कर सकता? किंवा ये मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र मुनष्य के पुरुषार्थ से पराङ्मुख के कारण नहीं बनेंगे? आदि कुछ विचारणीय प्रश्न हैं, जो एक नवीन दिशाबोध की अपेक्षा रखते हैं।

हम देखते हैं कि समान परिस्थिति में समान योग्यता के धारक विभिन्न व्यक्तियों द्वारा समान पुरुषार्थ किंवा परिश्रम करने पर किसी को आशा से अधिक सफलता तो किसी को आशा से कम सफलता तो किसी को पूर्ण विफलता की प्राप्त होती है। ऐसा क्यों? इसका उत्तर हम कर्मदर्शन का परिशीलन करने पर प्राप्त कर सकते हैं कि प्रत्येक प्राणी सामान्य रूप से अपने जन्म के साथ पूर्वकृत कर्मों को लेकर आता है। उन्हीं के आधार पर वह सामान्य रुप से अपने जीवन का निर्माण करता है। अतः कर्मों की अपेक्षा पुरुषार्थहीन होने से कर्मों के फलाफल अवश्य ही भोगने पड़ते हैं। अस्तु, मनुष्य को अपने कर्मों में आशातीत सफलता हेतु पूर्वकृत कर्मों का नाश तथा प्रतिकूल परिस्थिति को अनुकूल करने हेतु पूर्वाचार्यों ने शान्ति, पुष्टि आदि निम्न मन्त्र का सृजन किया है।

<u>कामनाओं की सिद्धि रूप अभिकर्मों का वर्गीकरण:-</u>

1. शान्तिक मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।	5. उच्चाटन मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।
2. पौष्टिक मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।	6. स्तम्भन मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।
3. आकर्षण मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।	7. विद्वेषण मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।
4. वशीकरण मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।	8. मारण मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र।

विचार करने पर ज्ञात होता है कि मानव के समस्त उद्देश्य एवं समस्याएँ इन्हीं आठ विधाओं में समाहित हो जाती हैं।

शान्तिक मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र

शान्तविक मन्त्र-जिन ध्वनियों के वैज्ञानिक सन्निवेश के घर्षण द्वारा विभिन्न कारणों से उत्पन्न हुई अशान्ति दूर हो जाये उन ध्वनियों के सन्निवेश को शान्तिमन्त्र कहते हैं।

शान्तिक यन्त्र–जिन मन्त्रों एवं अंको को रेखाओं, बिन्दुओं के द्वारा विभिन्न प्रकार के चक्र, वृत, कोण, त्रिभुज किंवा अन्य आकृतियों में पूर्वाचार्यों द्वारा रूपांकन किया गया हो तथा जिनकी विधिपूर्वक साधना द्वारा पूर्वोक्त पकार की शान्ति प्राप्त हो, उसे **शान्तिक यन्त्र** कहते हैं। **शान्तिक मन्त्रों की विकसित स्थिति को ही शान्तिक यन्त्र कहा गया है।**

आज का भौतिकवादी मानव नाना प्रकार के रोगों तथा मानसिक तनाव से त्रस्त होता जा **रहा है। उसके रोगों तथा मानसिक** तनावजन्य कारणों के रूप में यदि शान्तिक मन्त्र–यन्त्र–तन्त्रों **का वैज्ञानिक रूप से उपयोग** किया जाये तो आज के त्रस्त मानव को सुख की नयी दिशा प्राप्त होने **की इस विद्या में पूर्ण सम्भावनाएँ** हो सकती हैं। मेरे अनुभव एवं विचार के निष्कर्ष रूप यदि मनुष्य **अनवरत रूप से** उक्त मन्त्र–यन्त्र का विधिवत् आराधन करता है तो वह समस्त मानसिक तनावों **से मुक्ति ही नहीं अपितु** समस्त शारीरिक व्याधियों से मुक्ति पा सकता है। यह मन्त्र–यन्त्र इसी विद्या **का प्राण रूप सार है।** इसे पूर्वाचार्यों ने महामन्त्र, महा मृत्युंजय मन्त्र, परम शान्तिदाता मन्त्र आवि **कई संज्ञाओं में** परिभाषित किया है।

पौष्टिक मन्त्र–यन्त्र–तन्त्र

मानव–मन की परतों को यदि खोला जाये तो उसमे वित्तेषणा, पुत्रेषणा, लोकेषणा रूप विकास व विनाशक अदृष्ट इतिहास छिपा पडा है। इस तथ्यानुसार ससार का कोई भी मनुष्य निर्धनता की वाछा नहीं करता, अपितु वह वित्तेषणा रूप धन–धान्य तथा समस्त प्रकर की सुख सामग्री की तमन्ना रखते हुए उन्हे येन–केन–प्रकारेण प्राप्त करने का प्रयास करता है। उसके मन की दूसरी लिप्सा पुत्र प्राप्ति की होती है। सहज रूप से इस इच्छा की पूर्ति नहीं होने के फलस्वरूप वह नाना उपायों के आश्रय से आशान्वित होने का प्रयास करता है तथा उसकी जरुरी मानसिक व्यथा किंवा इच्छा ख्याति लाभ की भी होती है। वह अपनी प्रसिद्धि के लिए अनेक प्रकार की नीतियों का आश्रय लेते हुए सबल पुरुषार्थ करता है। जैनाचार्यों ने मानव–मन की इन उपर्युक्त इच्छाओं की सिद्धि हेतु **पौष्टिक** अभिकर्म रूप अनेक मन्त्र–यन्त्र तथा तन्त्रों का सृजन कर **भुक्ति से मुक्ति** का मार्ग **प्रशस्त** किया है।

पौष्टिक मन्त्र–जिन ध्वनियों की वैज्ञानिक सरचना के घर्षण द्वारा सुख सामग्रियों की प्राप्ति अर्थात् जिन मन्त्रो के द्वारा मन की सकल्प शक्ति तथा ऐसे वातावरण एवं परिस्थितीयों का निर्माण हो जिससे धन–धान्य, पुत्र सौभाग्य तथा यश, कीर्ति की प्राप्ति हो, उन ध्वनियों के सन्निवेश को पौष्टिक मन्त्र कहते हैं।

पौष्टिक यन्त्र– जिन मन्त्रों एवं अकों को रेखाओं बिन्दुओं के द्वारा, जिन्हें विभिन्न प्रकार के चक्र, वृत्त, कोण, त्रिभुज किंवा अन्य आकृतियो मे पूर्वाचायो ने रूपांकन किया है उनकी विधिपूर्वक साधना द्वारा पूर्वोक्त प्रकार के पौष्टिक अभिकर्म की सिद्धि होती है, उन्हें पौष्टिक यन्त्र कहते हैं। पौष्टिक मन्त्रों की विकसित स्थिति ही पौष्टिक यन्त्र कहे जाते हैं।

पौष्टिक तन्त्र– अपेक्षित मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र आदि में विधिपूर्वक औषधि विशेष किंवा क्रिया विशेष से, व्यक्ति विशेष अथवा समूह विशेष मे प्रत्यक्ष वा अप्रत्क्ष रूप से रासायनिक क्रिया अथवा भौतिक क्रिया के फलस्वरूप पौष्टिक अभिकर्म की सिद्धि होती हो उन्हें पौष्टिक तन्त्र कहते हैं।

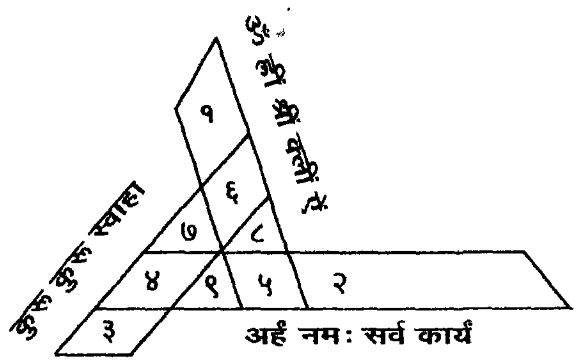
इस विद्या सम्बन्धी साहित्य भी, विशेषतया सामान्य–विशेष युक्त विपुल मात्रा में उपलब्ध होता है। यहाँ निर्देशन रूप में सामान्य विशेषता युक्त मन्त्र, यन्त्र तथा तन्त्र को ही संदर्भित किया जा रहा है।

इस यन्त्र को रवि पुष्य नक्षत्र में सोना, चाँदी अथवा ताम्र पत्र में खुदवाकर, प्राण प्रतिष्ठा कर पूर्व लिखित मन्त्र की नित्य विधिपूर्वक दस माला फिराने से पौष्टिक अभिकर्मक की सिद्धि होती है।

इस यन्त्र को पुष्य नक्षत्र में सोना, बारह रत्ती चाँदी, तथा 16 रत्ती तांबे की तीन तार युक्त अंगूठी बनवाकर, विधिवत् दाहिने हाथ की तर्जनी अंगुली में धारण करने से उत्तम पौष्टिक अभिकर्म की सिद्धि होती है।

धन–धान्य, सौभाग्य, संतान तथा यशकीर्ति आदि सर्व सिद्धि महा प्रभावित मन्त्र–यन्त्र–

सर्व कार्य सिद्धि यंत्र सूर्य यंत्र सहित



विधिः यंत्र को भोज पत्र पर केशर से लिखकर हाथ में पहने।

उपर्युक्त् निर्देशन रूप मन्त्र–यन्त्र तथा तन्त्र पर लेखक के द्वारा अनेक बार प्रयोग किये गये हैं। जिनके आशातीत परिणाम प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार पौष्टिक मन्त्र–तन्त्र तथा तन्त्र, धन–धान्य, यश, सौभाग्य, सन्तान आदि की प्राप्ति में अवरोधक तत्वों का निरोध, सहायक तत्वों का सृजन तथा साधक मे पुरुषार्थ करने के प्रति दृढ़ संकल्प को पैदा करते हैं।

इस प्रकार मानव मन की द्वितीय प्रकृत इच्छा ही सिद्धि रूप पौष्टिक अभिकर्म को समझने के अनन्तर, उसकी अपराधी वृत्ति पर नियन्त्रण रूप अभिकर्म को समझना आवश्यक है, जिस पर आगे प्रकाश डाला जा रहा है।

आकर्षण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, स्तम्भन, विद्वेषण तथा मारण अभिकर्म

मानव–मन की विरोधी प्रकृति स्वाधीनता किंवा स्वतन्त्रता तथा स्वामित्व भोग–उपभोग वा नेतृत्व भावना की मर्यादा विरोधी स्वच्छन्द वृत्ति ने ही समाज को अशान्ति रूप सघर्ष दिया है। अर्थात् मानव–मन की एक विशेषता रही है कि कोई भी मनुष्य थोड़ी सी भी समझ होने पर स्वयं तो स्वतन्त्र रहना चाहता ही है किन्तु वह दूसरों पर चेतन–अचेतन स्वामित्व रूप अधिकार वा नेतृत्व की प्रबल भावना रखता है। उसकी यह सामान्य मानसिक स्थिति जब प्रत्यक्ष रूप से स्वच्छन्दता का आश्रय ले लेती है, तब उसकी वह विशिष्ट स्थिति व्यक्ति विशेष से लेकर विश्व स्तर की किसी भी संस्था को क्षोभ, भय, दुख तथा अमर्यादित क्षति से प्रभावित कर सकती है। अस्तु मानव–मन के स्वच्छन्द विरोधी प्रकृति के दुष्परिणामों से बचने के लिए ही नहीं अपितु पशु पक्षी आदि किसी के भी द्वारा

व्यक्ति, परिवार, धर्म, समाज तथा राष्ट्र आदि की अमर्यादित से रक्षा हेतु पूर्वाचार्यों ने अपराधों के अनुरूप क्रमशः आकर्षण, वशीकरण, उच्चाटन, स्तम्भन, विद्वेषण तथा मारण रूप अभिकर्म का दिशाबोध दिया है।

आकर्षण

जिन ध्वनियों की वैज्ञानिक रचना के घर्षण द्वारा किसी विरोधी, भ्रमित, रुष्ट, असन्तुष्ट, निर्मम, भयग्रस्त व्यक्ति तथा देवी–देवता आदि जो साधक के पास आकर अपनी मानसिकता को साधक के प्रति सौहार्दपूर्ण, अपनत्व युक्त कर देता है, उन ध्वनियों के सन्निवेश को **आकर्षण मन्त्र** कहते हैं। इसका प्रयोग मुख्यत· दूरस्थ को बुलाने, समीप लाने की भावना से ही किया जाता है। मन्त्रों का विकसित रूप यन्त्र तथा तन्त्र भी आकर्षण विद्या के अभिन्न अंग हैं, जो अपना निश्चय प्रभाव छोड़ते हैं।

वशीकरण

अभीष्ट प्राणी को अपने वशीभूत करना ही वशीकरण कहलाता है। वस्तुतः यह आकर्षण और मोहन अभिकर्म का चरम विकसित और अत्याधिक प्रभावी रूप है। आकर्षण में केवल अपनी ओर खींचने पास ले आने का प्रभाव निहित रहता है, जबकि मोहन में उससे कुछ अधिक, उक्त प्राणी की विमुग्ध और स्वय की चेतना के प्रति विस्मृत सा कर दिया है। इसमें मोहित व्यक्ति की चेतना और विवेक मन्द हो जाते हैं। वशीकरण मे इन दोनों से अधिक प्रभाव रहता है। वशीकृत व्यक्ति को अपने प्रति उचित–अनुचित, हानि–लाभ, स्वीकृति–वर्जना, हित–अहित का विवेक नहीं रहता। वह मानसिक रूप से साधक के अधीन, उसके प्रति पूर्णतया समर्पित हो जाता है। वह मानसिक दासता की स्थिति मे साधक के हाथ की कठपुतली बन जाता है।

जिन ध्वनियों का वैज्ञानिक रचना के घर्षण द्वारा इच्छित व्यक्ति, वस्तु, पशु–पक्षी, तथा देवी देवता आदि चुम्बक की तरह खिचे हुए साधक के पास आ जाये तथा उसका विपरीत मन भी साधक की अनुकूलता स्वीकार कर ले, उन ध्वनियों के सान्निवेश को **वशीकरण मन्त्र** कहते हैं। इन मन्त्रों के विकसित रूप यन्त्र और तन्त्र भी मन्त्रों की तरह वशीकरण के प्रभावी निमित्त होते हैं।

उच्चाटन

जिन ध्वनियों के वैज्ञानिक सरचना के घर्षण द्वारा किवा तन्त्र की रासायनिक क्रिया किसी का मन अस्थिर, उल्लास रहित एव निरुत्साहित होकर पथ–भ्रष्ट या स्थान–भ्रष्ट हो जाय, अर्थात् जिन मन्त्रों के प्रयोग किवा तन्त्रों के प्रयोग द्वारा मनुष्य और पशु पक्षी में विरक्ति, अनास्था, अविश्वास, ऊब–भ्रम और अनिश्चय की भावना पैदा हो जाती है, वह स्थिर चित्त होकर न कहीं बैठ सकता और न कोई कार्य कर सकता है, उन **ध्वनियों के सन्निवेश को उच्चाटन मन्त्र तथा पदार्थ विशेष की क्रिया विशेष को उच्चाटन तन्त्र कहते हैं।** इस अभिकर्म का मुख्य लक्ष्य किसी का भी बौद्धिक सन्तुलन नष्ट करना है।

स्तम्भन

जिन ध्वनियों की वैज्ञानिक सरचना के घर्षण द्वारा किंवा पदार्थ विशेष की क्रिया विशेष द्वारा मनुष्य पशु–पक्षी तथा प्रेत आदि की बाधाओं को शत्रुओं के आक्रमण तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा किये जाने वाले कष्टों को दूर कर, इनको जहाँ की तहाँ निष्क्रिय कर स्तम्भित कर दिया जावे उन **ध्वनियों के सन्निवेश को स्तम्भन मन्त्र तथा पदार्थ विशेष की रासायनिक क्रिया को स्तम्भन तन्त्र कहते**

हैं। इस अभिकर्मक द्वारा व्यक्ति की बुद्धि को जड़ या निष्क्रिय करके वैचारिक रूप से पंगु किंवा विवेकशून्य बनाकर उसके समस्त क्रियाकलापों को रोकने के अनन्तर शारीरिक गतिशीलता को भी निष्क्रिय बना दिया जाता है। मुख्य रूप से स्तम्भन का प्रभाव व्यक्ति के बौद्धिक, शारीरिक तथा मेघ स्तम्भन, बाढ़ में जल स्तम्भन, अग्नि स्तम्भन, वायु स्तम्भन, युद्ध में शास्त्र स्तम्भन, तथा वाक् स्तम्भन में किया जाता है।

विद्वेषण

जिन ध्वनियों की वैज्ञानिक संरचना के घर्षण द्वारा किंवा पदार्थ विशेष की क्रिया विशेष के रासायनिक परिणाम द्वारा कुटुम्ब, मित्र, जाति, देश, समाज आदि में परस्पर कलह और वैमनस्य की क्रान्ति मच जाये **उन ध्वनियों के वैज्ञानिक सन्निवेश को विद्वेषण मन्त्र तथा पदार्थ विशेष की रासायनिक किया को विद्वेषण तन्त्र कहते हैं।**

मारण

जिन ध्वनियों की वैज्ञानिक संरचना के घर्षण द्वारा साधक आततायियों को प्राणदण्ड दे सके उन ध्वनियों के वैज्ञानिक सन्निवेश को मारण मन्त्र कहते हैं।

इस विद्या का भी क्षुद्र स्वार्थ तथा ईर्ष्या–द्वेष की पूर्ति के लिए प्रयोग होने लगा, जिससे समाज ने उसे सर्वथा त्याज्य तथा निन्दनीय घोषित कर दिया है।

इस प्रकार पूर्वाचार्यों ने मानव–मन की स्वच्छन्द विरोधी प्रकृति के दुष्परिणामों से बचने व अपराधी के अपराध के अनुरूप क्रमश आकर्षण, मोहन, वशीरण, उच्चाटन, स्तम्भन, विद्वेषण तथा मारण मन्त्र–यन्त्र रूप विधाओं की दिशा दी थी। किन्तु प्रायः इन विद्याओं का दुरूपयोग ही अधिक हुआ है। इसी से अध्यात्म के अन्तर्गत मन्त्र–तन्त्र के प्रति लोगों में उपेक्षा, भय, शंका तथा अविश्वास आदि के भाव उत्पन्न होने से सामाजिक चेतना ने उन्हें त्याज्य, बहिष्कृत और निन्दनीय सा ही घोषित किया है।

हम देखते हैं कि जैन मन्त्रशास्त्र में शान्ति–पुष्टि आदि विद्या रूप विशाल श्रृंखला है जिसका मानव के ऐहिक और भौतिक कल्याण की दृष्टि से बहुत महत्व है। यह केवल कल्पना ही नहीं है, किन्तु आयुर्वेद के चिकित्सा शास्त्रों से भी प्रमाणित है कि मन्त्र और तन्त्र से अनेक प्रकार की आधि, व्याधि से मुक्ति दिलाकर मानव के जीवन को प्रशस्त किया जा सकता है। आज के इस विज्ञान के युग में आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में, लोग इस महत्वपूर्ण परम्परा की प्रायः उपेक्षा करते हैं, किन्तु इस विद्या का वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन किया जाय और तथ्यों का विश्लेषण किया जाय तो निश्चित ही यह मानव–कल्याण के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकती है। ❑❑❑

वर्णी वाणी

आत्मशक्ति ......

जो कुछ है सो आत्मा में, यदि वहाँ नहीं तो कहीं नहीं।
आत्मा अनन्त ज्ञान का पात्र है और अनन्त सुख का धारी है।
परन्तु हम अपनी अज्ञानतावश दुर्दशा के पात्र बन रहे हैं।
आत्मा ही आत्मा का गुरु है और आत्मा ही उसका शत्रु है।
अन्तरंग की बलवत्ता ही श्रेयोमार्ग की जननी है।

आचार्य विमल सागर जी और उनका जिनागम साहित्य प्रेम

❑ कमल कुमार बाकलीवाल
प्रकाशक एवं प्रबंध सम्पादक

आचार्य श्री 108 विमल सागर जी महाराज देश के वयोवृद्ध आचार्य हैं। आप जैसी नव देवता भक्ति शायद ही कहीं अन्यत्र देखने को मिले। सस्कृति और साहित्य के प्रेमी आचार्य प्रवर सदैव जिनागम के प्रचारार्थ कार्य करते ही रहते हैं। आचार्यवर्य की सदैव यही भावना रहती है कि वर्तमान समय मे प्राचीन आचार्यों द्वारा प्रणीत ग्रन्थों का प्रकाशन हो तथा उन्हें **जिनालयों में, स्वाध्याय भवनों में, आगमज्ञान पिपासुओं हेतु** चितन/ मनन/ पठन/ पाठन के लिए उपलब्ध करायें जाये जिससे जिनागम का झण्डा सदैव गगन में लहराता रहे।

आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज के इन्हीं पावन भावो को गति प्रदान की है **भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्–सोनागिरि** (दतिया) म.प्र. ने आपने हीरक जयन्ती महोत्सव के मंगल प्रसंग पर, प्राचीन/ नवीन आगमानुकूल ग्रन्थों का प्रकाशन कर। जैन धर्म की प्रभावना/ जिनवाणी का प्रचार–प्रसार/ आर्ष परम्परा की रक्षा एवं तीर्थंकर महावीर का शासन निरन्तर गति से चलता रहे यही सकल्प है भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्–सोनागिरि (दतिया) म.प्र.का और इस संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित किये जाने वाले 75 ग्रन्थ श्रावकों के मोहरुपी अधकार को नष्टकर ज्ञान ज्योति जलाने का अनुपम साधन बनकर उन्हे स्वकल्याण के पथ पर अग्रसित करने मे सक्षम होंगे ऐसी आशा की जा सकती है। इस हीरक जयन्ती वर्ष मे निम्न ग्रन्थो का प्रकाशन किया जा रहा है–

(1) सिद्धचक्र विधान (संस्कृत) (2) विमल भक्ति संग्रह (3) धर्म मार्ग सार (4) आराधना कथाकोष (5) रत्नाकर की लहरे (6) अष्टपाहुड (7) पचास्तिकाय (8) पंचस्रोत (9) पुरुषार्थ सिद्धयुपाय (10) चर्चासागर (11) चन्द्रप्रभ चरितम् (12) सम्यक्त्व कौमुदी (13) परीक्षामुख (14) क्षत्र चूणामणि (15) तत्वानुशासन (16) योगसार (17) नीतिसार समुच्चय (18) परमात्म प्रकाश (19) न्याय दीपिका (20) शान्ति सुधा सिन्धु (21) इन्द्रनन्दि नीतिसार (22) इष्टोपदेश (23) समाधितत्र (24) बरांग चरित्रम् (25) भरतैश वैभव (26) वैराग्य मणिमाला (27) ध्यान सूत्राणि (28) श्रुतावतार (29) अमितगति श्रावकाचार (30) महामृत्युंजय विधान (31) स्वयंभूस्त्रोत्र (32) द्रव्यसग्रह (33) धम्म रसायन (34) सार–समुच्चय (35) प्रश्नोत्तर श्रावकाचार (36) आलाप पद्धति (37) मदन–पराजय (38) बसुनन्दी श्रावकाचार (39) की–ऑफ नॉलेज (40) सागर धर्मामृत (41) बोधामृत सार (42) पांडवपुराण (43) आप्त परीक्षा (44) पार्श्व चरितम् (45) जीवक चिन्तामणि (46) आत्म मीमाशा (47) मेरू मन्दर पुराण (48) युकत्यानुशासन (49) सूर्य प्रकाश (50) भाव संग्रह (51) लघुतत्व स्फोट (52) रत्नकरण्ड श्रावकाचार (53) अमरसेन–चरयु (54) मूलाचार वचनिका (55) पद्म पुरान (56) प्रमेय रत्नमाला (57) यशस्तिलक चम्पू प्रथम भाग (58)

यशस्तिलक चम्पू द्वितीय भाग (59) अर्थ प्रकाशिका (60) निजात्म शुद्धि भावना (61) आत्मानुशासन (62) सुधर्मध्यान प्रदीप (63) मंगलघट में भीतर अमृत (63A) श्रेणिक चारित्र (64) भक्ति मुक्ति सोपान (65) अंगपण्णति (66) पार्श्वस्युदय (67) मल्लिनाथ पुराण (67A) रयणसार (68) विमलनाथ पुराण (69) नेमिनाथ पुराण (70) प्रवचन सार (70A) पाण्डव पुराण (71) सुभाषित रत्नावली (72) धन्यकुमार चरितम् (73) सिद्धप्रिय स्त्रोत (74) सुदर्शन चरित्रम (75) अमृताशीति।

हीरक जयन्ती के मंगल प्रसंग पर उपरोक्त 75 ग्रन्थों के प्रकाशन की योजना के साथ-साथ भारत के विभिन्न नगरों में 75 धार्मिक शिक्षण शिविरों का भी अयोजन किया जा रहा है, तथा 75 पाठशालाओं की भी स्थापना की जा रही है। इस ज्ञान यज्ञ में पूर्ण सहयोग करने वाले 75 विद्वानों का सम्मान एवं 75 युवा विद्वानों को प्रवचन हेतु तैयार करना तथा 7775 युवा वर्ग से सप्तव्यसन का त्याग कराना आदि योजनाएँ भी क्रियान्वित हो रहीं हैं जो निश्चित ही जैन धर्म के विकास में मील का पत्थर साबित होंगी। **आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज करुणा के पुजारी हैं, दयानिधि हैं, वात्सल्य का भण्डार हैं। आपकी शरण में आने वाला व्यक्ति करुणा-दया-वात्सल्य का उपहार पाकर स्वयं जिनागम प्रचार में संकल्पित हो जाता है।**

साहित्य प्रकाशन में सफलता के अन्त: जहाँ पूज्य आचार्य श्री का प्रेरणापूर्ण वरद हस्त है वहीं **परमपूज्य उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज** का मार्गदर्शन एवं **पूज्य आर्यिका श्री स्याद्वदमती माताजी** की साहित्य और ज्ञान की अच्छी प्रभावना हेतु सतत् चिन्तन एव प्रोत्साहन का सदैव वंदनीय योगदान है। **ब्रह्मचारी पं.धर्मचन्द जी शास्त्री एवं विदूषी ब्रह्मचारिणी बहिन प्रभा पाटनी** जी का साहित्य-प्रकाशन में अहर्निश अपने को समर्पित रखना भी अपने आप में स्तुत्य कार्य है। इसी के साथ-साथ प्रकाशन कार्य को गति प्रदान करने में जिन महानुभवों ने अपने अर्थ-द्रव्य का उपयोग कर आगम प्रचार में स्नेह दिया है वे भी सदैव स्मरणीय हैं।

इस अंक में **श्री भारत्तवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र.** से प्राप्त अभी तक मुद्रित पुस्तकों का परिचय दिया जा रहा है। अन्य ग्रन्थों का प्रकाशन कार्य भी गतिशील है जो ४-६ माह में प्रकाशित हो जावेगी।

अध्ययन प्रेमी महानुभवों से निवेदन है कि वे अधिक से अधिक पुस्तकें खरीद कर, उपयोग करते हुए अपना जीवन धर्ममय बनायें तथा इसके प्रकाशन में अपने अर्थ द्रव्य का सदुपयोग करते हुए आगमवाणी प्रचार में यथा सम्भव सहयोग देने की अनुकम्पा करें।

प्रात: स्मरणीय, निमित्त ज्ञानी आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज का इसी प्रकार आगम प्रेममयि मार्गदर्शन युगों-युगों तक मिलता रहे यही प्रार्थना है जिनेन्द्र भगवन से.....और हम सभी श्रावक उनके ज्ञान के आलोक में/ उनके ज्ञान को आत्मसात कर अपना मानवीय जीवन सफल बनाने का सद्प्रयास करते हुए आगम प्रचार में तन-मन-धन से जुटे रहें.....यही आशीष की कामना है **आचार्य प्रवर श्री विमल सागर जी महाराज** से एवं संघस्थ सभी श्रमण संघ एवं आर्यिका संघ से।

सन्मार्ग दिवाकर महोत्सव के मंगल प्रसंग पर आचार्य **श्री के 79 में जन्मोत्सव का** आलोक भारत देश में फैले और वे शतायु होकर हमें सदैव धर्म पथ दिखाते रहें इन्हीं भावनओं के साथ **आचार्य वर्य के विमल युगल चरणों में विनयमयि नमोस्तु.....नमोस्तु......नमोस्तु।**

।। णमो आइरयाणं ।।

वृहद श्री सिद्धचक्र मंडल विधान
(संस्कृत)



चारित्र शिरोमणि, वात्सल्य रत्नाकर, निमित्त ज्ञान शिरोमणि **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मांगलिक प्रसंग पर आगमवाणी प्रसार की सेवा सकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (दतिया) म.प्र का प्रथम पुष्प है।

वृहद श्री सिद्धचक्र मंडल विधान संस्कृत
सकंलन कर्ता - आचार्य श्री विमल सागर महाराज प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. / प्रकाशन वर्ष-१९८९/पृष्ठ संख्या - ३२ + १३२ + ३९२ = ५५६/ प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२)श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली (३) श्री विनोद जैन विनोद ट्रेडर्स, ११५९/८ महालक्ष्मी मार्केट, कूंचा महाजनी - दिल्ली (४) श्री महेन्द्र जैन, फैन्सी आभूषण भण्डार, सराफा बाजार, जबलपुर (म.प्र.)
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -१

भारत देश आध्यात्मिकता की दोड़ में विश्व के शिखर पर विराजमान है। आध्यामिकता का मूल बीज अर्हद् भक्ति रही है। पूज्य पुरुषो के प्रति भक्ति पूजा, स्तुति, वि-य-आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा के मूल मंत्र है। जैनाचार्यों ने दो धारायें दी हैं - द्रव्य पूजा और भाव पूजा। द्रव्य पूजा का अधिकारी श्रावक है और वीतरागी सन्त मुनिराज आदि भाव पूजा के अधिकारी हैं। द्रव्यशुद्धि के बिना भाव शुद्धि कभी नही होती। साधन से ही साध्य की सिद्धि होती हैं। भाव से द्रव्य नही बनता अपितु द्रव्य से भाव बनते हैं।

भारतीय संस्कृति में जैनाचार्यों की अनादि परम्परा अक्षुण्ण रही है। इन्होंने मानव उत्थान हितार्थ अनेक अनुष्ठान-विधान आदि क्रियायें जन मानस को बताई। इन्ही अनुष्ठानों के माध्यम से मानव अपनी क्रिया शुद्धि के बल से द्रव्य शुद्धि को साधता हुआ परिणामों की निर्मलता से भावशुद्धि की साधना मे अग्रणी बन जाता है। श्रावक द्रव्य शुद्धि के द्वारा द्रव्यपूजा करता हुआ परिणामो की निर्मलता से भावपूजा का भी अधिकारी हो जाता है। यदि श्रावक द्रव्य का, अनुष्ठानादि का आलम्बन नही ले और सीधा भावपूजा करे तो उसे न पुण्य मिलेगा और न धर्म ही।

समस्त सुखो का साधक, मोक्षसिद्धिदायक, दुखो का नाशक, ऋद्धियों का भासक, समस्त कामनाओं का पूरक सिद्धचक्र विधान जैन दर्शन का एक अनुपम अनुष्ठान है जिसकी परम्परा अनादिकालीन है। सिद्ध-चक्र-जैसा उत्तम नाम है - सिद्ध यानी सिद्ध परमेष्ठी, चक्र यानी समूह, अनन्त सिद्ध परमात्माओं का समूह आत्मसिद्धि प्राप्तकर सिद्धालय मे विराजमान है, उन सिद्ध परमेष्ठी की वन्दना, स्तुति, गुणवर्णन जिसमे है, ऐसा सिद्धि का प्रदाता सिद्धचक्र अचिन्त्य यज्ञ है, जिसकी आहुति मे करमाञ्जन को प्रक्षालित कर भव्य आत्मा पूर्ण शुक्ल हो सिद्धि को प्राप्त करता है।

इस कृति के प्रारम्भ में अष्टान्हिका व्रत कथा-आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज के उपदेश से सकलित/सिद्धचक्र विधान का रहस्य (उपाध्याय मुनिश्री भरतसागर महाराज) / सिद्धचक्र माहात्म्य (आर्यिका स्याद्वादमती जी) दिया गया है जो श्रावकों के चिंतन/मनन एव अनुकरण हेतु आवश्यक है। सिद्धचक्र मण्डल का मानचित्र एवं यथा स्थान आवश्यक चित्र दिये गये हैं। ग्रन्थ मे पूर्ण विधान हेतु क्रमानुसार अध्याय दिये है जिससे विधान करने / कराने वाले को सरलता रहे। यथा स्थान आवश्यक निर्देश भी दिये गये है।



विमल भक्ति संग्रह

युग प्रमुख, करुणानिधि **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार हेतु संकलित अनेकान्त विद्वत परिषद - सोनागिरि (म.प्र.) का यह द्वितीय पुष्प है।

विमल भक्ति संग्रह
निर्देशक - परमपूज्य उपाध्याय श्री भारत सागर जी महाराज / पृष्ठ संख्या - २० + ४८४ = ५१४ / प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (दतिया) म.प्र. / प्राप्ती स्थान- (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली - ११० ०३२ / प्रकाशक वर्ष - १९९२ (द्वितीय प्रकाशन) मुद्रक -राधा प्रेस-दिल्ली ११० ०३१।
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -२

सम्यक्दर्शन व ज्ञान की प्राप्ति हो जाने के पश्चात् भी राग-द्वेष रूप अशुभ परिणामों की निवृत्ति चारित्र धारण किये बिना नहीं हो सकती अतः मोहरूप अंधकार को नाशकर, रागद्वेष की निवृत्ति के लिये साधुजन चारित्र की शरण को प्राप्त होते हैं। उस सम्यक् चारित्र के पालन में आत्मा का प्रबल शत्रु "प्रमाद" बार-बार परेशान कर जीव को पथ भुला देता है। चारित्र की रक्षार्थ आचार्यों ने मुनियों / आर्यिकाओं के लिए कृतिकर्म का विवेचन किया है। साधु के करने योग्य कार्य को कृतिकर्म कहते हैं। इन कृतिकर्म का साधु अहोरात्रि विधिवत् अच्छी तरह पालन कर सके इस बात को लक्ष्य में रखकर इस कृति का प्रकाशन किया गया है। क्योंकि कोई भी कार्य कारण के बिना होना सम्भव नहीं है।

साधुओं के संयम आराधना कार्य में यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध हो तथा संयम आराधना रुप कारण, यथाख्यात चारित्र रुप कार्य में साधक होगा। इसी लक्ष्य को लेकर इस पुस्तक का सम्पादन आर्यिका स्याद्वादमती जी ने अपने गुरुवर के आशीर्वाद से पूर्ण किया है।

पुस्तक में संकलित सामग्री छह खण्डों में वर्णित है। इन छहों खण्डों में भक्ति के विविध स्रोत / भक्ति/ प्रतिक्रमण / सामायिक पाठ / क्रिया विधि/ दीक्षा विधि/ उपाध्याय (पदप्रदान) विधि / आचार्य पद स्थापन विधि आदि आदि अत्यावश्यक पाठों का समावेश है जो विशेषतौर से साधुओं के लिये अति आवश्यक एवं उपयोगी है। ■

धर्ममार्ग सार

वात्सल्य रत्नाकर, निमित्त ज्ञानी परमपूज्य **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर आगम वाणी के प्रचार-प्रसार हेतु संकल्पित अनेकान्त विद्वत परिषद्-सोनागिरि (म.प्र.) का यह तृतीय पुष्प है।

धर्म मार्ग सार **आचार्य मुनैप्पाडियार**
अनुवादक - पं. श्री मल्लिनाथ शास्त्री, मद्रास/ प्रकाशन वर्ष - वी.नि.सं. २०१५ /मूल्य- १०=०० पृष्ठ संख्या - १४+२१४ = २२८/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरी (दतिया) म.प्र. /प्राप्ति स्थल - (१) आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड, दिल्ली - ११० ०३ २/ मुद्रक - ललित कला प्रिन्टर्स - जयपुर।
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -३

"अरनेरिच्चारं" (धर्म-मार्ग सार) दिगम्बराचार्य मुनैप्पाडियार द्वारा विरचित नीति प्रधान ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में कुल २२६ पद्य है। प्रस्तुत ग्रन्थ में जिनेन्द्र भगवन्, जिनवाणी और जैनधर्म आदि पर सुन्दर ढंग से विवेचन किया गया है। ग्रन्थ में प्रतिपादित लौकिक धर्म, सदाचार, सत्यवृत्ति, सद्विचार, सद्गृहस्थ आदि के विषय में जो-जो पद्य कहे गये हैं वे सबके सब सारे मत-मतान्तर वालों के ग्रहण करने योग्य है ....और वे ग्रहण करते भी हैं। आचार्य श्री ने शिक्षाप्रद विषयों को सुन्दर, सुगम और ललित मार्ग से व्या-वर्णित कर लक्ष्यों को मुग्ध कर दिया है यह प्रशंसनीय है।

उक्त ग्रन्थ में आचार्य महाराज ने अरहन्त भगवान के उपदेशात्मक मणि-माणिंक्यमय सम्यकदर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यकचारित्र को आधार स्तम्भ बनाकर गृहस्थ धर्म और यति धर्म का विवेचन मनोज्ञरूप में किया है। ग्रन्थ रचनाकार ने सभी विषयों को अपनी मधुरतम तमिल भाषा में रोचकता से अभिव्यक्त किया है। ग्रन्थ अवलोकन पश्चात ही स्पष्ट हो जाता है कि आचार्यवर्य (ग्रन्थकार) भाषा, व्याकरण, प्रतिभा आदि के अच्छे ज्ञाता थे एवम् तमिल भाषा के ओजस्वी विद्वान थे। ग्रन्थ में वर्णित विवेचन शैली हृदयग्राही एवं सर्व जनानन्ददायिनी है।

तमिल भाषी ग्रन्थ **"अरनेरिच्चार"** का हिन्दी अनुवाद विद्याभूषण **पं. श्री मल्लिनाथ जी शास्त्री** ने, हिन्दी भाषी जनता के कल्याण हेतु अत्यधिक कठिन श्रम से किया है जो वंदनीय है।

जब गंध अधिक बढ़ती, तब बाग उजड़ जाते हैं,
आवाज अधिक बढ़ती, तब राग उजड़ जाते हैं।
हर चीज की एक सीमा है फिर भी अगर मानो,
जब स्वार्थ अधिक बढ़ता, व्यवहार बिगड़ जाते हैं।

— आरती "जयवीर"

आराधना कथाकोश

युग प्रमुख, सन्मार्ग दिवाकर, अतिशय योगी, बीसवीं शताब्दी के अमर सन्त **परमपूज्य आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मांगलिक प्रसंग पर माँ जिनवाणी प्रसार के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (दतिया) म.प्र.का 4 था पुष्प है।

आराधना कथाकोश **ब्रह्मचारी श्री नेमीदत्त**
हिन्दी लेखक–श्री उदयलाल जी कासलीवाल/ प्रकाशक भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्रकाशन वर्ष–1993/ पृष्ठ संख्या–16+456 = 472/ प्राप्ती स्थान (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–4

पूज्य कुन्दकुन्दाचार्य आम्नाय के तपस्वी **मुनिराज श्री प्रभाचन्द्र** द्वारा संसार के उपकारार्थ सरल और सुबोध गद्य संस्कृत भाषा मे रचित **आराधना कथाकोश** ग्रन्थ के आधार पर प्रस्तुत प्रकाशित कृति **श्री उदयलाल जी कासलीवाल** ने हिन्दी भाषा में रचना कर जैनागम कथा साहित्य को जन श्रावकों में प्रसारित कर एक वंदनीय कार्य किया है।

आराधना का एक अर्थ जैन शास्त्रानुसार **''कल्याण की प्राप्ति के लिए''** भी है तथा **कथाकोश का आशय कथाओं का खजाना** है। इस प्रकार प्रस्तुत कृति के नाम से ही पुस्तक का परिचय एवम् ग्रन्थ में समाहित विषय सामग्री का परिचय स्पष्ट हो जाता है।

सम्यक दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवम् सम्यक् चारित्र तथा सम्यक्त्व ये संसार बन्धन के नाश करने वाले हैं। इनका स्वर्ग व मोक्ष की प्राप्ति के लिए भक्तिपूर्वक शक्ति के अनुसार उद्योत, उद्यमन, निर्वाहण, साधन और निस्तरण करने को आचार्य–''आराधना'' कहते है। उपरोक्त पांचों के संक्षिप्त अंश की जानकारी निम्नानुसार है–

(1) **उद्योत**– सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक चारित्र और सम्यक्तप–इनका संसार में प्रकाश करना लोगों के हृदय पर इनका प्रभाव डालना उद्योत है।

(2) **उद्यमन**– स्वीकार किये हुए उक्त सम्यग्दर्शनादि का पालन करने के लिये निरालस होकर बाह्य और आन्तरंग में यत्न करनाउद्यमन है।

(3) **निर्वाहण**– कभी कोई ऐसा बलवान कारण उपस्थित हो जाय, जिससे सम्यक् दर्शनादि के छोड़ने की स्थिति बन जाये तो उस समय अनेक प्रकार के कष्ट उठाकर भी उन्हें नहीं छोड़ना निर्वाहण है।

(4) **साधन**– तत्वार्थादि महाशास्त्र के पालन के समय जो मुनियों के उक्त दर्शनादि की राग रहित पूर्णत होना साधन कहलाता है।

(5) **निस्तरण**– उपरोक्त दर्शनादि का मरण पर्यन्त निर्विघ्न पालन करना वह निस्तरण है।

जैनाचार्यों के द्वारा आराधना हेतु उपरोक्त वर्णित पाँच क्रमानुसार, प्रस्तुत कृति कथाकोश के रूप में प्रकाशित है। कथानक के अध्ययन से श्रावक जगत आगमगूढ को सरलता से ग्राह्य कर एवं जीवन में उन्हें अंगीकारकर जीवन के लक्ष्य मोक्ष की ओर प्रयत्नशील हो सकता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की भाषा सरल, सुबोध एवम् धाराप्रवाह है जिसके फलस्वरूप ग्रन्थ अध्ययन/ चिंतन/ मनन में जिज्ञासा बनी रहती है। इस हेतु कृति के लेखक श्री उदयलाल जी कासलीबाल साधुवाद के पात्र है।

अष्ट पाहुड

वात्सल्य रत्नाकार, चारित्र चक्रवर्ती प्रातः स्मरणीय, परमपूज्य आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयंती के मंगल प्रसंग पर जैनागम साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु संकल्पित अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का यह छटवाँ पुष्प है।

अष्ट पाहुड आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी
हिन्दी अनुवाद - पं. पन्नालाल साहित्याचार्य / प्रकाशन वर्ष १९८९-९०/ पृष्ठ संख्या - ५०+७१० = ७६०/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ती स्थान (१) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली - ११००३२/ मुद्रक - वर्द्धमान मुद्रणालय वाराणसी ।
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -६

तीर्थंकरों के उपदेश रूप द्वादशाग वाणी से सम्बद्ध ज्ञानरुप ग्रन्थ को पाहुड कहा जाता है । आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी के सभी ग्रन्थ "पाहुड" कहे जाते है । पाहुड अर्थात प्राभृत जिसका अर्थ है भेंट । आचार्य कुन्दकुन्द के सभी ग्रन्थों की प्रामाणिकता का आधार आपके द्वारा रचित प्रायः सभी ग्रन्थों में प्रारम्भ मे मंगलाचरण में कहा गया है कि - श्रुत केवलियो ने जो कहा है मैं वही कहूँगा । तात्पर्य यह कि मैं श्रुतकेवलियों द्वारा प्ररूपित तत्वज्ञान का मार्ग वक्ता हूँ - कर्त्ता नही ।

प्रस्तुत अष्ट पाहुड (अट्ठ पाहुड़) में उपदेश प्रधान आचारण मूलक तथा तत्वचिन्तन युक्त आठ पाहुड ग्रन्थ निबद्ध है । इनमें आचार्य कुन्दकुन्द के आचार्यत्व अर्थात विशाल श्रमणसंघ के अनुशास्ता रूप के सर्वत्र दर्शन होते हैं । अष्ट पाहुड ग्रन्थ में कुल ५०३ गाथाएँ हैं। इसमें ग्रन्थकार ने आठ पाहुड़ों के माध्यम से जैनधर्म-दर्शन का हार्द रत्नत्रय धर्म, श्रमणा चार और सच्चे श्रामण्य आदि विषयों का बड़ी ही स्पष्टता से विवेचना करते हुए शिथिलाचार से सतत् सावधान रहने के लिए बारम्बार आगाह किया है. ताकि विशुद्ध वितराग जैनधर्म द्वारा प्रतिपादित आत्मकल्याण के विशुद्ध मार्ग पर जीव सदैव अग्रसर रहे । इस दृष्टि से यह ग्रन्थ एक आदर्श. जीवन को प्रकाशित करनेवाली एक महान अमरकृति है जो जीवों को युगों-युगों तक आलोकित करती रहेगी ।"

प्रस्तुत ग्रन्थ में निम्न पाहुड़ का गाथा /टीका/विशेषार्थ के साथ वर्णन किया गया है -

(१) **दसंण पाहुण** - इस पाहुड़ में सम्यग्दर्शन, की महत्ता का विवेचन ३६ गाथाओं में किया गया है ।

(२) **चारित्त पाहुण** - इसमें मुख्यतः सम्यक् चारित्र का स्वरूप और इसके भेद-प्रभेदों का विवेचन ४५ गाथाओं में किया गया है ।

(३) **सुत्त पाहुड़** - इस पाहुड़ में अरंहत द्वारा प्ररूपित गणधर देवों द्वारा गुम्फन किये गये सूत्र वर्णित है जिनसे श्रमण अपना परमार्थ साधते है । इसमें २७ गाथाएँ हैं ।

(४) **बोध पाहुड़** - इसमे ६२ गाथाएँ हैं जिनमें आयतन, चैत्यगृह, जिनप्रतिमा, दर्शन, जिनबिम्ब, जिनमुद्रा, आत्मज्ञान, देव, तीर्थ, अर्हन्त तथा प्रवज्य के माध्यम से दिगम्बर धर्म और मुनिचर्या का स्वरूप प्रतिपादित किया गया है ।

(५) **भाव पाहुड़** - इस पाहुड़ में भावशुद्धि की महिमा का उत्कृष्ट प्रतिपादन १६३ गाथाओं में किया गया है ।

(६) **मोक्ख पाहुड़** - इसमें १०६ गाथाएँ हैं जिनमें बन्ध और मोक्ष का स्वरूप, बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा मोक्ष के कारण रूप आदि की महत्ता बताई गई है ।

(७) **लिंग पाहुड़** - इस पाहुड़ में श्रमण के लिङ्ग (वेष) को लक्ष्य करके उसके निषिद्ध आचरणों के प्रति सावधान किया गया है । इसमें २२ गाथाएँ हैं

(८) **शील पाहुड़** - यह इस ग्रन्थ का अंतिम पाहुड़ है जिसमें शील का महत्व ४० गाथाओं में वर्णित है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद वयोवृद्ध / ज्ञानानुभवि पं. डॉ. पन्नालाल जी साहित्याचार्य ने किया है जो पूर्णतः आगमानुकूल है ।

पञ्चास्तिकाय

चारित्र शिरोमणी सन्मार्ग दिवाकर **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मंगल प्रसंग पर आगम वाणी के प्रचार -प्रसार हेतु संकल्पित भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् -सोनागिरि (दतिया) म.प्र.) का यह सातवाँ पुष्प है ।

पञ्चास्तिकाय **आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी**
हिन्दी अनुवाद - श्री लाल जी न्यायतीर्थ / प्रकाशन वर्ष - १९८९-९०/ पृष्ठ संख्या - १२+४०६ = ४१८ / प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद - सोनागिरि (म.प्र.)/ प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बाँसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली - ११००३२/ प्रकाशन - विनोद कुमार जैन, शहदरा - दिल्ली - ११००३२.
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -७

आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी द्वारा रचित इस ग्रन्थ को पञ्चास्तिकाय "**संग्रह**" अर्थात "**पंचत्थि संग्रहो**" कहा गया है । इसमे सम्यग्दर्शन के विषयभूत जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश - इन पाँच आस्तिकाय द्रव्यों का विस्तृत विवेचन है । साहित्य के क्षेत्र में आचार्य कुन्दकुन्द की अलौकिक विद्वता, शास्त्र ग्रथन - प्रतिभा एवं सिद्धान्त ग्रन्थों के सार का आध्यात्मिक और द्रव्यानुयोग के रुप में प्रस्तुत करने का अपना अलग ही वैशिष्ट्य है । तीर्थंकर महावीर और गौतमगणधर के बाद यह पहला ही अवसर था, जबकि ज्ञानाभ्यासियों को तत्त्वचिन्तन हेतु एक व्यवस्था आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी से प्राप्त हुई जो आज भी आलौकित है । सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र को अंगिकार कर भव्यजन अपना कल्याण कर परमात्मा बन सकें इस हेतु आचार्य कुन्दकुन्द ने समन-प्राभृत, पंचास्तिकाय संग्रह, प्रवचन सार इन तीन ग्रन्थो की प्रधानतय रचना की एवं इनके सहायक अन्य प्राभृतो (अष्ट पाहुड) की रचना प्राकृत भाषा मे की जो कि उस समय की प्रचलित भाषा थी ।

प्रस्तुत ग्रन्थ मे मूल गाथा की हिन्दी व्याख्या/ संस्कृत व्याख्या आगमानुसार सरल भाषा में विद्वान मनीषि श्रीलाल जी न्यायमूर्ति ने की है, जिनका उपकार कभी नही भुलाया जा सकता । ■

आचार्य महाराज ने एक दिन हमें बताया था हमारे गुरुदेव महावीर कीर्ति जी महाराज से हमारे सम्बन्ध में कोई जाकर कुछ कहता तो सदैव कहते – विमलसागर को मैंने ऐसे शुभ मुहूर्त में दीक्षा दी है कि वो इस युग में धर्म की महान् प्रभावना करेगा।

उनका जीवन चिह्न उनकी महान निर्भयता का प्रतीक है। यह किसी से डरने वाला नहीं है, धैर्यशील है। उसे किसी की चिन्ता नहीं है, यह धर्म के बड़े-बड़े कार्य करेगा।

– उपाध्याय मुनि भरत सागर जी

पंच स्रोत

जिन-भक्ति के अमर प्रेरणा स्रोत, तीर्थोद्धारक चूड़ामणि आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती के मंगल अवसर पर जिनवाणी प्रचार-प्रसार हेतु संकल्पित भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (म.प्र.) का यह आठवाँ पुष्प है।

पंच स्रोत
अनु. - डॉ. पन्नालाल शास्त्री सहित्याचार्य प्रकाशन वर्ष - १९८९-९० / पृष्ठ संख्या - ८ + ५० + ४२ + ५२ + ३४ + ३२ = २१८/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् -सोनागिरि (म.प्र.)/ प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर जी संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति - लोहारिया (बाँसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली - ११००३२ / मुद्रक कमल प्रिन्टर्स - मदनगंज - किशनगढ़ (राज.)
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -८

ज्ञान मनीषी डॉ. पन्नालाल शास्त्री जी देश के जाने - माने विद्वान हैं जिनका जैनागम ज्ञाताओं में अपना विशिष्ट स्थान है। आपने अनेक ग्रन्थों का अनुवाद अपने गहन ज्ञान से किया है। आदिनाथ पुराण आपका श्रेष्ठ अनुवाद ग्रन्थ माना जाता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में, आगम के श्रेष्ठ निम्न पाँच स्रोत का समावेश है।

(१) भक्तामर स्रोत।

(२) कल्याण मंदिर स्रोत।

(३) विषापहार स्रोत।

(४) जिनचतुर्विंशतिका।

(५) एकीभाव स्रोत।

प्रत्येक स्रोत संकलन में मूल संस्कृत श्लोक / हिन्दी पद्यानुवाद / संस्कृत टीका / अन्वयार्थ / भावार्थ का विस्तृत उपयोगी विवेचन है जो विद्या व्यसनियों को पथ प्रदर्शक का कार्य करता है। प्रस्तुत कृति में इन पाँचों स्रोत का भाषा पाठ भी दिया गया है जो संस्कृत न जानने वालों के लिये उपयोगी है। ■

देश भक्ति बेची नहीं जाती

दो देशों का आपसी युद्ध थम चुका था। स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा देश पूरी तरह स्वतन्त्र हो गया था। एक बुढ़िया जिसके पांचों पुत्र अपने पिता सहित स्वतन्त्रता के काम आये थे की कुटिया में वहां के राष्ट्रपति आये और उसके पति एवं पुत्रों को श्रद्धांजलि देने के पश्चात बोले - माँ! आज से सरकार तुम्हारा सारा खर्चा वहन करेगी, इसके अतिरिक्त जो आप चाहेंगी आपकी बात पूरी की जायेगी।

बुढ़िया दहाड़ी और कहा - बेटा! मेरे पूरे परिवार की कुर्बानी को खरीदना चाहते हो ताकि आने वाली पीढ़ियां उन्हें बजाय सिजदा करने के उनके नाम पर थूकें और उन्हें बिके हुए शहीद कहकर पुकारें। अभी सारे देश को और कई प्रकार की कुरबानियों की आवश्यकता है। मुझ पर किये जाने वाले खर्च को देश की उन्नति में लगाओ। मैं जीवन पर्यन्त अपनी मेहनत से ही अपना पेट पालूँगी।

उस देश का राष्ट्रपति शर्म से सिर झुकाए लौट गया।

पुरुषार्थ सिद्धयुपाय

करुणानिधि, सन्मार्ग दिवाकर **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की *हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर आगमवाणी* प्रचार-प्रचार हेतु संकल्पित भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का यह नवमां पुष्प है।

पुरुषार्थ सिद्धयुपाय
श्री अमृत चन्द्राचार्य विरचित

हिन्दी टीकाकार - पं. मक्खन लाल शास्त्री तिलक/ प्रकाशन वर्ष - १९८९-९०/ पृष्ठ संख्या - १८ + २६२ = २८०/ प्रकाशक -भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (म.प्र.)/ प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर जी संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति - लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड - दिल्ली -११००३२/ मुद्रक -कमल प्रिंटिंग प्रेस -वाराणसी।

हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -९

प्रस्तुत ग्रन्थ पुरुषार्थ सिद्धयुपाय - यथा नाम तथा गुण से परिपूर्ण हैं - अर्थात इस ग्रन्थ में पुरुषार्थ सिद्धि का उपांय बताया गया है। पुरुषार्थ ४ हैं - (१) धर्म (२) अर्थ (३) काम (४) मोक्ष। प्रथम तीन्न पुरुषार्थ गृहस्थों के लिये हैं तथा अन्तिम मोक्ष पुरुषार्थ मुनिगणों हेतु है।

पुरुष का प्रयोजन पुरुषार्थ तथा उसकी सिद्धि का उपाय पुरुषार्थ सिद्धयुपाय है। इसलिये ग्रन्थ का नाम यथार्थ गुणवाचक है। यहाँ शंका यह उपस्थित होती है कि इसमें स्त्रियों/ श्राविकाओं का नाम उल्लेखित नहीं है। अतः यह ग्रन्थ मात्र पुरुषों के लिये ही बनाया गया है। समाधान में यह है कि - इस ग्रन्थ में मात्र मोक्ष मार्ग का ही वर्णन है, और मोक्षमार्ग के प्रकरण में स्त्रियों का भी ग्रहण हो जाता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रमाण से चैतन्य आत्मा - स्त्री-पुरुष दोनों ही हैं अतः पुरुष और स्त्री (श्रावक और श्राविका) दोनों के लिये ही यह शास्त्र रचित है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में २२६ श्लोक हैं, जिनकी अन्वयार्थ / विशेषार्थ, मनीषी पं. मक्खनलाल जी शास्त्री ने अपने गहन गूढ़ ज्ञान से विवेचना की है। पुस्तक की भाषा सरल एवं बौद्धगम्य है जो अल्प बुद्धि धारकों को भी सहजता से समझ आ जाने वाली है। ■

अहं क्या है . . .?

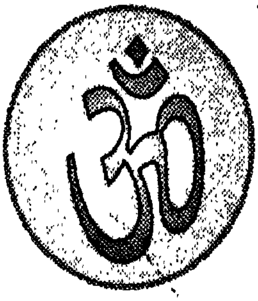
चीन का एक प्रधानमंत्री था . . . . गोत्से। वह ध्यान सम्प्रदाय के एक महान साधक के पास गया और जाकर बोला अहं की परिभाषा जानना है . . . **अहं क्या है ?**

साधक गम्भीर हो गया। बहुत पहुँचा हुआ साधक था। उसने कहा – क्या फालतू बकवास कर रहे हो। चले जाओ यहाँ से। और इतना डाँटा की वह आश्चर्य में पड़ गया।

प्रधानमंत्री का तन गुस्से से भर गया। साधक देख रहे थे। उन्होंने जब देखा कि गुस्से की मुद्रा बिलकुल ठीक बन गई है तब बोले – प्रधानमंत्री महोदय ! इसी का नाम है अहं।

चर्चा सागर

करुणानिधि, वात्सल्य मूर्ति, धर्मयोगी **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अर्न्तगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र का 10 वाँ पुष्प है।



चर्चा सागर स्वर्गीय पण्डित चम्पालाल जी विरचित
स्वर्गीय पण्डित चम्पालाल जी विरचित/ पृष्ठ सख्या 30 + 576 = 606 प्रकाशन वर्ष- 1994/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ति स्थान- (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ, (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाडा) राज. (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या-10

स्वर्गीय पण्डित चम्पालाल जी ने इस प्रस्तुत ग्रन्थ मे, आगम ग्रन्थों के प्रमाण रूप का श्लोक सहित वर्णन कर श्रावको की अनेक शकाओ का समाधान चर्चानुरूप किया है, इसीलिए ग्रन्थ का नाम **चर्चा सागर** रखा है। ग्रन्थ मे 254 चर्चाऐ है जिनमे अनेकों शकाओं का समावेश एव निराकरण है। ग्रन्थ मे वर्णित कुछ प्रमुख शकाएँ इस प्रकार से है-

- अष्टमंगल द्रव्य कौन-कौन है।
- बाईस परिषह किस-किस कर्म के उदय से होती है।
- इस पचम काल मे मुनि कहाँ ठहरे।
- जप करते समय विघ्न आ जाय तो उसका प्रायश्चित क्या है?
- पात्रदान-कुपात्रदान का फल तो सुना है परन्तु लोभी को दिया हुआ दान कैसा?
- सम्यग्दृष्टियो के विशेष चिह्न क्या है?
- ससारी जीव मरकर कितनी देर बाद नया शरीर व आहार ग्रहण कर लेता है।
- अवसर्पिणी काल मे मुनष्यों की आयु किस हिसाब से घटती है।
- स्त्रियो के लिए ध्यान वंदना करने की विधि क्या है?
- भगवान की पूजा बैठकर करनी चाहिये या खड़े होकर?
- खडे होकर पूजा करने मे क्या दोष है?
- अष्टाग पचाग और पार्श्वद्धशायि नमस्कार का स्वरूप क्या है?
- पूजा करते समय यदि किसी के हाथ से प्रतिमा पृथ्वी पर गिर जाय तो उसका प्रायश्चित क्या है?
- क्या तीसरे नरक से निकले जीव तीर्थंकर हो सकते है?

दैनिक जीवन में उत्पन्न विभिन्न शंकाओं का समाधान प्रस्तुत ग्रन्थ में चर्चा के अनुरूप किया गया है। शका-समाधान का उदाहरण इस प्रकार है-

- **तीर्थंकर आदिक पदवीधर पुरुषों पर जो चमर दुलाये जाते है उनका प्रमाण क्या है?**

समाधान - श्री तीर्थंकर केवली भगवान के तो सदा चौसठ चमर दुलते रहते है। चक्रवर्ती के बत्तीस, नारायण के सोलह, महा मण्डलेश्वर के आठ, अधिराज के चार, और महाराज के दो चमर दुलते है। सो ही लिखा भी है-

तीर्थंकराणामिति चामराणि चत्वारि षष्ठयात्यधिकानि नित्यं।
अर्द्धर्द्धमानानि भवन्ति तानि चक्रेश्वराद्यावदसौ सुराजा।।

ग्रन्थ का अध्ययन से, दैनिक शकाओ का समाधान, आगम ग्रन्थो मे वर्णित आधार पर दिये होने से ज्ञानार्जन तो होता ही है साथ ही मानव हृदय का विकास भी होता है। ग्रन्थ की भाषा सरल सहज हृदयग्राह्य है जिससे विषय वस्तु के समझने मे सरलता हो जाती है। **स्वर्गीय पं. चम्पालाल जी** ने प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना कर सामान्य ज्ञान की आगम तथ्य सहित जानकारी देकर एक परोपकारी कार्य किया है। इस हेतु आप साधुवाद के पात्र है।

चन्द्र प्रभ चरितम्

चारित्र शिरोमणि, वात्सल्य रत्नाकर, निमित्त ज्ञानी वयोवृद्ध **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ति के मांगलिक प्रसंग पर आगमवाणी प्रचार-प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (म.प्र.) का ग्यारहवाँ पुष्प है।

चन्द्रप्रभ चरितम्
श्री वीरनन्दि - विरचित

अनुवादक एवं सम्पादक - श्री अमृतलाल जी शास्त्री जैनदर्शनाचार्य, वाराणसी/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अने -कान्त विद्वत परिषद्-सोनागिरि / प्रकाशन वर्ष - १९८९-९०/ पृष्ठ संख्या - १४ + ४० +५५६ + ४ = ६१४ / प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) श्री भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सोनागिरि (दतिया) म.प्र./(३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड-दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -११

श्री वीरनन्दि विरचितं - चन्द्रप्रभ चरितम् ग्रन्थ, वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों में से **आठवें तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभ जी** के जीवन वृत्तान्त का आख्यान है। प्रस्तुत चन्द्रप्रभ-चरित ग्रन्थ की रचना ग्यारहवीं शती में हुई है। इस चरित की रचना में छन्द/अलंकार व रस भावादि काव्यगुणों का विकास पूर्णरूपेण समाहित है। ग्रन्थ के पद्यों में क्लिष्टता और दूरान्वय न होने से पढ़ते ही समझ में आ जाते हैं। कवित्व की दृष्टि से प्रस्तुत महाकाव्य प्रशंसनीय है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की कथा के नायक एक जैन तीर्थंकर हैं। ग्रन्थ में पद-पद पर प्रसंगानुसार जैन तत्वों का विवरण दिया गया है। जैन मान्यता का यह एक सुदृढ़ आधार स्तम्भ है कि आत्मा-अनादि-निधन है, अमर और शाश्वत है। अतः व्यक्ति जब जैसा है वह बहुत अंश में उसके पूर्व जन्म - जन्मान्तरों में किये गये पाप पुण्यात्मक कर्मों का परिणाम है। इसी बात को श्रृंखलाबद्ध है बताने हेतु प्रायः कथानक के अनेक, पूर्व जन्मों का भी वर्णन किया जाता है और यह वर्णन केवल इहलौकिक मात्र नहीं रहता, अपितु इस लोक में किये गये अच्छे-बुरे कर्मों का परिणाम स्वर्ग के सुख भोग या नरक की यातनाओं के सहन द्वारा दर्शाया जाता है। जैन साहित्य में उक्त बातों का कितना महत्व है यह ग्रन्थ में प्रस्तुत चरित में कथानक चन्द्रप्रभ तीर्थंकर के छह पूर्व भवों का वर्णित वर्णन से दृष्टीय है। ग्रन्थ में मुख्यतः गर्भ - जन्म - तप - ज्ञान और निर्वाण कल्याणकों का वर्णन प्रधानतः किया गया है।

ग्रन्थ की रचना एवं सम्पादन हस्तलिखित मूल -१२/संस्कृत व्याख्या-३ एवं पञ्जिका-२ की प्राचीन प्रतियों के आधार पर की गई है। प्रस्तुत ग्रन्थ में चरितनायक के राजा श्रीवर्मा/ श्रीधर देव / सम्राट अजितसेन / अच्युतेन्द्र/ राजा पद्मनाभ / अहमिन्द्र और चन्द्रप्रभ इन सात भवों का वर्णन विस्तार से किया गया है। ग्रन्थ की रचना १८ सर्गों में की गई है। इनमें से प्रारम्भ के प्रन्द्रह सर्गों में अतीत का एवं अन्तिम तीन सर्गों में कथानायक का वर्तमान वर्णन है। प्रथम सर्ग में ८५ श्लोक, द्वितीय सर्ग में १४३ श्लोक, तृतीय सर्ग में ७६ श्लोक, चतुर्थसर्ग में ७८ श्लोक, पंचम सर्ग में ९१ श्लोक, षष्टम सर्ग में १११ श्लोक, सप्तम सर्ग में ९४ श्लोक, अष्टम सर्ग में - ६२ श्लोक, नवम् सर्ग में ५९ श्लोक, दशमः सर्ग में ७९ श्लोक, एकादश सर्ग में ९२ श्लोक, द्वादसः सर्ग में -१११ श्लोक, त्रयोदशः सर्ग में ६२ श्लोक, चतुर्दशः सर्ग में ७१ श्लोक, पञ्चदशः सर्ग में १६२ श्लोक, षोड़सः सर्ग में ७० श्लोक, सप्तदशः सर्ग में ९१ श्लोक एवं अष्टादशः सर्ग में १५४ श्लोक है। ग्रन्थ के अन्त में परिशिष्ट में अठारह सर्गों की पञ्जिका दी गईहै। द्वितीय परिशिष्ट में श्लोकानुक्रमणिका, तृतीय में टीकन्तर्गत ग्रन्थान्तरों के अवतरण की सूची, मूल ग्रन्थ की सूक्तियाँ, मूलग्रन्थगत विशिष्ट शब्द सूची, व्याख्यान्तर्गत विशिष्ट शब्द सूची, पञ्जिकान्तर्गत विशिष्ट शब्द सूची, संकेत विवरण दिये गये है जो कि ग्रन्थ के अध्ययन में उपयोगी है.

परीक्षा मुख

शान्ति सुधामृत के दानी, तेजस्वी अमर पुञ्ज **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मंगल अवसर पर जिनवाणी प्रसार हेतु संकल्पित अनेकान्त विद्वत् परिषद् सोनागिरि (म.प्र.) का यह १३ वाँ पुष्प है।

परीक्षा मुख आचार्य माणिक्यनन्दी
सम्पादक - स्व. पं. मोहनलाल जी शास्त्री, जबलपुर/पृष्ठ संख्या - ८+१४०=१४८ मूल्य - रु. १५/- मात्र/प्रकाशन वर्ष - १९८९-९० प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. /प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति-लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका - लोनी रोड़, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -१३

मोक्षमार्ग की प्राप्ति के लिये जीवादिक तत्त्वों का निर्णय होना अनिवार्य है, जो कि प्रमाण के बिना कदापि सम्भव नहीं है। अतः प्रमाण का स्वरूपादि जानना प्रत्येक आत्महितैषी के लिये आवश्यक है ....और न्यायशास्त्र के महापण्डित **आचार्य श्री माणिक्यनन्दी** जी ने अपने ग्रन्थ परीक्षामुख में जैन न्यायशास्त्र के आद्य न्याय सूत्रों को लिखा है जो सर्व साधारण को प्रमाण के स्वरूपादि का बोध करा सके।

प्रस्तुत ग्रन्थ मूलभाषा संस्कृत / हिन्दी अर्थ/संस्कृत अर्थ / विशेषार्थ के साथ भाषा टीका के रूप में प्रकाशित किया गया है, जिससे शासकीय संस्कृत महाविद्यालय - कलकत्ता द्वारा आयोजित प्राथमिक परीक्षा एवं संस्कृत विशारद परीक्षा प्रथम खण्ड के छात्र विशेष लाभ ले सकें।

ग्रन्थ में छह परिच्छेद है, जिनमें प्रमाणरूपी कसौटियाँ तथ्य सहित उद्धत है फलस्वरूप मूलग्रन्थ सर्वसाधारण को प्रमाण के स्वरूप का बोध कराने में सक्षम है। प्रकाशित ग्रन्थ में ग्रन्थकार का परिचय-सूत्र सूची एवं परीक्षाओं के प्रश्न पत्र भी सम्बद्ध है जिससे विद्यार्थियों को सर्वोपयोगी लाभार्जन होगा।

हर दिन उन्हें है ईद, हर दिन उन्हें दिवाली है,
जिन्होंने आत्मज्ञान की शम्मा जला ली है।
ढूंढते फिरते नहीं भगवान को वो मंदिर में,
भगवान की जिनने झलक निज में ही पा ली है।।
—डॉ. शिव "सिद्धार्थ"

क्षत्र चूड़ामणि

युग पुरुष, सन्मार्ग दिवाकर आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती के मंगल प्रसंग पर जिनवाणी प्रचार-प्रसार हेतु संकलित भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्-सोनागिरि (म.प्र.) का यह चौदहवाँ पुष्प है।

क्षत्र चूड़ामणि वादीभसिंह सूरि विरचित
अनुवादक - श्री मोहनलाल जैन शास्त्री, जबलपुर/प्रकाशन वर्ष - वीर निर्वाण सम्वत् - २५१५-१६/ पृष्ठ संख्या - १४+१८+३२८ = ४१६ /प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर जी संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया (बांसवाड़ा) राज० (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड - दिल्ली - ११००३२/मुद्रक-श्री वीर प्रेस - जयपुर-३
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या - १४

श्री वादीभसिंह सूरि द्वारा रचित यह ग्रन्थ जीवन्धर चरित्र है। रचनाकार तर्क, व्याकरण, छन्द, काव्य, अलंकार एवं कोश आदि ग्रन्थों के पूर्ण मर्मज्ञ थे। आपके वादित्व गुण की विद्वत्समाज में विशिष्ट पहिचान थी जिसके फलस्वरूप आप को वादिभसिंह उपाधि प्रदान की गई थी। आपके प्रचार का केन्द्र मैसूर प्रान्त का "पोम्बुझ" क्षेत्र था।

प्रस्तुत ग्रन्थ १० लम्ब में पूर्णता को लिये हुए है। इसके प्रथम लम्ब में राजा सत्यन्धर और रानी विजया का वर्णन तथा जीवन्धर के जन्म का वर्णन है। द्वितीय लम्ब में जीवन्धर के विद्याभ्यास एवं अपने पिता सत्यन्धर के मृत्यु का समाचार सुन क्रोधित होना आदि का वर्णन है। तृतीय लम्ब में श्रीदत्त नामक वैश्य का एवं उसकी पुत्री गन्धर्वदत्ता के विवाह का वर्णन है। चतुर्थ लम्ब में जीवन्धर की जलक्रीड़ा, सुरमजरी और गुणमाला नामक दो सखियों का वाद-विवाद आदि का वर्णन है। पंचम लम्ब में जीवन्धर द्वारा तिरस्कृत हाथी का भोजन छोड़ना एवं जीवन्धर की तीर्थ वन्दना का वर्णन है। षष्ठ लम्ब में जीवन्धर स्वामी का तीर्थ वन्दना करते हुए एक तपस्वी के आश्रम में पहुँच जाते हैं। तत्पश्चात सहस्रकूट चैत्यालय में पहुँचना तथा सुभद्र सेठ की कन्या क्षेमश्री से विवाह का वर्णन है। सप्तम लम्ब में जीवन्धर का कुछ समय क्षेमपुरी में रहने का / विद्याधरी अनंगतिलका का वर्णन है। अष्टम लम्ब में जीवन्धर एवं उनकी पत्नी गन्धर्व दत्ता का वर्णन है। नवम व दशम लम्ब में जीवन्धर महाराज का विरक्त होने का विस्तृत वर्णन है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में मूल श्लोक, अन्वयार्थ एवं भावार्थ दिया गया है। कृति के आरम्भ में दसों लम्ब का संक्षिप्त वर्णन कथानक के रूप में दिया गया है। ग्रन्थ की भाषा सरल - सुबोध एवं बोधगम्य है। ■

- **जो बाहर के रूप को सजाता है वह अंतर की कुरूपता को छिपाता है।**
- **किसी जीव को बचाने का भाव पुण्यभाव है। मैं दूसरों को बचा सकता हूं ऐसा मानना मिथ्यात्व भाव है।**

तत्त्वानुशासन

चारित्र शिरोमणि, वात्सल्य रत्नाकर, निमित्त ज्ञान शिरोमणि **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मांगलिक प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का 15 वां पुष्प है।

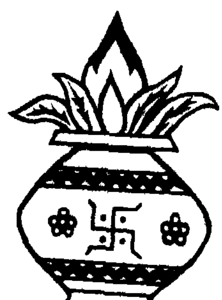
तत्वानुशासन
श्री नागसेन मुनि विरचित

सम्पादन--परमपूज्य ज्ञानदिवाकर उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज/ अनुवादक डॉ श्रेयास कुमार जैन/ पृष्ठ सख्या 24 + 152 = 176/ प्रकाशन वर्ष – 1993/ प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिर (दतिया म.प्र / प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर महाराज सघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बॉसवाडा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मदिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या 15

तत्वानुशासन– अध्यात्म प्रधान जैनधर्म मे ध्यान, योग और तप की साधना पद्धति का महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी, पूज्यपाद, आचार्य शुभचन्द्र, आचार्य हरिभद्र, आचार्य हेमचन्द्र प्रभृति आदि अनेक जैनाचार्यो ने स्वतन्त्र रूप से योग ध्यान विषय पर विशाल साहित्य की रचना करके जीवों को आध्यात्मिक पथ का मार्गदर्शन कराया लेकिन गत कुछ शताब्दियों मे जैनेतर धार्मिक क्रियाकाण्डों के क्षेत्र मे प्रतिस्पर्धाओं के प्रवेश से जैनधर्म भी प्रभावित हुआ है और योग, ध्यान, सामायिक, तप आदि आध्यात्मिक ऊँचाई प्रदान करने वाले तत्वों की साधना जीवन मे गौण होती चली गई तथा बाह्य क्रियाकाण्डों की प्रधानता ने ही जीवन में अपना स्थान बनाने में सफलता प्राप्त की। अतः इन अध्यात्म ग्रन्थों की महत्ता से परिचित करने हेतु हमारे आचार्यो ने समय-समय पर स्वयं साधना कर, आदर्श उपस्थित करते हुए आगमों के अनुसार और प्राचीन आचार्यो द्वारा प्रतिपादन पद्धति के अनुरूप ग्रन्थों की रचना करके इस साधना को जीवन प्रदान करने मे अपनी अहम् भूमिका निबाही।

ई सन् की 11 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में संस्कृत भाषा मे रचित इस ग्रन्थ में मात्र 259 श्लोक है किन्तु विद्वान लेखक ने सम्पूर्ण साधना पद्धति के प्रमुख सभी विषयों को सरल भाषा में इस ग्रन्थ मे प्रस्तुत किया है। ग्रन्थ के प्रस्तुत सस्करण के अनुवादक **डॉ.श्रेयांस कुमार जैन** है, जिन्होने अपनी प्रतिभा कौशल का श्रेष्ठ परिचय देते हुए ग्रन्थ की भाषा को जन उपयोगी बनाया है। **पूज्य उपाध्याय 108 श्री भरत सागर जी महाराज** ने ध्यान-योग तथा साधना से सबंधित अनेक प्राचीन, अर्वाचीन उद्धरण तथा तद्विषयक चल चित्र आदि का इस ग्रन्थ मे सयोजन करके सम्पादन किया है।



नीतिसारसमुच्चयः

चारित्र शिरोमणि, संस्कृति पुरुष **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयंती के शुभ प्रसंग पर, आगम वाणी की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ, भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्-सोनागिरि (म.प्र.) का १७वां पुष्प है।

नीतिसारसमुच्चयः
श्री इन्द्रनन्दिसूरिविरचितः

संस्कृत टीकाकार - पं. गौरीलाल पद्माकर सिद्धान्त शास्त्री/भाषा टीकाकर्त्री - गणिनी आर्यिका सुपार्श्व मती माताजी/सम्पादक - डॉ. चेतन प्रकाश पाटनी /पृष्ठ संख्या - २४ + १०४ = १२८ / प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज० (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़-दिल्ली । मुद्रक - हिन्दुस्तान आर्ट प्रिन्टर्स, जोधपुर

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -१७

नीतिसार समुच्चय - आचार्य इन्द्रनन्दि कृत संस्कृतश्लोक निबद्ध नीति विषयक रचना है । इसमें कुल ११३ श्लोक हैं । इस ग्रन्थ में साधुओं की आचारविधि का संक्षेप में वर्णन है। इस संक्षिप्त कृति में आचार्य श्री ने साधुओं की नित्य नैमित्तिक क्रियाओं का सविधि वर्णन किया है । इससे वर्तमान की अनेक समस्याओं का स्पष्ट समाधान हो जाता है । संघ व्यवस्था/दीक्षा की योग्यता/ नमस्कार विधि /द्रव्य लिंग/साधु की पूज्यता- अपूज्यता/एकल विहार/आहार विधि आदि से सम्बंधित स्पष्ट नीति निर्धारण ही इस ग्रन्थ का विषय है ।

साधु जीवन अप्रमत्तता का जीवन है, जागरूकता का जीवन है । चित्त को विवेक से परिपूरित करने की दशा है । प्रमत्त होना बन्धन है, अप्रमत्त होना ही मुक्ति है । साधुचर्या में विवेक सर्वोपरि है । जागो तो विवेक से - सोओ तो विवेक से । चलो तो विवेक से - उठो, बैठो तो विवेक से । विवेक का तात्पर्य परिपूर्ण जागरूकता से है ।

मनः शुद्धं भवेद यस्य, स शुद्ध इति भाष्यते ।
विना तेन कृतस्नानोऽप्यंगी नैव विशुद्ध्यति ॥ ८९॥

जिस साधु का मन शुद्ध है, राग-द्वेष आदि विकार भावों से रहित है, जो विषय-वासनाओं से दूर है । वही साधु, शुद्ध पवित्र कहलाता है । मन शुद्धि के बिना अनेक बार जल से, सुगंधित पदार्थों से स्नान कर लेने पर भी प्राणी पवित्र नहीं हो सकता ।।८९।।

प्रस्तुत ग्रन्थ की संस्कृत टीका ब्र.पं. गौरीलाल जी "पद्माकर" सिद्धान्तशास्त्री जी ने लिखी है एवं हिन्दी टीका गणिनी आर्यिका सुपाश्र्वमती माता जी ने लिखी है । इस ग्रन्थ की हिन्दी टीका में माताजी ने ग्रन्थकर्त्ता के भावों को पूर्णतया खोला है तथा वर्तमान में उठने वाले अनेक प्रश्नों का समीचीन समाधान प्रस्तुत किया है । ग्रन्थ की भाषा सरल एवं प्रभावपूर्ण है । ग्रन्थ का सम्पादन अनेकों पुस्तकों के रचियता/सम्पादक/विद्वान डॉ. चेतन प्रकाश पाटनी, जोधपुर ने किया है।

आशा के जो दास हैं वे सब जग के दास ।
दासी जिनकी आश है, उनका सब जगदास ॥

परमात्म प्रकाशः

चारित्र शिरोमणि, संस्कृति पुरुष **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन अवसर पर आगमवाणी प्रचार-प्रसार हेतु संकल्पित भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का यह अठारहवाँ पुष्प ग्रन्थ है।

परमात्म प्रकाश के रचियता जोइंदु (योगीन्दु) जैन परम्परा में एक अध्यात्मवेत्ता आचार्य हुए हैं। आप अपभ्रंश भाषा के पूर्ण ज्ञानाधिकारी थे तथा क्रान्तिकारी विचारधारा के प्रवर्तक थे।

परमात्म प्रकाशः
श्रीमद् योगीन्दुदेव

हिन्दी अनुवादक एवं सम्पादक - डॉ. चेतनप्रकाश पाटनी/प्रकाशन वर्ष - १९९०/पृष्ठ संख्या - १६+३१२=३२८/प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज० (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली - ११००३२ / मुद्रक - प्रिंटिंग ऐजेन्सीज-जोधपुर

हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या - १८

विद्वानों का मत है कि जोइन्दु अपभ्रंश के ऐसे सर्वप्रथम कवि है जिन्होंने क्रान्तिकारी विचारों के साथ आध्यात्मिक रहस्य वाद की प्रतिष्ठा कर मोक्ष का मार्ग बतलाया।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रारम्भ में सात दोहो में पंच परमेष्ठी को नमस्कार किया गया है। फिर तीन दोहो में ग्रन्थ की उत्थानिका, पाँच में बाहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा का स्वरूप, फिर दस दोहो में मुक्ति को प्राप्त कार्य परमात्मा का कथन है। पाँच क्षेपकों सहित २४ दोहों में देह में विराजमान शक्तिरूप परमात्मा का कथन है। छह दोहो में जीव के स्वशरीर प्रमाण की चर्चा है। फिर द्रव्य, गुण, पर्याय, कर्म, निश्चय सम्यक्दृष्टि, मिथ्यात्व आदि की चर्चा है। द्वितीय अधिकार के प्रारम्भ के दस दोहों में मोक्ष का स्वरूप, एक में मोक्ष का फल, उन्नीस में निश्चय और व्यवहार, मोक्ष-मार्ग तथा आठ में अभेदरत्नत्रय का वर्णन है। इसके बाद चौदह में समभाव की, चौदह में पुण्य पाप की समानता की और, इकतालीस दोहों में शुद्धोपयोगी के स्वरूप की चर्चा है। अन्त में चूलिका व्याख्यान के १०७ दोहों में अभेदरत्नत्रय की मुख्यता से व्याख्यान है। २१३ वाँ पद्य ग्रन्थ पठन का फल बतलाता है और अन्तिम २१४ वें दोहे में अन्तमंगल के लिए आशीर्वादरूप नमस्कार किया गया है।

विद्वान मनीषी डॉ. चेतन प्रकाश पाटनी ने इस ग्रन्थ के अनुवाद एवं सम्पादन में यथा योग्य श्रम कर ग्रन्थ की महिमा को बनाये रखा है। अनुवाद पूर्णतः मूलानुगामी है। अनुवाद की भाषा प्रवाहमयि है जो स्वाध्यायियों को रुचि प्रदान करती है।

■

[illegible]

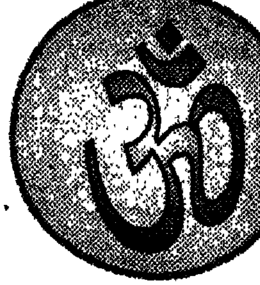
न्यायदीपिका

युगप्रमुख चरित्र शिरोमणि सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री विमलसागर जी की हीरक जयन्ती अवसर पर प्रकाशित पुष्प नं.19

न्यायदीपिका
श्रीमदभिनव- धर्मभूषण-यति-विरचिता

अनुवदक एवं सम्पादक– पं.दरबारी लाल जैन कोठिया/ प्रेरक– उपाध्याय श्री भरत सागर जी महाराज/ निर्देश– आर्यिका स्याद्वादमति माताजी/ प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद/ वर्ष 1989–90/पृ. 10 + 101 + 230 + 9 = 350। **प्राप्ति स्थान–** (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–19



प्रस्तुत ग्रंथ में पं.वंशीधर न्यायशास्त्री का प्राक्कथन है जिसमें जैन दर्शन के प्रमाण और नयों का विवेचन दिया गया है। तत्पश्चात् पं.दरबारीलाल कोठिया की विस्तृत पृष्ठीय प्रस्तावना है। उन्होंने जैन न्याय साहित्य में न्याय दीपिका का स्थान और महत्व, नामकरण, भाषा, रचनाशैली, विषय परिचय, न्यायशास्त्र की विविध प्रवृत्ति आदि का विवरण दिया है। पुनः लक्षण का लक्षण, प्रमाण लक्षण, धारावाहिक ज्ञान, प्रमाण्य, प्रमाणभेद का विवेचन दिया है। फिर प्रत्यक्ष का लक्षण, अर्थ और आलोक की कारणता सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष की स्थापना, मुख्य प्रत्यक्ष की समीक्षा प्रस्तुत की है। पुनः सर्वज्ञता का विवेचन करते हुए परोक्ष स्मृति, प्रत्यतीज्ञान, तर्क, अनुमान आदि का विवेचन किया है। अवयव मान्यता हेतु लक्षण, हेतु भेद, हत्या मासादि का प्रशस्त रूप से वर्णन दिया है। प्रस्तुत ग्रंथ में न्यायबिन्दु, दिग्नाग, शालिकानाथ, उदयन और वामन का उल्लेख आया है। अभिनव धर्मभूषण आचार्य द्वारा जैन ग्रंथकारों का भी उल्लेख किया गया है। ग्रंथों में तत्वार्थ सूत्र, अप्तमीमांसा, महाभाष्य, जैनेन्द्रव्याकरण, राजवार्तिक एवं भाष्य, न्यायविनिश्चय, परीक्षामुख, तत्वार्थवार्तिक एवं भाष्य, प्रमाण परीक्षा, पत्रपरीक्षा, प्रमेय कम मार्तण्ड और प्रमाण निर्णय का विवरण है। ग्रंथकारों में आचार्य समन्तभद्र, अलंकदेव, कुमार नंदि, माणिक्यनन्दि, स्याद्वाद विद्यापति के नामों का उल्लेख है।

अभिनव धर्मभूषण यति है जो दिगम्बर जैन मुनि तथा भट्टारक के नाम से लोक विश्रुत थे। डा.के.वी.पाठक और जुगल किशोर मुख्तार इन्हें ई. 1385 का विद्वान बताते हैं। कुछ इन्हें ईसा की 14 वीं सदी के उत्तरार्ध और 15 वीं सदी के प्रथम पाद में हुआ मानते हैं। प्रथम 132 पृष्ठों में संस्कृत में न्यायदीपिका हैं, साथ ही प्रकाशख्य टिप्पणी भी हैं। यहाँ रचियता के गुरु श्रीमद् वर्द्धमान भट्टारकाचार्य गुरु का रूण्य सिद्धसार स्वतोदय है। तथा प्रकाशस्य टिप्पणम् पं.दरबारी लाल कृत हैं। पृष्ठ 135 से पृ. 230 तक न्याय दीपिका का हिंदी अनुवाद दिया गया है। अंत में 9 पृष्ठों का परिशिष्ट है जिसमें कुछ गाथाओं का तुलनात्मक अध्ययन दिया गया है। इन पृष्ठों के पाद टिप्पण रूप में पाठान्तर भी सम्पादक द्वारा दिये गये हैं। इसके पूर्व भी न्यायदीपिका के अनेक संस्करण निकल चुके हैं, जो पाठशालाओं या जैन शिक्षण संस्थाओं में सदैव पढ़ाये जाते रहे हैं। प्रस्तुत संस्करण उपरोक्त विशेषताओं के कारण विद्यार्थियों को लाभान्वित करेगा। **प्रथम प्रकाश में प्रमाण, द्वितीय प्रकाश में प्रत्यक्ष और अंतिम प्रकाश में परोक्ष प्रमाण का विवेचन सुबोध्य सुगम्य है।**

शान्ति सुधासिन्धु

आचार्यरत्न, वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती के मंगल अवसर पर आगमवाणी प्रसार हेतु संकल्पित भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (म.प्र.) का यह बीसवाँ पुष्प है ।

शान्ति सुधासिन्धु श्री कुंथुसागर विरचित
हिन्दी अनुवाद - श्री धर्मरत्न पं. लालाराम जी शास्त्री/प्रकाशन वर्ष - १९९०/पृष्ठ संख्या - १२+८+३६४=३८४/प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली - 110032/ मुद्रक - शीतल प्रिन्टर्स - शोलापुर ।
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या - २०

प्रस्तुत ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद श्री धर्मरत्न पं. लालाराम जी शास्त्री ने किया है । ग्रन्थ की भाषा सहज समझ आने योग्य है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में ५२६ श्लोक हैं जिनको मूल/अर्थ/भावार्थ के साथ प्रकाशित किया गया है। पुस्तक की विषय सामग्री पाँच अध्यायो मे समाप्त होती है । जिनमे ५२० श्लोक समाहित है। ५२१ से ५२६ श्लोक में अथ प्रशस्ति दी गई है।

ग्रन्थकार आचार्य प्रवर ने यह ग्रन्थ निर्माण कर विश्व कल्याण का संदेश विश्व के सामने स्थिर रखने का प्रशस्त कार्य किया है । ग्रन्थ का विषय अत्यन्त महत्व का होने पर भी सरल एवं अनेक उदाहरणों से इतना स्पष्ट है कि प्रत्येक व्यक्ति इसका स्वाध्याय कर समझ सकता है । ग्रन्थ रचना शैली सुरुचिपूर्ण है ।

कलाम ए पाक

ईश्वर महिमा

हुवल्लाहुल्लजी ला अिलाह अिल्ला हुव ज आलिमुल्गैबि वश्शहादति ज हुवर्रहमानुर्रहीमु ।

वह अल्लाह (ऐसा है) कि उसके सिवा कोई माबूद (स्तुति योग्य) नहीं, वह गैब (परोक्ष) और रहस्य को जानने वाला है वह रहमान व रहीम (दयालु) है।

हुवल्लाहुल्लजी ला अिलाह अिल्ला हुव ज अल्मिकुलकुददूसुस्सलामुल् मुअमिनुल्-मुहैमिनुलअजीजुल्-जब्बारुल्-मुतकब्बिरु त सुब्हानल्लाहि अम्मा युशरिकून ।

वह अल्लाह (ऐसा है) कि उसके सिवा कोई माबूद नही । वह सम्राट है, पवित्र है, सलामती वाला है, शान्तिदाता है निगहबानी(देखरेख) करने वाला है, अज़ीज़ (आत्मीय) है जब्बार (शक्तिमान) है, अजमत (बड़प्पन) वाला है वह सबको पैदा करने वाला है ।

इन्द्रनन्दी नीतिसार

युग प्रमुख, करुणानिधि **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयंती के शुभ अवसर पर माँ. जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ, भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का २१ वाँ पुष्प है।

इन्द्रनन्दी नीतिसार श्री मविन्द्रनन्दि कृत
अनुवादक - डॉ. कस्तूरचन्द सुमन/प्रकाशन वर्ष - १९८९-९०/ पृष्ठ संख्या - १२ + ४० = ५२/प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ती स्थान (१) आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली/मुद्रक-पारस प्रिन्टर्स, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -२१

इस ग्रन्थ में कुल ११३ नीति श्लोक है जिनका हिन्दी भाषा अनुवाद सरल, प्रभावमय भाषा में विद्वान अनुवादक डॉ. कस्तूरचन्द सुमन ने किया है।

प्रथम श्लोक में ग्रन्थकार तीन लोक के स्वामी की वन्दना करने के उपरान्त कहते हैं कि मैं निर्ग्रन्थ साधुओं के लिए नीतिसार समुच्चय ग्रन्थ कहता हूँ। इससे स्पष्ट है कि इन्द्रनन्दी ने यह ग्रन्थ निर्ग्रन्थ साधुओं के प्रतिक्रमण / प्रायश्चित / स्वाध्याय/ व्याख्यान / दीक्षा के पात्र की परीक्षा / श्रमणों के शयन विषयक / वाचन करने योग्यशास्त्र / आशीष देने का माध्यम / उचित आहार - कहाँ, कैसे- किससे / विहार हेतु निर्देष / विरुद्ध संघ के साधुओं के साथ क्रियायें / मूल गुणों का पालन आदि ....आदि हेतु रचा है।

इस ग्रन्थ में संघ एवं संघों की स्थापना/नमन करने योग्य/जिन प्रतिमा/ आचार्य/ उपाध्याय/ साधु/ भट्टारक/ उत्तम मुनि/ ग्रहस्थाचार/ दान योग्य पात्र/ जिनालय - जिनप्रतिमायें-जैन शास्त्र का जीर्णोद्धार / वन्दना करने योग्य साधु/ मोक्ष का साधन/ धार्मिक तिथियाँ आदि पर भी नीतिश्लोक दिये गये हैं जो श्रमण-श्रावक दोनों के लिए सद्मार्ग हेतु आवश्यक है।

अनुवाद प्रवाहमय सरल भाषा में है जो श्रावकों को अध्ययन में रुचि बनाये रखती है। ■

वरदान दो

डॉ. कुसुम शाह

धर्म की अनुवर्तिका को, मर्म का प्रतिदान दो,
भक्ति की शुभ चन्द्रिका को, ज्योति का अनुदान दो।
कुसुम लतिका पल्लवित हो बस उसे श्रमदान दो,
भारती को भरत सागर, सा विमल वरदान दो॥

समाधि तंत्र
(आचार्य पूज्य पाद विरचित)

युग पुरुष, चारित्र-शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित। यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सोनागिरि (म.प्र.) का २३वाँ पुष्प है।

समाधि तंत्र (आचार्य पूज्य पाद विरचित)
अनुवादक- पं.अजित कुमार शास्त्री/ सम्पादक-डॉ.रमेश चन्द जैन बिजनौर / प्रेरक- उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर जी महाराज / निर्देशक- आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी / प्रकाशक- भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद। प्रकाशन वर्ष-प्रथम संस्करण 1989-90 / प्राप्ति स्थान- (1) आचार्य श्री विमल मुनि संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया(3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोधी रोड, दिल्ली
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या २३

105 संस्कृत श्लोकों में रचित **समाधि शतक आचार्य पूज्यपाद अपरनाम देवनन्दिजी** की रचना है, जो विक्रम की 6वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध और 5वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के मध्य मानी जाती है। उनका ब्राह्मण कुष्त था। वे नन्दिसघ के आचार्य थे जैसा पट्टावली से ज्ञात है। आचार्य पूज्यपाद को कवियों मे तीर्थंकर समान (लक्षण ग्रंथ रचियता) और जिनके वचन रूपी तीर्थ विद्वानों के शब्द सम्बन्धी दोषों को नष्ट करने वाले, आचार्य जिनसेन के आदि पुराण में उल्लिखित है। इसी प्रकार उनकी प्रशंसा ज्ञानावर्णव में भी की गयी है। **हरिवंश पुराण** में भी उल्लेख है कि जो इन्द्र, चन्द्र, अर्क और व्याकरण का अवलोकन करने वाली है-ऐसी देवनन्दि आचार्य की वाणी क्यों नहीं वन्दनीय है? **आचार्य गुणनन्दि** ने इनके व्याकरणसूत्रों का आश्रय लेकर जैनेन्द्र प्रक्रिया की रचना की है, जिसके मंगला चरण में वे कहते हैं-जिन्होंने लक्षण शास्त्र की रचना की, मैं उन आचार्य पूज्यपाद को प्रणाम करता हूँ। उनके इस लक्षण शास्त्र की महत्ता इसी से स्पष्ट है कि जो इसमें है वहीं अन्यत्र है, और जो इसमें नहीं है, वह अन्यत्र भी नहीं है। उन्हें जिनेन्द्र बुद्धि भी कहते हैं। उनकी रचनाएँ निम्नलिखित है-दशभक्ति, जन्माभिषेक, तत्वार्थ वृत्ति (सर्वार्थ सिद्धि), समाधि तंत्र, इष्टोपदेश, जैनेन्द्र व्याकरण और सिद्धि प्रिय स्तोत्र।

प्रस्तुत ग्रथ में **श्री प्रभाचन्द्राचार्य** रचित संस्कृत टीका, अन्वयार्थ तथा भावार्थ दिया गया है। कहीं विशेषार्थ एवं विशेषता भी दी गई है। वस्तुत: इस ग्रंथ में ऐसे तत्र की साधना वर्णित है जो समाधि की ओर ले जाने में सक्षम हैं।





ध्यान - सूत्राणि
आचार्य श्री माघनन्दि कृत

टीकाकर्त्री - आर्यिका स्याद्वादमती जी प्रकाशन वर्ष : १९९२ / पृष्ठ संख्या : १६+२९० =३०६ / प्रकाशक भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद - सोनागिरि / प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बाँसवाड़ा) राजस्थान (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर गुलाब वाटिका लोनी रोड - दिल्ली । मुद्रक - वर्धमान मुद्रणालय वाराणसी (उ.प्र.) ।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -२७

करुणा निधि, वात्सल्य मूर्ति, परम तपस्वी **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मंगल प्रसंग पर माँ जिनवाणी की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का २७ वाँ पुष्प है ।

अनादिकालीन कुसंस्कारों के फलस्वरुप जीव की परिणति बाह्य पर पदार्थों की ओर स्वतः चली जाती है एवम् स्व की ओर प्रयत्न करने पर भी नहीं लग पाती । करुणानिधि आचार्य श्री माघनन्दी जी ने अध्यात्म ध्यान की सिद्धि के लिए, स्वस्वरुप से भव्य च्युत न हों, सर्वहितार्थ ध्यानसूत्राणि नामक उक्त कृति की रचना की। आध्यात्मिकता को लिये स्वस्वरुप का बोध कराने वाले ध्यान सूत्रों का प्रतिदिन मनन/चिन्तन करने वाला भव्य जीव अचिरेण मुक्तिधाम पाता है ।

आचार्य श्री माघनन्दि कृत ध्यान सूत्राणि में तीन अध्याय हैं जिसमें कुल १७८ सूत्र हैं । **प्रथम अध्याय** में सविकल्प निश्चय भस्वरूप ध्यान के १०० सूत्र हैं । **द्वितीय अध्याय** में निश्चय नय से मेरा आत्मा सिद्ध परमेष्ठी स्वरूप है, इस भावना को लेकर ३८ सूत्र है तथा **तृतीय अध्याय** में अपने शुद्धात्म स्वरूप में निश्चल-अवस्थान रूप एवं निर्विकल्प गुण स्मरण रूप सर्वसाधुपद प्रार्थ्य स्वशुद्धात्मध्यान को लक्ष्य करके ४० सूत्र हैं।

आचार्य श्री द्वारा रचित सूत्रों की भाषा यद्यपि सरल - सुबोध संस्कृत में हैं, तदापि यह ग्रन्थ सर्वोपयोगी नहीं बन पाया है। कारण कलिकाल में रुचि नहीं, रुचि है तो क्षयोपशम नहीं ।

ग्रन्थ की टीकाकर्त्री **आर्यिका श्री स्याद्वाद मती माता जी** ने सूत्र के एक -एक शब्द का आगमानुकूल अर्थ एवं भाव स्पष्ट करने का सफल प्रयास कर ग्रन्थ के हार्द को सरलता से स्पष्ट किया है । सूत्रों को भव्यात्मा सरलता से समझ सके इस हेतु आर्यिका श्री ने अनेक जिनागम ग्रन्थों के उदाहरण / गाथाओं का समावेश अपनी टीका में किया है । आर्यिका श्री का यह प्रशंसनीय प्रयास भव्यात्मा को उक्त कृति अध्ययन में सहयोगी बन पड़ा है ।

श्रुतावतार

तीर्थोद्धारक, ज्योति पुञ्ज आचार्य **१०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयंती के मंगल अवसर पर आगम वाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ, भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का २८वाँ पुष्प है।

श्रुतावतार
श्रीमदिन्द्रनद्याचार्य विरचित

अनुवादक - पं. विजय कुमार जी शास्त्री, श्री महावीर जी/ प्रकाशन वर्ष - १९८९-९०/पृष्ठ संख्या - १६+८२=९८/प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बाँसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली /मुद्रक - कमल प्रिंटिंग प्रेस - वाराणसी (उ.प्र.)

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -२८

श्रीमत्-इन्द्रनन्दि आचार्य विरचित यह गौरवशाली ग्रन्थ जैन परम्परा का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। एक सौ सत्तासी संस्कृत पद्यों वाला यह ग्रन्थ श्रेष्ठ काव्य के साथ-साथ प्राचीन भारतीय इतिहास की लेखन परम्परा का एक आदर्श, दुर्लभ एवं बहुमूल्य ग्रन्थ भी है। यद्यपि प्राचीन आचार्यों ने स्व-पर कल्याण एवं निरंतर परम्परा जीवंत रखने के उद्देश्य से तत्त्वज्ञान- विज्ञान/ धर्म/ दर्शन/ साहित्य/ संगीत/ पुराण/ काव्य/ गणित/ कला/ कोश/ व्याकरण/ आयुर्वेद/ न्याय आदि सभी विषयों से सम्बन्धित विपुल साहित्य का सृजन किया है किन्तु साहित्य और उनके स्रष्टाओं के इतिहास का सजीव चित्रण जिस प्रकार श्रुतावतार ग्रन्थ में किया गया है, वैसे स्मरणीय ग्रन्थ भारतीय साहित्य में अति अल्प रूप में उपलब्ध है।

श्रुत के अवतरण की परम्परा और उसका वृत्तान्त **आचार्य इन्द्रनंदि** ने अपने इस ग्रन्थ का मूल विषय रखा है। इस कृति में उन्होंने भरत क्षेत्र की स्थिति/सुषमा-सुषमा काल के भेदों का विवेचन /कुलकर व्यवस्था का क्रमशः प्रतिपादन करते हुए प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव से लेकर अंतिम एवं चौबीसवें तीर्थंकर महावीर तक की परम्परा और उनकी विशेषताओं का संक्षेप में वर्णन किया है। तीर्थंकर महावीर और उनके गणधरों का विशेषकर गौतम गणधर का कुछ विस्तार से वृत्तान्त प्रस्तुत करते हुए उनके बाद की परम्परा का और वर्तमान में आंशिक रूप में उपलब्ध श्रुत (आगमज्ञान) के मूल का कालक्रमानुसार जो इतिहास प्रस्तुत किया है वह बहुत ही महत्वपूर्ण है।

ग्रन्थ के पद्य क्रमांक ७५ मे आचार्य इन्द्रनंदि लिखते है -

एते त्रयोऽपि मुनयोऽनुबद्धकेवलिविभूतयोऽभीषाम्।
केवलदिवाकरोऽस्मिन्नस्तमवाप व्यतिक्रान्ते ॥७५॥

अर्थात गौतम गणधर, सुधर्माचार्य और जम्बू स्वामी अनुबद्ध केवली की सम्पदा को प्राप्त थे। इनके मोक्ष चले जाने पर इस भरतक्षेत्र में केवलज्ञान रुपी सूर्य अस्त हो गया। इनके बाद केवलज्ञान किसी को नहीं हुआ। इसके बाद की परम्परा का भी ग्रन्थ में वर्णन है।

श्रुतावतार ग्रन्थ की भाषा, शैली, भाव एवं विषय देखते ही बनता है। ग्रन्थ का अनुवाद सरल भाषा में है जो प्रत्येक श्रावक को सहजता से हृदयग्राह्य होने में सक्षम है।

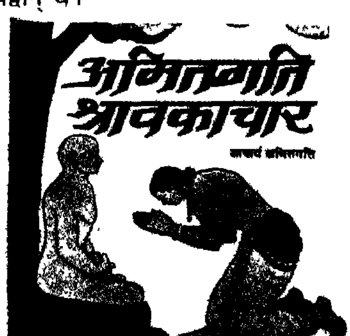
प्रस्तुत ग्रन्थ की भूमिका अनेक ग्रन्थों के अनुवादक/ रचियता/ सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के जैन दर्शन विभाग के अध्यक्ष/ सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ. फूलचन्द जैन प्रेमी ने लिखी है जिसमें ग्रन्थ के विषय की आवश्यक सभी जानकारी गर्भित है।

श्रावकाचार
(आचार्य श्री अमित गति)

युग प्रमुख, चारित्र-शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित। यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सोनागिरि (म.प्र.) का २९वाँ पुष्प है।

श्रावकाचार (आचार्य श्री अमित गति)
सम्पादक/ अनुवादक-पंडित भागचंद (हिन्दी), संशोधन श्री श्रेयांस सागर जी / प्रेरक- उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर जी महाराज/ प्रकाशक भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद् सोनागिरि । प्रकाशन वर्ष-1989-90/ प्राप्ति स्थान- (1) आचार्य श्री विमल सागर जी मुनि संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (3)श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोधी रोड, दिल्ली/
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या-२९

प्रस्तुत ग्रंथ श्रावकचार या उपासकाचार **पूज्य आचार्य सुप्रसिद्ध द्वितीय अमित गति जी** द्वारा रचित है जिसमें पंद्रह परिच्छेद हैं जो सस्कृत में 1352 पद्य रूप में निर्मित है। इन पद्यों की सख्या विभिन्न परिच्छेदों में क्रमशः 72, 90, 86, 98, 74, 100, 79, 101, 109, 74, 126, 139, 101, 84, 114 श्लोकों तथा प्रशास्ति 8 श्लोक सहित है। अनुवाद सरल हिन्दी में दिया गया है। **प्रथम परिच्छेद** में दुर्लभ मनुष्य भव पाकर मिथ्या भाव के निवारण करने हेतु जिनधर्म को धारण करने का उपदेश दिया है जो महान् कल्याण का देने वाला है। **दूसरे परिच्छेद** में मिथ्यात्व का निवारण करने हेतु अधः प्रवृतकरण, अपूर्व करण आदि का विवरण दिया गया है। **तृतीय** में सम्यग्दर्शन के विषय नव पदार्थों का विवरण है। **चतुर्थ परिच्छेद** में एकानत पक्ष का निराकरण कर हेतुवाद आदि जीवादिकों का बिवरण दिया है। यहाँ प्रत्यक्ष वा परोक्ष प्रमाण आदि का विवेचन भी दिया गया है। **पंचम परिच्छेद** में व्रतों का वर्णन है। मद्यमांस मधु, पंच उदंबर आदि श्रावकों के मूलगुणों का विवरण है। **षष्ठम परिच्छेद** में द्वादश व्रतों का वर्णन है। पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षा व्रतों का वर्णन है। **अष्टम** में सामायिक और षट्ट आवश्यकों की साधना है। **नवम्** में दान, पूजा, शील, उपवास धर्म का वर्णन है। **दसवें** में पांच सुपात्र का कथन है। **ग्यारहवें** में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पुरुषार्थ का विवरण है। **बारहवें** में भाव कर्म तथा उपवास का महत्व है। **तेरहवें** में विरक्ति साधना है। **चतुर्दश** में द्वादशा उप्रेक्षा तथा **पंद्रहवें** में ध्यान के स्वरूप का विवरण है। इस प्रकार आचार्य श्री ने श्रावकों के लिए यह अत्यत प्रेरण्यस्पद ग्रंथ रचा है। **पं.नेमीचंद शास्त्री** ने दो अमितगति आचार्यों के उल्लेख किये हैं। प्रथम अमितगति का एक मात्र ग्रंथ योगसार प्राभृत है तथा द्वितीय के सुभाषित रत्न संदोह, धर्म परीक्षा, उपासकाचार, पंच संग्रह आदि है। प्रथम वि.सं.1000 के आसपास तथा दूसरे प्रायः 50 वर्ष बाद हुए है। दूसरे बहुश्रुत विद्वान् थे।



श्री महामृत्युञ्जय पूजा विधान

युग प्रमुख, चारित्र शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर परमपूज्य आचार्य १०८ **श्री विमल सागरजी महाराज** की हीरक जंयती के पावन प्रसंग पर, आगमवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का ३० वां पुष्प हैं।

श्री महामृत्युञ्जय पूजा विधान पण्डितप्रवर आशाधरजी
संकलन - आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज/ पृष्ठ संख्या - १६+१०४=१२०/ - प्रकाशन वर्ष- १९९१/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र. / प्राप्ती स्थान (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया; (बांसवाड़ा) राज. (३) दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली / मुद्रक - महावीर प्रेस वाराणसी (उ.प्र.)
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -३०

श्री महामृत्युञ्जय पूजा विधान कृति में आरम्भ मे विधान करने की विधि एवं विधान का माण्डला दिया गया है। इसके पश्चात विधान प्रारम्भ करने हेतु निम्न क्रमानुसार पूजन-पाठ आदि दिये गये है

(१) मंगलाष्टक (२) सकलीकरण (३) हस्त संघटन (४) दिग्बन्धन (५) तिलक मन्त्र (६) भूमि शुद्धि (७) दिग्पाल ध्वजारोहण (८) मण्डप प्रतिष्ठा (९) सर्वाह्णय क्षार्थनम् (१०) कुसमादि द्वारपालानुकूलन (११) मंगलद्रव्याष्टक स्थापन (१२) आयुधाष्टक स्थापन (१३) पताकाष्टक स्थापन (१४) कलशाष्टक स्थापन (१५) अथ पञ्चामृताभिषेक पाठ (१६) शान्ति मन्त्र (१७) महामण्डलाराधना (१८) अर्हत् पूजा (१९) सिद्धार्चन विधान (२०) महर्षिपर्यूपासनाविधि (२१) स्वस्त्ययन विधान (२२) पूजा प्रारम्भ (२३) प्रथम वलय भगवाज्जिन अष्टोत्तर सहस्त्र अर्घ्य (२४) चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र पूजा (२५) द्वितीय वलय पूजा (२४ तीर्थंकर, २४ यक्ष, २४ यक्षी पूजा) (२६) तृतीयवलय पूजा (२४ तिथिदेव, ९ ग्रहदेवार्चन) (२७) चतुर्थ वलय पूजा (बीजाक्षर पूजा) (२८) दिग्पालार्चन (२९) द्वारपालार्चन (३०) जाप्य (३१) जयमाला (३२) आनन्द स्तवन (३३) विसर्जन मन्त्र (३४) आरती

॥ ॐ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं॥

चार शरण ही आत्मोन्नति का साधन है (२५ अगस्त, ९४)

हे आत्मन्। भव्यों के लिए चार शरण है। अरहत शरण, सिद्ध शरण, साहू शरण, केवलि प्रति पादित धर्म। जो भव्यों को आनन्द घन परमानन्द, सहजानन्द की प्राप्ति के साधन अरहंतादि के शरण पहुँच कर भव्य शिरोमणि जामन मरण के दुःखों से छुड़ाने के लिए इन परमात्मा की शरण ही कार्यकारी है और आत्मशोधन के लिए दीपक है। तथा जामन–मरण सागर के तारने के लिए जहाज (नौका) है। हे विमलात्मन् ! तुम अन्तरात्मा होकर परमात्मा की प्राप्ती के लिए इनकी शरण में रहना ही कार्यकारी है। इनके नाम लेने से भावना में वह शक्ति प्राप्त होती है, जो संसार का कारण मिथ्यात्व है वह नाश हो जाता है। अतः हर क्षण इन्हीं का ध्यान जप, चिन्तन करना कार्यकारी है।

स्वयंभूस्तोत्र

अतिशय योगी, चारित्र चक्रवर्ती **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा सकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र.का 31 वां पुष्प है।

स्वयंभूस्तोत्र

आचार्य समंतभद्र कृत

संस्कृत टीका– श्री प्रभावचन्द्राचार्य जी/ हिन्दी अनुवाद– डॉ.पं.पन्नालाल जी साहित्याचार्य/ पृष्ठ संख्या– 8+ 16+ 154 = 178 / प्रकाशन वर्ष– 1989–90/ प्रकाशक–भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वात् परिषद– सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ती स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बासवाड़ा) राजस्थान (3) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड, दिल्ली।

हीरक जयंती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–31



इस प्रकाशित ग्रन्थ के मूल रचयिता श्री **समन्तभद्र स्वामी है जो दिगम्बराचार्यो में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।** धर्म, न्याय, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष, आयुर्वेद, मन्त्र तथ तन्त्र आदि सभी विद्याओं में निपुण होने के साथ–साथ आप वाद कला मे अत्यन्त पटु थे। आप परीक्षा प्रधान विद्वान थे। आपकी रचित कृतियाँ– स्वयंभूस्तोत्र, युक्त्यानुशासन, आप्तमीमांसा, स्तुति विद्या–जिनशतक एवम् रत्नकरण्ड श्रावकाचार हैं जो जैनागम मे अपना अतिविशिष्ट स्थान रखती है।

स्वयं परोपदेशमन्तरेण मोक्षमार्ग–मवबुध्य अनुष्ठाय वानन्तचतुष्टयतया भवतीति स्वयंभू– स्वयं अर्थात् परोपदेश के बिना मोक्षमार्ग को जानकर और तदनुरूप अनुष्ठान कर जो अनन्त चतुष्टय रूप से उत्पन्न होते है वे स्वयभू कहलाते हैं। यहाँ टीकाकार के मन्तव्यानुसार स्वयभू शब्द तीर्थंकर का वाचक है। इसीलिए स्वयंभूस्तोत्र का अर्थ भी तीर्थंकरों का स्तोत्र होता है। जैनधर्म में ऐसे चौबीस स्वयंभू है। प्रस्तुत कृति मे 24 तीर्थंकरों का स्तवन किया गया है।

तीर्थंकर महोपकारी पुरुष है। चतुर्गति के चक्र में अनादिकाल से परिभ्रमण करने वाले इस जीव को इस परिभ्रमण से बचाने वाला मार्ग इन तीर्थंकर भगवन्तो ने ही बताया है। अत: उनके प्रति भक्ति के उद्‌गार निकलना स्वाभाविक है। वर्तमान काल में निम्न 24 तीर्थंकर हुए है–(1) ऋषभ नाथ जी (2) अजित नाथ जी (3) सम्भवनाथ जी (4) अभिनन्दन नाथ जी (5) सुमतिनाथ जी (6) पद्म प्रभुजी (7) सुपार्श्व नाथ जी (8) चन्द्राप्रभु जी (9) पुष्पदत जी (10) शीतलनाथ जी (11) श्रेयास नाथ जी (12) वासुपूज्य जी (13) विमलनाथ जी (14) अनन्त नाथ जी (15) धर्मनाथ जी (16) शान्तिनाथ जी (17) कुन्थुनाथ जी (18) अरहनाथजी (19) मल्लिनाथ जी (20) मुनिसुव्रत नाथ जी (21) नमिनाथ जी (22) नेमिनाथ जी (23) पार्श्वनाथ जी (24) महावीर स्वामी।

प्रस्तुत कृति में उपरोक्त तीर्थंकरों की स्तुति की गई है। इस स्तोत्र के पाठन से मात्र भगवान की भक्ति ही प्रकट नहीं होती वरन् जैन सिद्धान्त / जैन दर्शन का मौलिक रूप भी सामने आता है। स्तुति किसकी तथा किस उद्देश्य से करना चाहिये? इन सबका समाधान एवम् मार्गदर्शन इस स्तोत्र से मिलता है। इस स्तवन में कितने ही तीर्थंकरों के स्तवन वर्णात्मक है अर्थात् इनमें उन तीर्थंकरों की जीवन घटनाओं का वर्णन प्राप्त होता है। वहीं कितने ही तीर्थंकरों के स्तवन जैनधर्म के सिद्धान्त एवम् दर्शन की विवेचना करने वाले है।

कृति में अर्थालकारों, शब्दालकारों का उत्कृष्ट प्रयोग से रचना की शोभा बढ गई है। एक और जहां यह स्तोत्र अर्थ की दृष्टि से उच्च कोटि के क्रम मे आता है वहीं दूसरी ओर भाषा की दृष्टि से भी उच्च कोटि का ही है।

कृति का सस्कृत टीका श्री प्रभावचन्द्राचार्य जी ने किया है। हिन्दी अनुवाद डॉ.पं.पन्नालाल जी साहित्याचार्य ने अपने पाण्डित्य रस में इस प्रकार किया है कि श्रावक कृति के रस में डूबकर तीर्थंकरों की भक्ति में पूर्णतया समर्पित हो जावें। इस हेतु श्रद्धेय डॉ.पं पन्नालाल जी साहित्याचार्य साधुवाद के पात्र है।

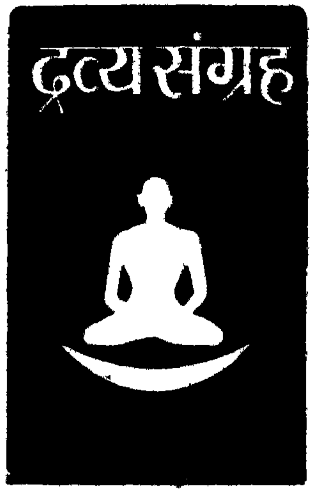
द्रव्य संग्रह

(आचार्य नेमिचन्द्र विरचित)

द्रव्य संग्रह
(आचार्य नेमिचन्द्र विरचित)

आर्शीवाद– श्री 108 आचार्य विमल सागर जी महाराज/ प्रेरणास्त्रोत– उपाध्याय श्री भरतसागर जी महाराज/ अनुवादिका– आर्यिका स्याद्वादमति माताजी/ प्रकाशक– आचार्य विमलसागर, ग्रन्थमाला, लोहारिया/ पृष्ठ संख्या 6+93 = 99/ प्राप्ति स्थान–(1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज सघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–32



कुछ विद्वानों ने द्रव्य संग्रह के रचियता के सबध में **आचार्य नेमिचंद्र सिद्धान्त चक्रवर्ती को रचियता स्वीकार करने** में विवाद उपासित किए हैं, अत इस ग्रंथ के रचियता कौन आचार्य नेमिचन्द्र थे, अभी निर्धारित नहीं हो सका है। तथापि यह ग्रंथ अपने आप में अत्यत गंभीर है तथा जैन धर्म की नींव स्थापित करने में अत्यत सक्षम है। यह सरल सुबोध प्राकृत भाषा मे लिखा गया है जो सरलता से याद किया जा सकता है। इसमें तीन अधिकार दिये गये हैं। **प्रथम अधिकार** में जीव सम्बन्धी 9 अधिकार दिये गये है। फिर प्रत्येक द्रव्य का विवरण है। **द्वितीय अधिकार** में आस्त्रव संकर एवं निर्जरा के लक्षणादि का विवेचन है। **तृतीय अंतिम अधिकार** में व्यवहार और निश्चय मोक्षमार्ग का लक्षण और सम्यक् दर्शनादि का निरूपण करते हुए अंतत: चारित्र और ध्यान का सरल विवरण दिया है।

अनुवादिका ने सर्वप्रथम अन्वथार्थ दिया है। पुन: अर्थ दिया है और इसके पश्चात विभिन्न प्रश्न एव उत्तर समन्वित किये हैं जो छात्रोपयोगी तो हैं ही गृहस्थों के लिए भी पढ़ना कल्याणकारी है। इसकी उपयोगिता अत: अप्रतिम बन पड़ी है।

जीव के 9 अधिकार गाथा 14 तक आये हैं जो क्रमश. जीवत्व, उपयोग, अमूर्तिक, कर्त्तव्य, स्वदेह परिणाम, मोक्षतृत्व, संसारित्व, सिद्धत्व एव ऊर्ध्वगमन। प्रश्न–उत्तर की संख्या विशेष अधिक है। और परीक्षाओं के कोर्स को वह पूरी तरह अवतरित करता है। अजीव द्रव्यों का विवरण 27 गाथा तक वर्णित है। आस्त्रव, बंध निर्जरा तथा पुण्य पाप विवरण 38 वीं गाथा तक अत्यंत सुबोध भाषा में किया गया है। इसके पश्चात शेष गाथाओं में रत्नत्रय का स्वरूपादि, विभिन्न प्रकार के ध्यानों का स्वरूप आदि देकर इस ग्रंथ को अनुवादिका द्वारा एक प्रशस्त रूप दिया गया है। अत: सस्थाओं में इस कृति के द्वारा पढ़ाया जाना अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगा। ❑



धम्म रसायणं

युग प्रमुख, चारित्र शिरोमणि **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयंति के मांगलिक प्रसंग पर भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद - सोनागिर (दतिया) म.प्र. द्वारा माँ-जिनवाणी की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ प्रकाशन माला का ३३ वाँ पुष्प है। इस ग्रन्थ का अनुवाद ज्ञान दिवाकर, वाणी भूषण **उपाध्याय मुनिश्री १०८ भरत सागर जी महाराज** ने किया है। उपाध्याय श्री आगम के गूढ़ ज्ञाता तो है ही साथ ही श्रावकों के समझ में आने योग्य भाषा के उत्कृष्ट शिल्पकार भी हैं।

धम्म रसायणं
श्री पद्मनन्दि मुनि विरचित्

अनुवादक : उपाध्याय मुनिश्री भरत सागर जी महाराज/ सम्पादक : आर्यिका श्री स्याद्वादमति माताजी/ प्रकाशन वर्ष : सन् १९९०-९१/पृष्ठ संख्या : १२८+१८ = १४६/मूल्य : बीस रुपये/ प्रकाशक : भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्रकाशन प्राप्ति स्थल : आचार्य श्री विमल सागर जी संघ अनेकान्त सिद्धान्त समिति - लोहारिया (बाँसवाड़ा) राजस्थान, श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली/ मुद्रक : राधा प्रेस गाँधी नगर, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -३३

प्रस्तुत कृति एक लघुकाय सिद्धान्त ग्रन्थ है इसे जीवन मूल्य का पहिचान पत्र भी कहा जाता है। इस ग्रन्थ में १९३ गाथाएँ हैं। ग्रन्थ में वर्णित गाथाओं में से १९२ गाथाएँ विषय से सम्बद्ध है तथा शेष एक (अन्तिम) गाथा व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालती है। ग्रन्थकार श्री पद्मनन्दि मुनिराग ने ग्रन्थ के आरम्भ में मंगलाचरण में किसी तीर्थंकर का नाम नहीं लिया है, जैसा कि अन्य ग्रन्थों में होता रहा है। फिर भी यह एक प्रशंसनीय बात है कि रचनाकार ने दो गाथाओं में विविध विशेषणों के माध्यम से **देवदेवं** अर्थात् देवों के देव तीर्थंकर को नमन करते हुए **धम्मरसायणं** को प्रतिपादन करने की प्रतिज्ञा की है।

धर्म रसायन की गाथा क्रमांक ३ से १६ तक में धर्म के अच्छे और बुरे परिणामों पर प्रकाश डाला गया है। ग्रन्थ की १८ और २० नं. की गाथाएँ महापाप की कथा व्यक्त करती है। गाथा २० से ७३ तक नरक में होने वाली विविध यातनाओं का विस्तृत विवेचन है, जिसे चिंतन/मनन कर श्रावक अपने जीवन को परिवर्तित कर सकता है और अपनी जीवन यात्रा को धर्म के पथ पर अग्रसित कर सकता है।

नरक गति की वेदनाओं के उपरान्त तिर्यचं गति का वर्णन गाथा ७४ से ७९ तक में किया गया है। कुमानुष गति के दुःखों का वर्णन गाथा ८० से ८६ तक में वर्णित है। देव गति कैसे प्राप्त हो ? देव के सुख, दिव्य रूप, नृत्य आदि प्रसंग के वर्णन के साथ-साथ देव होने पर भी देवगति में मात्र शारीरिक सुख ही है तथा देव किस प्रकार विविध रूप से दुःखों को भोगते हैं का वर्णन प्रस्तुत किया गया है - गाथा ८७ से ९३ तक में।

चारों गतियों के रोचक वर्णन के उपरान्त प्रस्तुत कृति में सर्वज्ञ/परमात्मा सिद्धि का प्रसंग का भी विस्तार से प्रस्तुतिकरण किया

गया है - गाथा ९४ से १३८ तक में। इन ४४ गाथाओं में हर/हरि/ बुद्ध आदि के बाह्य शक्तियों का आधार बनाकर अपने मत का मण्डन और परमत का खण्डन किया गया है। रचनाकार आचार्य पद्मनन्दि जी ने परीक्षा को केन्द्र बिन्दु बनाकर सर्वज्ञ/ परमात्मा की प्रस्तुति इस तरह की है -

हर/ हरि/ ब्रह्मा परमात्मा क्यों नहीं?

- क्या डमरू आदि को धारण करने वाला सर्वज्ञ है? या रात्रि में पितृवन में सोता है इसलिए वह हर/ शिव / सर्वज्ञ है ?
- भीषण आकृति युक्त परमात्मा कैसे हो सकता है ?
- जो कामोन्मत है या एक गाँव को जलाने वाला सर्वज्ञ कैसे हो सकता है ?
- अर्ध नारीश्वर क्या सर्वज्ञ हो सकता है ?
- यदि कृष्ण परमदेव हैं तो फिर वह छेड़ना आदि क्रियाओं को क्यों करते हैं।
- यदि संसार में रहते हुए भी कृष्ण परमात्मा है तो फिर सभी संसार के जीव परमात्मा क्यों नहीं ?
- जो अपने ही शरीर की व्याधियों को क्षय करने में समर्थ नहीं, वह परमात्मा कैसे हो सकता है ?
- जो स्वयं सम्पूर्ण लोक को प्रकाश देना वाला है वह राहु के द्वारा ग्रासित कर लिया जाय, ऐसा सूर्य परमात्मा कैसे हो सकता है ?
- सभी हरि/ हर/ ब्रह्मा/ विष्णु/ बुद्ध और सूर्य आदि लोक प्रसिद्ध हैं किन्तु अपने हाथ में अस्त्र-शस्त्र आदि को फिर क्यों धारण करते हैं ?
- सूर्य स्वयं अपने को राहु के दोष से नहीं बचा सका, वह दूसरों को जीवन दान कैसे दे सकता है ?
- ये सभी शक्तिमान परमात्मा हैं इनको दूसरों से भय नहीं, फिर भी अकस्मात् अस्त्र-शस्त्र क्यों धारण करते हैं ?

......फिर परमात्मा कौन ? उत्तर में ग्रन्थ रचियता लिखते हैं -

- क्षुधा आदि बाईस परिषहों से रहित, जन्म-मरण आदि दोषों से रहित जो जीव हैं वह परमदेव है।
- क्रोधादि कषाय रहित, समस्त विकारों से परे निरम्बर या मनोहर जो हैं वे परमात्मा हैं।
- परमदेव/ परमसुखी/ परम शिव/ इन्द्रियजयी जो जीव हैं वे देवेन्दों के देव महादेव हैं।
- अव्याबाध, अनन्त सुख के कारण शंकर है। अर्थात जिनमें किसी तरह की शंका नहीं वे शंकर है।
- चन्द्र और सूर्य भी निज-निज श्रेष्ठ गुणों के कारण हैं।

ग्रन्थ की १३९ से १९२ तक की गाथाओं में धर्म के भेद - सार - उद्देश्य/सम्यक्त्व प्राप्त करने का हेतु/सागार और अनगार धर्म के गुणों की विवेचना/बारह व्रतों के पालन एवं उनके फल/देव लोक में भोगे जाने वाले सुखों का वर्णन/स्वर्ग एवं सिद्ध मुक्त होने का वर्णन का विस्तार पूर्वक विवेचन किया गया है।

आचार्य पद्मनन्दि मुनिराज का यह ग्रन्थ साधारण जनों से लेकर सागार और अनगार धर्म के सार को समझने में निश्चित ही उपादेय है। ग्रन्थ का अनुवाद **उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर जी** ने सरल और सूक्ष्म दृष्टि के आधार पर किया है जिससे जन सामान्य धर्म के सार को ग्राह्य कर सके। उपाध्याय श्री का यह प्रयास सराहनीय ही नहीं वरन् वन्दनीय है कि उन्होंने प्राकृत भाषा के ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद मूलार्थ को ध्यान में रखते हुए सरल/ सुबोध / बोधगम्य भाषा में जनहितार्थ प्रस्तुत किया है।

प्रश्नोत्तर श्रावकाचार
(आचार्य सकलकीर्ति विरचित)

युग प्रमुख, चारित्र–शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, **आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज** हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित। यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सोनागिरि (म.प्र.) का ३५वाँ पुष्प है।

प्रश्नोत्तर श्रावकाचार
(आचार्य सकलकीर्ति विरचित)

सम्पादक– धर्मचंद्र शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य / प्रेरक– उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर जी महाराज / निर्देशक– आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी / प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद, सोनागिरि। प्रकाशन वर्ष–प्रथम सस्करण 1990–91 / प्राप्ति स्थान–
(1) आचार्य श्री विमल सागर जी मुनि संघ
(2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया
(3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोधी रोड, दिल्ली

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–३५

प्रस्तुत ग्रंथ की संस्कृत श्लोकों में 24 परिच्छेदों में रचना हुई है। **प्रथम परिच्छेद में** 50 श्लोकों में सक्षेप से व्रतों का निरूपण है। **दूसरे** मे 7 तत्व नौ पदार्थ का स्वरूप 86 श्लोकों में, **तीसरे** मे 156 श्लोकों द्वारा देव गुरु और धर्म का स्वरूप है। **चौथे** में 61 श्लोकों मे आठ अग का विवरण, **पांचवें** में 59 श्लोकों में निशंकित अंग वर्णन में अंजन। **छठवें** में 45 श्लोकों मे अनन्तमती के निकांक्षित गुण की कथा, **सातवें** में 61 श्लोकों में खेती रानी संयम व्रत था, **आठवें** में 70 श्लोकों में मुनि वारिषेण कथा, **नवें** में 70 श्लोकों में वात्सल्य अंग धारी मुनिराज विष्णु कुमार की कथा, **दसवें** में 71 श्लोकों में प्रभावना अंगधारी मुनि वज्रकुमार की कथा दी हैं। **ग्यारहवें परिच्छेद** में 109 श्लोकों में सम्यकदर्शन के दोष और माहात्म्य का वर्णन है। **बारहवें** में 209 श्लोकों में आठमूलगुण, सप्त व्यसन और अहिंसा व्रत वर्णित है। **तेरहवें** में 111 श्लोकों में सत्यव्रत कथा, **चौदहवें** में 86 श्लोकों में अचौर्यव्रत कथा, **पंद्रहवें** में 132 श्लोकों में ब्रह्मचर्य व्रत कथाए, **सोलहवें** में 112 श्लोकों मे परिग्रह परिमाण व्रतकथा, **सत्रहवें** में 148 श्लोकों में तीन गुणव्रत, **अठारहवें** में 195 श्लोकों में देशावकाशिक और सामायिक व्रत वर्णन है। **उन्नीसवें** में 76 श्लोकों में प्रोषधोपवास, **बीसवें** मे 245 श्लोकों में चार प्रकार के दान, **इक्कीसवें** में 196 श्लोकों में चार दान प्रसिद्ध कथाएं है। **बाईसवें** मे 115 श्लोकों में सल्लेखना, सामायिक, प्रोषधोपवास, सचित त्याग, रात्रि भोजन त्याग प्रतिमाओं का वर्णन है। **तेईसवें** में 150 श्लोकों में ब्रह्मचर्य, आरंभत्याग, परिग्रह त्याग प्रतिमाओं का विवरण है। **अंतिम परिच्छेद** मे 145 गाथाओं में अनुमति त्याग, उदिष्ट त्याग प्रतिमाओं का निरूपण है। भाषार सरल है तथा विवरण प्रेरणास्पद है। रचनाकार का उल्लेख नेमिचंद्र शास्त्री के तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परंपरा भाग 4 में किया है। जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश भाग 11 में ईस्वी सदी 15 मे एक सकलकीर्ति का उल्लेख है, जिन्होंने सुकुमार चरित्र लिखा है।



आलाप पद्धति

सन्मार्ग दिवाकर, चारित्र शिरोमणी **आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर आगम वाणी की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ, भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (म.प्र.) का ३६ वाँ पुष्प है।

इस ग्रन्थ का नाम यद्यपि आलाप - पद्धति (बोल-चाल की रीति) है, तथापि इसका

आलाप पद्धति
श्रीमद् देव सेनाचार्य विरिचत

अनुवादक - पं. रतनचन्द्र जैन/ प्रकाशन वर्ष - १९८९-९०/ मूल्य - रुपय पृष्ठ संख्या - ८+२०८+१२=२२८/ प्रकाशन भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद, सोनागिरि (दतिया) म.प्र. / प्राप्ती स्थान (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर गुलाब वाटिका, लोनी रोड - दिल्लीमुद्रक - राधाप्रेस, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -३६

अपर नाम द्रव्यानुयोग प्रवेशिका है। इसमें द्रव्य, गुण, पर्याय, स्वभाव, प्रमाण एवं नय आदि का वर्णन है। द्रव्यानुयोग की स्वाध्याय से पूर्व आलाप पद्धति का ज्ञान होना अति आवश्यक है, क्योंकि इसके बिना द्रव्यानुयोग में प्रवेश तथा उसका यथार्थ बोध होना सम्भव नहीं है।

यद्यपि सामान्य से निश्चय व व्यवहार शब्दों का प्रयोग हुआ है तथापि निश्चय शब्द से कहां पर किस नय से प्रयोजन है और व्यवहार शब्द से किस नय से प्रयोजन है इसका ज्ञान हुए बिना द्रव्यानुयोग का यथार्थ भाव भास नहीं हो सकता है। अतः द्रव्यानुयोग में प्रवेश करने से पूर्व इस ग्रन्थ का अध्ययन करना प्रथम आवश्यक है।

इस ग्रन्थ में कुल २२८ सूत्र हैं। **प्रथम (सात सूत्रों में)** मंगलाचरण / आलाप पद्धिति का अर्थ - प्रयोजन/ द्रव्य के नाम - लक्षण/ लोक आलोक के विभाग का कारण समझाया गया है। इसके पश्चात सूत्र ८ से १४ तक में **गुणाधिकार** / सूत्र १५ से २६ तक में - **पर्याय अधिकार**/सूत्र २७ से ३१ तक में - **स्वभाव अधिकार**/ सूत्र ३३ से ३८ तक में **प्रमाण अधिकार**/ सूत्र ३९ से ९१ तक में - **नय अधिकार**/ सूत्र ९२ से १०४ तक में - **गुण व्युत्पत्ति अधिकार**/ सूत्र १०५ में - **पर्याय की व्युत्पत्ति** / सूत्र १०६ से सूत्र १२५ तक में - **स्वभाव व्युत्पत्ति अधिकार**/ सूत्र १२६ से १४९ तक में - **एकान्त पक्ष में दोष**/ सूत्र १५० से १७६ तक मे **नय योजना**/ सूत्र १७७ से १८० तक में - **प्रमाण का कथन**/ सूत्र १८१-१८२ में - **नय का लक्षण व भेद** /सूत्र १८३ में **निक्षेप की व्युत्पत्ति** १८४ से २१३ में - **नयों के भेदों की व्युत्पत्ति** /सूत्र २१४ से २२८ तक में - **अध्यात्म नय** - का वर्णन है। इसके पश्चात् ग्रन्थ में चार परिशिष्ट दिये गये हैं। जिनमें क्रमशः **अनेकान्त व स्याद्वाद / अर्थ क्रियाकारित्व / अनेक क्रिया कारित्व एवं संकर आदि आठ दोष** को समझाया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में मूलसूत्र पृष्ठ १ से ३५ तक में / भाषा - अन्वयार्थ - विशेषार्थ पृष्ठ ३६ से २०८ तक में एवं परिशिष्ट अंत में १२ पृष्ठों में मुद्रित है।

पुस्तक में सरल एवं बोद्धगम्य भाषा का प्रयोग किया गया है। कहीं -कहीं अन्य पुस्तकों के उदाहरण देकर विषय को सरलीकृत करतेहुए समझाया गया है। ■

- **अज्ञानी पुण्य की सेवा करता है, ज्ञानी की पुण्य सेवा करता है।**
- **यदि श्रद्धा सच्ची है तो सदाचार भी सच्चा होगा। यदि सदाचार नहीं तो श्रद्धा भी सच्ची नहीं।**

मदन पराजय
(श्री नागदेव विरचित)

युग प्रमुख, चारित्र शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, **आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित यह ग्रन्थ भरतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि(म.प्र.) का ३७वाँ पुष्प है।

मदन पराजय
(श्री नागदेव विरचित)

सम्पादक/अनुवादक– डॉ.लाल बहादुर शास्त्री/ प्रेरक– उपाध्याय मुनि श्री भारत सागर जी महाराज/ निर्देशक– आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी /प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद् / प्रकाशन वर्ष – 1989–90/ प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी मुनि संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड, दिल्ली

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–३७

प्रस्तुत मूल ग्रंथ संस्कृत के महान् कवि एवं गद्यकार नागदेव द्वारा रचित है। वे सास्वत कुलोत्पन्न थे किंतु मार्दव गुण की प्रशस्ति सहित भावना उनके इस परिचय से स्पष्ट है–**मैं अल्पज्ञ हूँ। छन्द, अलंकार, काव्य और व्याकरण शास्त्र का भी मुझे परिचय नहीं है**। इस ग्रंथ की रचना कब हुई, अज्ञात है किंतु इस पर पं.**आशाधरजी** का प्रभाव दिखाई देता है। उन्होंने लिखा है कि हरदेव ने अप्रभंश में "मदन पराजय" लिखा है, उसी ग्रंथ के आधार पर संस्कृत में रचित हुआ है। वह 14 वीं शती में रचा प्रतीत होता है, यहीं समय श्री नागदेव का भी प्रतीत होता है। वस्तुतः प्राकृत शब्दावली को संस्कृतीकृत करना अपने आपमें प्रतिभाशाली व्यक्ति ही कर सकता है। सम्यक्त्व कौमुदी भी इनकी रचना प्रतीत होती है। प्रस्तुत "मदन परायज" संभतः स्मर पराजय, मारपराजय और जिनस्तोत्र ही है।

इस ग्रंथ में रूपक शैली द्वारा मदन के पराजित होने की कथा वर्णित है। आत्मा राजा, सभासद रूप में शल्या, गारवा, कर्मदंड, दोष आश्रव आदि योद्धा है। सचिव मोह, जिनराज का मुक्तिकन्या से विवाह तथा मकरध्वज से युद्ध आदि तथ रति प्रीति नामक उसकी पत्नियाँ रूपक को अप्रतिम बना देती है। कल्पना का सूक्ष्म प्रयोग, अलंकार, रस और भाव संयोजन महत्वपूर्ण है। पांच परिच्छेदों में ग्रंथ समाप्य है। **प्रथम परिच्छेद** में 65 श्लोक द्वारा श्रुतावस्था का, **द्वितीय** में 44 तथा अन्य श्लोकों द्वारा दूत विधि संवाद, **तृतीय** में 9 श्लोक द्वारा कामसेना का, **चतुर्थ** में 22 श्लोकों द्वारा अङ्ग भंग का तथा पंचम में 42 आदि श्लोकों द्वारा मुक्ति स्वयंवर का विशद विवरण है।

अनुवाद हिंदी में दिया गया है तथा संपादक संशोधन परिवर्धन रूप में हुआ है। ग्रन्थ पठनीय है जो आगम के विषय पर जानकारी प्रदान करता है।

वसुनन्दि श्रावकाचार

युगप्रमुख, चरित्र शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज, हीरक जयन्ती वर्ष प्रकाशन पुष्प नं 38

वसुनन्दि श्रावकाचार **(आचार्य वसुनन्दि)**
सानिध्य– उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर महाराज/ निर्देशन– आर्यिका स्याद्वादमती माताजी। प्रकाशन वर्ष 1989–90/ पृ.सं 12 + 155 = 167 / प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बासवाडा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका लोनी रोड़, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–38

प्राकृत मे श्रावक धर्म विषयक सर्वप्रथम स्वतन्त्र रचना **सावय पण्णत्ति** मानी जाती हैं, जिसमे 401 प्राकृत गाथाओं द्वारा श्रावकों के पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, और चार शिक्षाव्रत का प्ररूपण किया गया है। पुन प्राकृत गाथाओ द्वारा गृहस्थ धर्म का प्ररूपण करने वाला दूसरा ग्रथ, प्रस्तुत ग्रथ **वसुनन्दि कृत उपासकाध्ययन (श्रावकाचार)** है, जिसमे 546 गाथाओं द्वारा श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का सविस्तार वर्णन किया गया है। कर्त्ता ने अपना परिचय ग्रथ की प्रशस्ति मे दिया है, जिसके अनुसार उनकी गुरु परम्परा में कुदकुदाम्नाय मे क्रमश श्री नदि, नयनदि, नेमिचन्द्र और वसुनदि, इस प्रकार पाई गई है। उन्होंने यह भी कहा है कि मैंने अपने गुरु नेमिचन्द्र के प्रसाद से इस आचार्य परम्परागत **उपास का ध्ययन** को वात्सल्य और आदरभाव से भव्यो के लिए रचा। ग्रथ के आदि में उन्होंने यह भी कहा है कि विपुलाचल पर्वत पर इन्द्रभूति ने जो श्रेणिक को उपदेश दिया था, उसीको गुरु परिपाटी से कहे जानेवाले इस ग्रथ को सुनिये। ध्यान रहे कि द्वादशांगान्तर्गत सातवे श्रुतांग "उपासक दशा" मे हमें श्रावक की इन्हीं ग्यारह प्रतिमाओ का प्ररूपण मिलता है। भेद यह है कि वहाँ यह विषय आनन्द श्रावक के कथानक के अन्तर्गत आया है, और यहाँ स्वतन्त्र रूप से इसमे की 295–301 तक की, तथा इससे पूर्व की अन्य कुछ गाथाएँ श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र से ज्यों की त्यों मिलती है। कुंदकुंदाचार्य कृत चरित्र पाहुड गाथा 22 में ग्यारह प्रतिमाओं के नाम मात्र उल्लिखित हैं। उनका कुछ विस्तार से वर्णन कार्तिकेयानुप्रेक्षा की 305–390 तक 86 गाथाओं में किया गया है। इन सभी से भिन्न वसुनदि ने यह विशेषता उत्पन्न की है कि उन्होने निशिभोजन–त्याग को प्रथम दर्शन प्रतिमा में ही आवश्यक बताकर छठवीं प्रतिमा में उसके स्थान पर दिवा ब्रह्मचर्य का विधान किया है। ग्रंथ की रचना का काल निश्चित नहीं है, तथापि इस ग्रथ की अनेक गाथाएँ आ देव सेन कृत भाव सग्रह के आधार से लिखी गई प्रतीत होती है, जिससे इसकी रचना की पूर्वावधि ई. 933 अनुमानित की गई हैं। उत्तरावधि ई 1239 है। इसके विशदसंस्करण अन्य प्रकाशको द्वारा निकाले गये है।



प्रस्तुत ग्रथ मे मूल प्राकृत भाषाओ तथा उनका श्लोकवार हिंदी अनुवाद सहित प्रकाशित किया गया है। तत्वो का विवरण 45 गाथाों तक है। सम्यक्त्व के आठ अग, प्रसिद्ध नाम, द्यूत दोष, मद्य दोष, मधु दोष, मास दोष, 85 गाथाओं तक है। वेश्या दोष, पारद्धि दोष, चौर्य दोष, परदारा दोष, सप्तव्यसन दोषादि 126 गाथा तक है। प्रतिमाओं का विवरण 313 गाथाओं तक है। विनय, वैयावृत्य, कायक्लेश, व्रत, पूजा, प्रतिष्ठा विधान और ध्यानों का विवरण बाद की गाथाओं में किया गया है। इस प्रकार श्रावकाचार पर यह ग्रथ अत्यत सुगम्य, सुबोध भाषा में उपलब्ध किया गया है। पाठकें को यह संस्करण अत्यंत सुलभ है और कल्याणकारी है। ❑

पवयण सारो (प्रवचन सारः)
(सिरि कोंडकुंड आइरिय पणीदो)

युग प्रमुख, चारित्र–शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज हीरक जयनती के उपलक्ष्य में प्रकाशित । यह प्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सोनागिरि (म.प्र.) का ४०वाँ पुष्प है।

पवयण सारो (प्रवचन सारः) **(सिरि कोंडकुंड आइरिय पणीदो)**
सम्पादक/ अनुवादक डॉ.श्रेयांस कुमार जैन / प्रेरक– उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर जी महाराज / निर्देशक– आर्यिका श्री स्याद्वादमती माता जी / प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद, सोनागिरि (म.प्र.)। प्रकाशन वर्ष–प्रथम संस्करण 1990–91 /प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी मुनि संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका लोनी रोड, दिल्ली /मुद्रक– सुमन प्रिंटर्स, मेरठ शहा।
हीरक जयन्तीप्रकाशन माला पुष्प संख्या–४०

प्रस्तुत ग्रंथ संभवतः ईस्वी पूर्व प्रथम सदी में हुए **आचार्य श्री कुन्दकुन्द** विरचित प्राकृत की 275 गाथाओं सहित है। इसमे मूल गाथा, सस्कृत छाया, श्री अमृत चन्द्र सूरिकृत तत्वप्रदीपिका नामक सस्कृत टीका, श्रीजयसेनाचार्य कृत तात्पर्य वृत्तिनामक संस्कृत व्याख्या और स्व.पंडित अजित कुमार शास्त्री तथा स्व.पं श्री रतनचन्द्र मुख्तार के भाषानुवाद दिये गये हैं। प्रस्तावना में ब्र.रतनचन्द्र मुख्तार ने षट्खण्डागमें एवं कषाय पाहुड़ ग्रंथों का इतिहास देते हुए आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा हुई 12000 श्लोक प्रमाण षट्खण्डागम टीका परिकर्म का उल्लेख किया है। प्रवचनसार में तीन अधिकार है–(1) ज्ञानाधिकार (2) दर्शनाधिकार अथवा ज्ञेयाधिकार (3) चारित्राधिकार। **प्रथम अधिकार** में 101 गाथाएँ हैं जिन पर **श्री जयसेन एवं श्री प्रभाचंद आचार्य** द्वारा टीका है। **श्री अमृतचन्द्र आचार्य** द्वारा मात्र 92 गाथाओं पर टीका है। श्री कुंदकुंदाचार्य ने व्यवहारनयका आश्रयदेकर प्रथम 5 गाथाओं में मंगलाचरण किया है। गाथा 6 में सम्यक् चारित्र के फलस्वरूप स्वर्गादि वैभव के साथ–साथ मोक्ष कहा है ? गाथा 7 में चारित्र को धर्म बतलाते हुए स्वरूपाचरण का लक्षण बताया गया है। गाथा 11–13 में तीनों उपयोग के फल का कथन है। गाथा 14 में शुद्धोपयोग का लक्षण है। गाथा 52–68 में ज्ञान के साथ सुख का अविनाभावी सम्बन्ध बतलाया है। गाथा 80–92 मे मोह को जीतने का उपाय है। गाथा 93 से 126 तक ज्ञेयों का कथन तथा द्रव्य को गुण पर्यायात्मक अर्थ कहा है। पर्यायविमूढ़ का विवेचन है। गाथा 123–126 में ज्ञान चेतना, कर्मचेतना, कर्मफलचेतना का कथन है। गाथा 127 से 144 तक द्रव्यविशेष, गाथा 145–200 में जीवद्रव्यका विशेष कथन है। तीसरा अधिकार मे 96 गाथाओं में से अमृतचंद्राचार्य की टीका 75 गाथाओं पर है। 11 गाथाओं में यहां स्त्री मुक्ति वा शूद्र मुक्ति का खंडन किया है। यहां संयम ग्रहण योग्यता पर गाथाएं है। 232–235 गाथाओं मे आगमाम्यास्त बिना मोक्ष मार्ग नहीं है। शेष में कर्मों क्षय, शुभोपयोग तथा तत्वों का का विवेचन है। संपादक ने पाठान्तरों को पाद टिप्पण में दिया है, संदर्भ दिये हैं, ग्रंथकों परिमार्जित किया है। यदि इसे सहजानन्द वर्णी की ससदशांगी टीका सहित प्रवचन सार के साथ पढ़ा जाय तो विशेष काम हो सकेगा। साथ ही प्रवचनसार एक अध्ययन योग्य कृति है। कृति के साथ डॉ.उपाध्ये की डी. लिट. थीसिस का हिंदी अनुवाद प्रवचनसार एक अध्ययन द्दष्टव्य है। प्रस्तुत कृति की भाषा आगम अनुकूल है तथा ग्रन्थानुकूल है।

सागर धर्मामृत

चारित्र शिरोमणी, वात्सल्य रत्नाकार **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती के** मांगलिक प्रसंग पर, आगम वाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का ४०वाँ पुष्प है।

सागर धर्ममृत
महा पण्डित आशाधर

अनुवादिका - गणिनी आर्यिका १०५ सुपार्श्वमती जी/ सम्पादक - पं. श्याम सुन्दर लाल जी शास्त्री/ पृष्ठ संख्या - १०+१२+१२+५६० = ५९४/ प्रकाशन वर्ष - १९९१ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज संघ(२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली। मुद्रक - वर्धमान मुद्रणालय, वाराणसी।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -४०

महापण्डित आशाधर जी का यह ग्रन्थ जैन संसार में जैनधर्म को प्रतिपादित करने वाला श्रेष्ठ ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद गणिनी आर्यिका सुपार्श्वमती जी ने आर्ष परम्परा के अनुसार अन्वयार्थ, भावार्थ सहित लिखा है। यथा स्थान ज्ञातव्य विषयों का स्पष्टीकरण भी दिया गया है।

आत्म विकास के लिये संयम की साधना परम आवश्यक है। असंयम पूर्ण जीवन में आत्म शक्ति का संचय नहीं हो सकता है। विषयोन्मुख जीवन सेआत्मा मे दैत्य एवं परावलम्बन के भाव उत्पन्न होते हैं। संयम और आत्मावलम्बन के द्वारा यह आत्मा विकास को प्राप्त होता है। इससे आत्मा में अद्भुत शक्तियाँ प्राप्त होती हैं। अपने मन और इन्द्रियों को वश में करने के कारण साधक तीन लोक को वश में करने योग्य अपूर्व शक्ति का स्वामी बनता है। उस संयम के द्वारा यह आत्मा परमात्मा बन जाता है। **जीवन को सुघड़ बनाने वाली, आलोक की ओर ले जाने वाली मर्यादाएँ संयम कहलाती हैं।** जो मर्यादाएँ सर्वभौम हैं, जो प्राणी मात्र के लिए हितोपयोगी हैं और जिनसे स्व-पर का हित साधन होता है उन्हें संयम कहते हैं।

संयम दो प्रकार का है - देश संयम और सकल संयम। सकल संयम का अर्थ है पंच महाव्रत, पंच समिति और तीन गुप्ति रुप तेरह प्रकार के चारित्र का पालन करना। इसका वर्णन **अनगार धर्मामृत, मूलाचार** आदि ग्रन्थों में किया गया है।

देश संयम का अर्थ है अहिंसादि व्रतों का आंशिक रुप से पालन करना। देश संयम की का दूसरा अर्थ आगार व्रत भी है जिसका अर्थ है गृहस्थ के पालन करने योग्य व्रत। जो आगार (स्त्री-पुत्रादिक) सहित है उसको सागार कहते हैं। **सागार का धर्म रुप अमृत -सागार धर्मामृत कहलाता है।**

मानव जीवन को प्राप्त कर यदि सकल संयम धारण करने का सामर्थ्य नहीं है तो श्रावक धर्म का पालन कर आत्म विकास करना चाहिये। .... और इस ग्रन्थ में महा पण्डित आशाधर जी ने श्रावक धर्म का कोई भी आचार शेष नहीं छोड़ा है।

ग्रन्थ के **प्रथम अध्याय** में सागार का लक्षण का एवं सम्यकदर्शन के विषय पर चरणानुयोग विषयक चर्चा की गई है जो २० श्लोकों में वर्णित है। ग्रन्थ का **द्वितीय अध्याय**

पूरे ग्रन्थ का महत्वपूर्ण अध्याय है जिसमें ८७ श्लोक हैं। इसमें पाक्षिक श्रावक की चर्या के साथ जैन दीक्षा विधि की पात्रता पर चर्चा की गई है। **तृतीय अध्याय** में कुल ३२ श्लोक हैं जिनमें ग्रन्थकार ने नैष्ठिक श्रावक का लक्षण प्रतिपादित करते हुए सबसे पहिले दार्शनिक श्रावक का विवेचन किया है। ग्रन्थ के **चतुर्थ अध्याय** में कुल ६६ श्लोक हैं जिनमें नैष्ठिक व्रती का वर्णन करते हुए उसे मुख्यतः निःशल्य होना चाहिये इस प्रकार प्रतिपादित किया गया है, क्योंकि शल्यों के कारण व्रतों में विशुद्धि नहीं आ सकती। तदन्तर गृहस्थों के उत्तरगुणों को प्रतिपादित करते हुए पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों का उल्लेख किया गया है। **पाँचवें अध्याय** में नैष्ठिक श्रावक के व्रतों की परिरक्षा हेतु सप्तशीलों का एवं अतिथि संविभाग व्रत का निरुपण करते हुए गृहस्थ जीवन में दान का महत्व का वर्णन ५५ श्लोकों में किया गया है। **छटे अध्याय** में प्रातः ब्रह्ममूहूर्त से उठकर रात्रि के विश्राम तक की क्रिया को समयानुसार धार्मिक/ आर्थिक और कार्मिक विभागों में विभाजित किया गया है, जिससे ये **तीनों पुरुषार्थ** एक दूसरे के बाधक न बन सके। **सप्तम अध्याय** में कुल ६१ श्लोक है जिनमें पूर्णरुप से शेष द्वितीय आदि दस प्रतिमाओं का कथन किया गया है तथा ग्यारहवीं प्रतिमा के भेद व क्षुल्लक की चर्या का विशेष कथन कहा गया है। **आठवें अध्याय** में ११० श्लोक हैं जिसमें मृत्यु की कला का वर्णन है अर्थात समाधिमरण ही व्रतों का सार है।

प्रस्तुत कृति में यथा स्थान पौराणिक कथाएँ उदाहरण आदि भी दिये गये हैं। ग्रन्थकर्त्ता ने अपनी स्वतन्त्र शैली से ग्रन्थ की रचना की है जो श्रावकों के समझ में आने में सक्षम है। ■

बोधामृत सार

युग प्रमुख चरित्र शिरोमणि सन्मार्ग दिवाकर पूज्य आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयंती पर प्रकाशित पुष्प सं.41



बोधामृत सार
(मुनिराज कुंथु सागर विरचित)

अनुवादक– प लालाराम जी शास्त्री/ प्रेरक-- उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर जी महाराज/ निर्देशक– आर्यिका स्याद्वादमती माताजी/ सस्करण– 1989–90/ मूल्य– 25 रु /पृ 10+108=118/ प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सोनागिर (म प्र)/ प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य विमलसागर जी सघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया (बॉसवाड़ा) (3) श्री दि जैन मदिर गुलाब वटिका दिल्ली

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–41

पूज्य आचार्य श्री 108 शांतिसागर सघस्थ मुनिराज कुथूसागर महाराज का विशाल व्यक्तित्व और विद्वता से प्रस्तुत उनका यह ग्रथ सस्कृत मे 532 श्लोकों मे तथा प्रशस्ति 28 श्लोको मे पूर्ण हुआ है। महावीर निर्वाण स 2463 मे कार्तिक शुक्ल द्वितीया को चातुर्मास अवसर पर इसे लिखकर समाप्त किया गया था। इसमे चार अधिकार है। **प्रथम अधिकार** 265 गाथाओ मे समाप्त है जिसमे धर्म और भव्य जीवो को प्रेरित किया गया है। ऐसा धर्मसम्यक्त्व रूप मार्गप्रकाशित करने मे उनकी शैली अभूतपूर्व रही है। **दूसरा अधिकार** गाथा 372 तक है जिसमें व्रतादि सम्यकदर्शनादि तथा षोडसकारण भावनाओं और दशधर्म लक्षणों का प्रशस्त चित्रण है। **तृतीय अधिकार** गाथा 438 तक दिया है जिसमे अनुप्रेक्षा, सप्ततत्व, व्यसन व पापादिका बोध दिया गया है। **चतुर्थ अधिकार** 532 वीं गाथा तक समाप्त होता है जिसमे श्रावकधर्म का विशेष वर्णन दिया गया है। यहाँ 11 वीं प्रतिमा तक का स्वरूप सुबोध गम्य भाषा मे प्रस्तुत किया गया है। यह ग्रथ यथा नाम तथा गुण है। वस्तुत बोधि रूप अमृत सद्गुरु द्वारा ही प्राप्त हो सकता है, अत प्रस्तुत ग्रथ कल्याणकारी है और गृहस्थों एवं बालकों के लिए अत्यंत कल्याणप्रद सिद्ध होगा।

यदि करना है पूजा तो मन में ईमान लाओ,
यदि बजाना है तुम्हें घंटा तो सिद्धान्त का बजाओ!
यह अर्घ नहीं निश्चय महाअर्घ होगा तुम्हारा,
हक न छीनो तुम गरीबों का गोद में उनको उठाओ!!
— आरती "जयवीर"

आप्त परीक्षा
आचार्य श्री विद्यानन्द स्वामी

युग प्रमुख, चारित्र–शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज हीरक जयंती वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित। यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद सोनागिरि (म.प्र.) का ४३वाँ पुष्प है।

आप्त परीक्षा आचार्य श्री विद्यानन्द स्वामी
सम्पादक/ अनुवादक– डॉ.पं.दरबारी लाल जैन, कोठिया /प्रेरक– उपाध्याय मुनि श्री भरत सागर जी महाराज/ निर्देशक– आर्यिका श्री स्याद्वादमती माता जी / प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद। प्रकाशन वर्ष, द्वितीय संस्करण 1992 /प्राप्ति स्थान–(1) आचार्य श्री विमल सागर जी मुनि संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड, दिल्ली
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या ४३

प्रस्तुत ग्रंथ में सारस्वत **आचार्य विद्यानन्द जी** ने प्रमाण एवं दर्शन द्वारा आप्त अर्थात जो प्रामाणिक है, सच्चा है, विश्वासयोग्य है ऐसे आप्त व्यक्ति की जाँच करने का कठिन कार्य सुलभ किया है। वैदिक परम्परा के अनुयायी दर्शनों में सर्वज्ञता को लेकर दो पक्ष है। मीमांसक किसी सर्वज्ञ की सत्ता को स्वीकार नहीं करता, शेष वैदिक दर्शन स्वीकार करते हैं। किन्तु श्रमण परम्परा के अनुयायी, सांख्य, बौद्ध और जैन सर्वज्ञता स्वीकार करते हैं। इस श्रमण परम्परा के तीनों दर्शन अनीश्वरवादी हैं, किन्तु वैदिक दर्शनों में मीमांसक के सिवा शेष सभी ईश्वरवादी हैं। ईश्वरवादी ईश्वर को जगत की उत्पत्ति में निमित्त कारण मानते हैं अतः उसे सर्वज्ञ और अनादि अनंत भी मानते हैं। जो जीव योग से सर्वज्ञ होते हैं वे मुक्त होते ही ज्ञान हीन हो जाते हैं। निरीश्वरवादी में बौद्ध तो अनात्मवादी हैं। सांख्य ज्ञान को प्रकृति का धर्म मानता है, अतः पुरुष और प्रकृति का सम्बन्ध छूटते ही मुक्ता ज्ञान शून्य हो जाता है। **केवल जैन दर्शन ही ऐसा है, जो मुक्त हो जाने पर भी जीव की सर्वज्ञता स्वीकार करता है।** इसी शुद्ध जीव की सर्वज्ञता पर जैन दर्शन ने जो जोर दिया उतना किसी अन्य ने नहीं। अतः **आचार्य समन्त भद्र** ने भी कहा है कि आप्त को नियम से वीतरागी, सर्वज्ञ और आगम का उपदेष्टा होने ही चाहिये, बिना इनके आप्तता हो नहीं सकती। **आचार्य श्री विद्यानन्द** ने न्यायपूर्वक आप्त की परीक्षा की है जो संस्कृत में 124 कारिकाओं में रचित हुई। उन्होंने "मोक्षमार्गस्यनेतारं" आदि मंगल श्लोक लेकर इसकी रचना की। उन्हें स्याद्वाद सरस्थिति ही अभीष्ट थी। ये पात्र केसरी से भिन्न है। इन्हीं 124 कारिकाओं पर स्वयं विद्यानन्द स्वामी की **"आप्त परीक्षा नकङ्कति"** नाम की स्वोपज्ञ टीका है जो विशद और प्रसन्न है। यह जैन दर्शन का एक अपूर्व और श्रेष्ठ ग्रंथ है। **पंडित दरबारी लाल जी** ने इसमें 85 पृष्ठों की प्रस्तावना दी है जो सभी तरह के ऊहापोहमय है, विशाल न्याय दर्शन के इतिहास को प्रकाशित करती है और आचार्य विद्यानन्द का समय ई.सन् 75 ई सन् 840 निर्णीत करती है। इसमें ग्रंथ का महत्व और श्रेष्ठता, आचार्य विद्यानन्द द्वारा रचित ग्रंथादि, उनका जीवन, कार्यक्षेत्र तथा सम्बंधित ग्रंथ एवं ग्रंथकारों का विशद विवेचन भी दिया गया है।

ग्रन्थ की अनुवाद भाषा यद्यपि सरल तथा समझ आनेवाली है किन्तु कहीं–कहीं भाषा में दुरुहता भी उपलब्ध है जो जन सामान्य के ज्ञान से परे है। फिर भी ग्रन्थ अध्यन से विषय–वस्तु का सारांश स्पष्ट हो जाता है।

पार्श्वनाथ चरितम्

युग प्रमुख, तीर्थोद्धारक चूड़ामणि, **वयोवृद्ध आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के शुभ प्रसंग पर जिनवाणी प्रचार प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का चवालीसवाँ पुष्प है ।

पार्श्वनाथ चरितम् **आचार्य सकलकीर्ति विरचित**
अनुवादक एवं सम्पादक - डॉ. पन्नालाल साहित्याचार्य/प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ पृष्ठ संख्या -२८ + ३१६ = ३४४/ प्रकाशन वर्ष-१९८९-९०/ प्राप्ति स्थल (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) श्री भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (दतिया) म.प्र. (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली ।
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या - ४४

आचार्य श्री सकल कीर्ति महाराज विरचित पार्श्वनाथ चरितम् ग्रन्थ वर्तमान चौबीस तीर्थकरों में से **तेईसवें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ जी** की जीवन गाथा से रचित है । भट्टारक **सकलकीर्ति जी** ने पार्श्वनाथ चरित को महाकाव्य के समान २३ सर्गो में तीर्थंकर पार्श्वनाथ के जीवन पर काव्यात्मक शैली में विस्तृत प्रकाश डाला है । चरित के प्रथम १० सर्गो में पूर्वभवों का वर्णन है । सर्ग ११ से १८ तक में भगवान पार्श्वनाथ के गर्भ-जन्म-तप और ज्ञान कल्याणक का वर्णन एवं सर्ग १९ से २३ तक में उनके उपदेशों एवं निर्वाण गमन का वर्णन किया गया है ।

ग्रन्थ का आरम्भ २४ तीर्थंकरों की वन्दना से होता है । इसके पश्चात गौतमादि गणधरों को स्मरण करते हुए आचार्य/उपाध्याय एवं सर्व साधुओं को उनके गुणों का वर्णन करते हुए नमस्कार किया गया है । इसके पश्चात आचार्य कुन्दकुन्द, अकलंकदेव, आचार्य समन्तभद्र एवं जिनसेना-चार्य को नमस्कार किया गया है । सभी मंगलाचरण प्रथम ३९ छन्दों में वर्णित है । कथा का प्रारम्भ इसके पश्चात होता है ।

पार्श्वनाथ की कथा वस्तु आचार्य गुणभद्र के उत्तरपुराण पर आधारित है । ग्रन्थकार ने उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया है। लेकिन प्रस्तुतिकरण की उनकी अपनी शैली है। तीर्थंकर पार्श्वनाथ के सारे भव जैनधर्म का कर्म सिद्धान्त पर आधारित है । जैनधर्म की कर्म सिद्धान्त भगवान पार्श्वनाथ के इन पूर्वभवों द्वारा सरलता से समझा जा सकता है।

पार्श्वनाथ चरित उच्च कोटि का काव्य है । इसमें नायक एवं प्रतिनायक दोनों हैं । प्रत्येक भव में नायक एवं प्रतिनायक का मिलन होता है जो आगे भव के बन्ध का कारण बनते हैं । अन्त में निर्वाण की प्राप्ति ही नायक की विजय की कहानी है । पूरा महाकाव्य शान्तरस प्रधान काव्य है । मन में विकार उत्पन्न होने वाली सामग्री का कहीं समावेश नही है। महाकाव्य के अंतिम सर्गों में कवि ने छह द्रव्यों/सात तत्त्वों/पाँच महाव्रतों एवं मुक्ति मार्ग का वर्णन किया है । ग्रन्थ की भाषा सरल एवं बौद्धगम्य हैं जो श्रावकों के अध्ययन में पथ की बाधा नहीं है ।

जीवक चिन्तामणि



युग प्रमुख चारित्र शिरोमणि ज्योति पुञ्ज **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मागलिक प्रसग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा सकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (दतिया) म प्र का 45 वॉ पुष्प है।

जीवक चिन्तामणि तमिल भाषा के काव्यो मे सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। काव्य नय की दृष्टि से चिन्तामणि का अपना विशिष्ट स्थान है जिसे तमिल भाषा मे अन्य कोई साहित्यकार प्राप्त करने मे सफल नहीं हो सका। विद्यार्थियों के वर्गों के अनुसार इसके पद्य पाठ्यपुस्तकों मे भी रखे व पढाये जाते है। मन मे स्थान देने योग्य महत्वपूर्ण विषयो से परिपूर्ण यह ग्रन्थ चिन्तित वस्तुओं को प्रदान करने वाला है इसीलिए इस ग्रन्थ को **चिन्तामणि** भी कहा जाता है।

मूल मुख्य ग्रन्थ मे कुल 3145 पद्य है जो कि 11 लम्ब (सर्ग) मे समाहित है। प्रस्तुत कृति मे सिर्फ दो लम्ब (सर्ग) के पद्यों का ही प्रस्तुतिकरण हुआ है। मूलकृति का प्रथम लम्ब (सर्ग) 408 पद्यों का है। इस सर्ग के पद्यों मे **जीवन्धर कुमार** के विद्याभ्यास ओर **आर्यनन्दी महाराज** की पुनर्दीक्षा तक का वर्णन है। ग्रन्थ का **दूसरा भाग** गन्धर्वदत्तै लम्ब है जिसमे जीवन्धरकुमार गान्धर्वदत्ता को वीणा की र्स्पद्धा मे जीतकर विवाह करते है। द्वितीय लम्ब के कुल पद्य 358 है। प्रस्तुत कृति में कुल 850 पद्यों का समावेश है।

सातवीं शताब्दी का रचित यह ग्रन्थ एक पुरातन कथा को आधार शिला बनाकर रचा गया एक अद्भुत काव्य है। ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद **पण्डित मल्लिनाथ जैन शास्त्री जी** ने सरल बोधगम्य भाषा मे जनोपयोगी दृष्टि के आधार पर किया है जो अनुवादक के ज्ञान को परिलक्षित करने मे सफल रहा है। ❑

जीवक चिन्तामणि - महाकाव्य
आचार्य तिरुत्तक्कदेवर रचित

हिन्दी अनुवादक – विद्याभूषण पण्डित रत्न मल्लिनाथ जैन शास्त्री / पृष्ठ सख्या 8 + 20 + 344 = 372 / प्रकाशन वर्ष – 1994 / प्रकाशक – भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र / प्राप्ति स्थान–
(1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज सघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाडा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–45

बात फरवरी 1989 की है। पू.पू. प्रधान मन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी श्रवणबेलगोला में भगवान् बाहुबलि महामस्तकाभिषेक समारोह के अवसर पर अपने श्रद्धा सुमन अर्पित कर दिल्ली लौट आयी थी। 26 फरवरी 1981 को संसद् में बहस के दौरान कुछ संसद् सदस्यों ने इनकी इस यात्रा पर आपत्ति की तो श्रीमती गांधी ने कहा– "मैं महान् भारतीय विचारों की एक प्रमुख धारा के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने वहाँ गई थी, जिसने भारतीय इतिहास एवं संस्कृति पर गहरा प्रभाव छोड़ा है और स्वतन्त्रता–संग्राम में अपनाये गये तरीके भी इससे प्रभावित हुए हैं। गांधी जी भी जैन तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित अहिंसा व अपरिग्रह के सिद्धान्तों से प्रभावित हुए थे।

इस पर एक संसद्–सदस्य ने व्यंग्य करते हुए प्रश्न किया कि क्या आप जैन हो गई हैं? तब श्रीमती गांधी ने उत्तर दिया– मैं ही नहीं सारा राष्ट्र जैन है, क्योंकि हमारा राष्ट्र अहिंसावादी है और जैनधर्म अहिंसा में विश्वास रखता है। जैन धर्म के आदर्शों के रास्ते को हम नहीं छोड़ेंगे। यह सुनकर सब चुप हो गये। –इंदिरा गांधी

आत्म मीमांसा

चारित्र शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर **आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज की** हीरक जयंती के पावन प्रसंग पर जिनवाणी माँ की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का ४६ वाँ पुष्प है।

आत्म मीमांसा **आचार्य समंतभद्र**
अनुवादक - पं. जुगल किशोर मुख्तार/पृष्ठ संख्या - १६ + ५४ + १२० = १९० / प्रकाशन वर्ष - १९८९-९० प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज संघ (२)अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज० (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली/मुद्रक - विनोद कुमार जैन, शहदरा - दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -४६

आत्म मीमांसा (देवागम) का यह हिन्दी भाष्य, प्रसिद्ध साहित्य और इतिहासवेत्ता तथा स्वामी समन्तभद्र के अनन्य भक्त एवं उनकी कृतियों के मर्मज्ञ श्रद्धेय पण्डित जुगल किशोर जी मुख्तार द्वारा रचा गया है। समन्त भद्र स्वामी की प्रायः सभी उपलब्ध कृतियाँ अत्यन्त गम्भीर/दुरूह और दुखगाह है। मात्र रत्नकरण्डक श्रावकाचार ही ऐसी कृति है जो अन्य कृतियों की अपेक्षा कृत सरल है। किन्तु वह एक सिद्धान्तिक रचना है अतः उसका सरल होना स्वाभाविक है।

यह अनुवाद्य ग्रन्थ देवागम अपरनाम आप्त मीमांसा है जो स्वामी जैसे उन अद्वितीय महान् आचार्यों की अपूर्व कृति है जिनके वचनों को उत्तम पुरुषों के कण्ठों का आभूषण बनने वाली बड़े-बड़े गोल सुडोल मोतियों की मालाओं की प्राप्ति से अधिक दुर्लभ है। भव भ्रमण करते हुए संसारी प्राणियों को मनुष्य-भव के समान दुर्लभ दर्शाया है और भगवान-महावीर की वाणी के समकक्ष दैदीप्यमान घोषित किया है। यह आप्त मीमांसा ग्रंथ-आप्तों/सर्वज्ञ कहे जानेवालों के वचनों की परीक्षा द्वारा उनके मतों के सत्यासत्य निर्णय की दृष्टि को लिए हुए हैं। इस तरह आचार्य समन्तभद्र स्वामी की यह रचना देवागम और आप्त मीमांसा दोनों नामों से साहित्य जगत में प्रसिद्ध है।

पद्यात्मक एवं दार्शनिक शैली में रचित देवागम/आत्म मीमांसा ग्रन्थ दस परिच्छेदों में ११४ कारिकाओं में है। **प्रथम परिच्छेद** में १से २३ कारिकाएँ हैं जिनमें भाव और अभाव के सम्बन्ध में उन एकान्त मान्यताओं की मीमांसा की गई हैं जो ग्रन्थकार के समय में चर्चित एवं बद्धमूल थी। साथ ही उनका नय-विवक्षा से समन्वय करके उनमें सप्तभङ्गी - अनेकान्त की स्थापना की है। **द्वितीय परिच्छेद** में - २४ से ३६ तक १३ करिकाएँ हैं जिनमें एक (अद्वैत) और अनेक (द्वैत) के विषय में रूढ़ एकान्त धारणाओं की समालोचना करके इस युगल की अपेक्षा वस्तु को सप्तभङ्गात्मक (अनेकान्तरूप) सिद्ध किया गया है। **तृतीय परिच्छेद** में ३७ से ६० तक २४ कारिकाएँ हैं जिनमें नित्यानित्य के विरोधी युगल की अपेक्षा पूर्ववत् सप्तभङ्गी दिखाई गई है। इनमें दो महत्वपूर्ण दृष्टान्तों (लौकिक एवं लोकोत्तर) द्वारा भी वस्तु में नित्यता (ध्रौव्य) और अनित्यता (उत्पाद-व्यय) दोनों की प्रतीति सिद्ध बतलाया गया है। **चौथे परिच्छेद** में ६१ से ७२ कर कारिकाएँ हैं जिनमें भेद और

अभेद को लेकर विभिन्न वादियों द्वारा मान्य भेदैकान्त, अभेदैकान्त आदि एकान्तों की आलोचना और स्याद्वादनय से उनमें अनेकान्त की व्यवस्था की गई है। **पंचम परिच्छेद** में ७३ से ७५ तक कारिकाएँ है जिनमें अपेक्षा और अनपेक्षा के विरोधी युगल में भी सप्तभङ्गी की योजना करके अनेकान्त की व्यवस्था की गई है। **षष्ठम् परिच्छेद** की ७६ से ७८ तक कारिकाओं में वस्तु-सिद्धि का अंग उपायतत्त्व (हेतुवाद और अहेतुवाद) भी अनेकान्तात्मक है बताया गया है। **सप्तम् परिच्छेद** की ७९ से ८७ तक की कारिकाओं में ज्ञापकोपायतत्त्व में भी सप्तभङ्गी की योजना करके उसे स्याद्वादनय से अनेकान्तात्मक सिद्ध किया गया है। **अष्टम परिच्छेद** में ८८ से ९१ तक कारिकाएँ हैं जिनमें दैवेकान्त, पौरुषैकान्त आदि एकान्तों को त्रुटिपूर्ण बतलाते हुए उनमें स्याद्वाद से वस्तु सिद्धि की व्यवस्था की गई है तथा पूर्ववत् सप्तभङ्गी की योजना दिखलाई है। **नवम् परिच्छेद** में ९२ से ९४ तक की कारिकाओं मे स्याद्वाद में ही पुण्य-पाप की व्यवस्था बनती है, एकान्तवाद में नहीं वर्णित है। **दसम् परिच्छेद** में ९६ से ११४ तक कारिकाएँ हैं जिनमें ग्रन्थ का उपसंहार करते हुए ग्रन्थकार ने अपनी प्रस्तुत कृति का प्रयोजन प्रदर्शित किया है। कहा है कि हमने यह आप्त मीमांसा कल्याण के इच्छुक लोगों के लिए की है, जिससे वे ये जान सकें, श्रद्धा कर सकें और समाचरण भी कर सकें कि सम्यक् कथन अमुक है और मिथ्या कथन अमुक है। इस तरह सम्यक् कथन की सत्यता एवं उपादेयता तथा मिथ्या कथन की असत्यत एवं हेयता का उन्हें अवधारण हो सके। इससे आचार्य महोदय के परहितसम्पादन प्रवण हृदय का और उनकी दर्शनविशुद्धि, प्रचनवात्सल्य तथा मार्गप्रभावना जैसी उच्च भावनाओं का परिचय मिलता है। ■

बड़ा भिखारी

एक बार एक भिखारी राजा के द्वार पर बैठ गया। राजा जी से कुछ दान -धर्म में पैसा मिल जाय इसी आशा से द्वार पर बैठकर राजा की प्रतीक्षा कर रहा था। द्वारपाल ने कहा - राजा अभी भगवान की भक्ति कर रहे हैं, थोड़ी देर बैठो। भिखारी के कानों में कुछ गुनगुनाहट सुनाई दी। राजा भगवान से कुछ माँग रहे थे। **हे भगवन ! मेरे राज्य में धन, वैभव बढ़े, सब सुखी रहें। रत्नों के हारों का ढ़ेर हो - मणिक, मुक्ता का ढ़ेर हो आदि -आदि।**

भिखारी ने सोचा - ये राजा होकर माँगता है ? फिर बडप्पन किस काम का।. . . अरे ये मांगता है इसलिये यह भी भिखारी है। चलो भिखारी से याचना क्यों करें ?

तभी राजा बाहर आये। राजा ने भिखारी से कहा - आपको क्या चाहिये ?

भिखारी ने कहा - कुछ नहीं राजन! आप खुद भगवान से माँग रहे थे . . . . मुझे क्या देगें। कुछ नहीं राजन - कुछ नहीं।

राजा ने कहा - अरे मैं तो राजा हूँ। मैं तो वैभव मांग रहा था। तुम अपने लिये मांग लो।

भिखारी ने कहा - अरे ! मैं समझ गया, तुम बड़े भिखारी हो और मैं छोटा भिखारी। तुम भी भिखारी - मैं भी भिखारी - तुम भिखारी मुझे क्या दोगे ?

मेरुमन्दर पुराण

करुणा निधि, वात्सल्य रत्नाकर **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ति के मंगल प्रसंग पर माँ जिनवाणी के प्रचारार्थ संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह कृति भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि की ४७वॉं आगम साहित्य पुष्प है। आचार्य वामदेव विरचित मेरुमन्दर पुराण का हिन्दी टीका समाधिस्थ **आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज** ने किया है जो आगम के श्रेष्ठ ज्ञाता रहे है।

मेरुमन्दर पुराण
आचार्य वामदेव विरचित

हिन्दी टीकाकर-समाधिस्थ आचार्य श्री देशभूषण महाराज प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (दतिया) म. प्र./मूल्य-रुपया पचास मात्र /पृष्ट संख्या १०+५१०=५२०/ प्रकाशन वर्ष १९९२ प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति-लोहरिया (बाँसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर-गुलाब वाटिका- लोनीरोड़ - दिल्ली। मुद्रक-राधा प्रेस-गांधी नगर - दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -४७

ग्रन्थ के प्रथम अध्याय मे - जम्बूद्वीप के मध्य में विदेह क्षेत्र सम्बधी गंधमालनी देश के वितशोकपुर नामन नगर के राजा वैजयन्त का वर्णन है। राजा की पटरानी का नाम सर्वश्री था एवं उनके दो पुत्र संजयंत एवं जयंत थे। बडे पुत्र संजयंत के विवाह संस्कार उपरान्त पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ जिसका नाम वैजयंत रखा गया। कुछ समय उपरान्त अशोक उद्यान में स्वयंभू तीर्थंकर का समवशरण आया। राजा अपने पुरजन सहित समवशरण में गया एवं भगवान के तीन प्रदक्षिणा देकर स्तुति की। तदन्दर भगवान की दिव्यध्वनि द्वारा जीव-अजीव-सप्त तत्व-नव पदार्थ का स्वरुप समझा। राजा वैजयंत, संजयंत एवं जयंत ने उपदेश को सुना और तीनों ही संसार से विरक्त हो गये। पौत्र वैजयंत का राज्याभिषेक कर दिया जाता है। तथा तीनों दिगम्बर जिन दीक्षा धारण कर लेता है।

दीक्षा के अनन्तर वैजयंत मुनि का अर्हत पद को प्राप्त करना /जयंत मुनि का धरर्णेन्द्र बनने की गाथा के साथ प्रथम अध्याय समाप्त हो जाता है।

ग्रन्थ के द्वितीय अध्याय में - वैजयंत मुनि के मोक्ष जाने के पश्चात धरर्णेन्द्र आदि देव मोक्ष कल्याणक की पूजा करके अपने-अपने स्थान चले जाते है। संजयंत मुनि, मोक्ष कल्याणक पूजन देखकर अरण्य में चले जाते हैं और ध्यान मग्न हो जाते है। आकाश मार्ग से विद्युदष्ट्र नामक विद्याधर का आना तथा संजयंत मुनि के तप प्रभाव से विद्याधर का विमान रुकना/विद्याधर का क्रोधित होना तथा मुनि संजयंत को उठाकर समीप में बहने वाली नदी में फेंक देना/मुनि संजयंत का समता भाव रखना/विद्याधर द्वारा अनेक उपसर्ग करना और मुनि की तपस्या भंग करना....... तथा अन्त में संजयंत मुनि को मुक्ति प्राप्त होने का रोचक वर्णन है।

ग्रन्थ के तृतीय अध्याय में - संजयंत मुनि, धरर्णेन्द्र, आदित्याभ देव एवं विद्यद्दंष्ट्र विद्याधर के पूर्व की गाथा वर्णित है। कथानक निम्न प्रकार है- भरतखण्ड में सिहंपुर नाम का एक नगर है जिसके राजा सिंहसेन तथा पटरानी रामदत्ता देवी थी। उनका सत्यघोष

अपरनाम शिवभूति नाम का मन्त्री था । राजा धर्मनीति द्वारा प्रजावात्सल्य पूर्वक राज्य करता था । इसी नगर के अन्तरगत पद्मशंख नाम का एक नगर था । वहां एक सुदत्त नाम का वैश्य था । उसकी स्त्री का नाम सुमित्रा था । सुमित्रा की कोख से भद्रमित्र नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ । भद्रमित्र के योवनावस्था प्राप्त होने पर उसका विवाह कर दिया गया। भद्रमित्र कुशल व्यापारी था । वह रत्न द्वीप में व्यापार हेतु गया और वहाँ से रत्नों और मोतियों का अथाह संग्रह कर वापस सिंहपुर नगर में आया। भद्रमित्र को सिंहपुर के लोग सज्जन/धार्मिक वृतिवाले/ विश्वसनीय लगे, अतः उसने विचार किया कि यहीं व्यापार किया जाय तथा सोचा कि यह द्रव्य संग्रह एक विश्वासी व्यक्ति के पास रख देना चाहिये तथा अपने नगर जाकर परिवार को ले आना चाहिये । . . . वह रत्नों की पेटी सत्यघोष मन्त्री के पास रखने जाता है । सत्यघोष कहते है कि तुम इन रत्नों को मुझे एकान्त में लाकर देना जब कोई ओर न हो । भद्रमित्र ने मन्त्री सत्यघोष की बात मानली तथा एकान्त में रत्न सौंप कर अपने नगर, परिवार को लेने चला जाता है ।

परिवार को लाने के उपरान्त वह मन्त्री सत्यघोष के पास अपने रत्न वापस लेने जाता है । मन्त्री उसे पहिचानने से इन्कार कर देता है तथा भद्रमित्र को पागल ठहराकर मारपीट कर बाहर निकलवा देता है

तत्पश्चात भद्रमित्र अनेक प्रकार से दुखी होकर गली-गली में पुकारने लगता है कि सत्यघोष ने मेरे रत्नों की पेटी ले ली । यह राजा का मन्त्री है। ब्राह्मण है, कुलवान है । मेरी रत्नों की पेटी लौटाता नहीं है । मुझे पागल बताकर, मार पीट कर भगा दिया ।

उधर सत्यघोष ने दुष्ट लोगें के माध्यम से भद्रमित्र की सारी सम्पत्ती लूटवा दी तथा शहर से बाहर निकलवा दिया । भद्रमित्र फिर भी चिल्ला -चिल्ला कर सत्यघोष के कारनामें कहने लगा .... एक दिन राजा के कान में भद्रमित्र की बातें सुनाई पड़ी तो राजा ने मन्त्री सत्यघोष से पूछा कि क्या बात है ? मन्त्री ने कहा - वह पागल है ऐसे ही चिल्लाता फिरता है । वह झूठा और पागल है । सिंहसेन राजा ने मन्त्री की बात पर विश्वास कर लिया। . . . . पुनः सत्यघोष ने अपने कर्मचारियों के द्वारा उसे मारपीट कर शहर से बाहर निकाल दिया ।

भद्रमित्र रात्रि के समय नगर के समीप एक वृक्ष पर चढ़ जाता है तथा सूर्योदय होते ही पिछली बातों को दोहराता है । राजा ने पुनः वे सभी बातें सुनी और कहने लगा मन्त्री जो कहता है ठीक ही है . . . . यह पागल ही है ।

सिंहसेन राजा की पटरानी रामदत्ता देवी ने विचार किया कि यह आदमी यदि पागल ही है तो एक ही बात रोज बोलता है दूसरी कोई बात बोलता ही नहीं . . . रत्नों की बात ही क्यों बोलता है . . . पागल होता तो और, भी कुछ भी बोलता । वास्तव में यह पागल नहीं है । कदाचित् उसकी बात सत्य भी हो सकती है अत: बुलाकर पूछना चाहिये . . . . और रानी ने भद्रमित्र को बुलाकर सारी जानकारी प्राप्त करली । रानी ने राजा से भद्रमित्र के बारे में चर्चा की । राजा ने रानी को जाँच पड़ताल हेतु आज्ञा दे दी ।

रानी ने कहा - यदि आप आज्ञा देवें तो मैं मन्त्री के साथ जुँआ खेलू । आप मेरे समीप में बैठे रहें । मुझ में शक्ति है मैं सही निर्णय प्राप्त कर सकूँगी । राजा ने अनुमति दे दी । मन्त्री सत्यघोष को बुलाया गया । द्यूत क्रीड़ा में प्रथम दाव में रानी मन्त्री की यज्ञोपवीत एवं दूसरे दाँव में उसकी नामांकित

मुद्रिका को जीत लेती है । मन्त्री लज्जावश जुआँ खेलना छोड़ने लगता है । इधर रानी रामदत्ता देवी अपनी निपुणमती नामक दासी को मन्त्री के महल पर यज्ञोपवीत व मुद्रिका के साथ भेजती है और समझाती है कि यह भण्डारी को बता कर कहना कि मन्त्री जी ने रत्नों की पेटी मंगाई है । भण्डारी मुद्रिका आदि देखकर आश्वस्त हो रत्नों की पेटी उस दासी को दे देता है । दासी महल लौट आती है तथा रानी को सब हाल बताकर रत्नों की पेटी रानी रामदत्ता को सौंप देती है । रानी -राजा से हाल कह देती है । राजा क्रोधित हो उसे मायाचारी/ कपटी कहता है तथा मन्त्री को घर जाने की आज्ञा दे देता है ।

राजा सिंहसेन ने वास्तविकता जानने के लिये भद्रमित्र की परीक्षा लेना उचित समझा तथा पेटी के रत्न तथा और भी कई रत्न मिलाकर थाल में रख दिये । फिर भद्रमित्र से कहा - इन रत्नों में जो तुम्हारे रत्न हो निकला लो । भद्रमित्र ने अपने रत्न छाँट लिये । . . . फिर राजा ने कहा सत्यमित्र ने तुम्हारे रत्न लिये थे अतः सत्यघोष के रत्न सभी तुम ले लो । उत्तर में भद्रमित्र ने कहा - मुझे औरों के रत्न नहीं लेना । यदि सत्यघोष के रत्न मेरे पास आ गये तो मुझे पाप का भागी हो नरक जाना पड़ेगा । हमारे वंश का नाश हो जायेगा । मुझे औरों के रत्न से क्या प्रयोजन ? . . . यह तो मेरे पूर्व जन्म का अशुभ कर्म था जिसके कारण मुझे इतने दिन कष्ट उठाना पड़ा । राजा ने उसे राज्य श्रेष्ठी पद से सम्मानित किया । तत्पपश्चात् सत्यघोष को दण्ड दिया जाना तथा सत्यघोष मन्त्री के स्थान पर धर्मिला नामक ब्राह्मण को मन्त्री पद दिये जाने का वर्णन है ।

उपरोक्त वर्णन तृतीय अधिकार की गाथा पद क्रमांक २२४ से ३५६ तक में वर्णित है ।

ग्रन्थ के चतुर्थ अध्याय में - भद्रमित्र अपने घर आता है तथा चार प्रकार के दान आदि करता है । उसकी माता सुमित्रा, भद्रमित्र का दान -रुख देखकर कहती है कि इस प्रकार तो एक दिन सभी धन समाप्त हो जायेगा । लेकिन भद्रमित्र दान देता रहा और माँ आर्तरौद्र ध्यान कर मर जाती है तथा अतिगं वन में व्याघ्री उत्पन्न होती है । एक दिन भद्रमित्र अंतिग वन जाता है वहाँ वह व्याघ्री तीन दिन से भूखी बैठी थी । अतः भद्रमित्र को देखकर पूर्वभव के बैर के कारण उसे मार कर खा जाती है। भद्रमित्र शुद्ध परिणामों के कारण मरकर भोगभूमि में गया और आयु पूर्ण करके पूर्वभव के स्नेह के कारण रामदत्ता देवी के गर्भ में आकर पुत्र के रुप में उत्पन्न हुआ । पुत्र का नाम सिंहचन्द्र रखा गया । बड़े होने पर जैन उपाध्याय के पास भेजा गया । वहाँ से धर्म / शास्त्र/ शस्त्र/ कला में निपुण होकर वह घर आता है तथा यौवनावस्था आने पर उसका विवाह कर दिया जाता है ।

तदन्तर रामदत्ता के दूसरा पुत्र उत्पन्न होता है जिसका नाम पूर्णचन्द्र रखा गया । एक दिन राजा सिहसेन अपने खजाने में जाते हैं । वहाँ अगध नाम का सर्प उनके पूर्वभव के बैर के कारण उन्हें काट खाता है । राजा मुर्च्छित हो भूमि पर गिर जाता है। रामदत्ता देवी व उनके दोनों पुत्र वहाँ आते हैं तथा राजा को मूर्च्छित देखकर तीनों मूर्च्छित हो जाते हैं। फिर प्रसिद्ध मन्त्रवादी गारुड़ी को बुलाया जाता है । लेकिन मन्त्रों से राजा का विष नही उतरता है तथा राजा मरकर सल्लकी नाम के वन में अश्वनी कोड़ नाम का हाथी हो जाता है । तदन्तर पटरानी रामदत्ता सत्पुरुषों के धर्म उपदेश सुनकर संसार की नश्वरता जानकर धर्म में आस्था लगा लेती है । तथा अपने दोनों पुत्रों को बुलाकर बड़े पुत्र सिंहचन्द्र का राज्याभिषेक एवं छोटे पुत्र पूर्णचन्द्र को

युवराज पद दे देती है ।

राजा सिंहसेन की मृत्यु उपरान्त शांतिमती और हिरण्यवती नाम की दो आर्यिकाएं रामदत्ता देवी के पास आती है तथा रानी को संसार की असारता / जहाँ जन्म है वहाँ मरण है आदि व्याख्यानों से शोक करना छोड़ने को कहती है । तथा तिर्यंच गति से बचने हेतु यथाशक्ति व्रत धारण करने को कहती है । रानी इन दोनों आर्यिकाओं से धर्मोपदेश सुनकर वैराग्य भावना में लीन होकर जिन दीक्षा लेने का विचार करती है तथा अपने पुत्रों को बुलाकर कहती है - मुझे आत्म कल्याण करने की भावना जाग्रत हो गई है अतः इस शुभकार्य हेतु मुझे स्वीकृति दो । पुत्रों की सम्मति उपरान्त वह दोनों आर्यिकाओं के पास जाकर दीक्षा हेतु प्रार्थना करती है । दोनों राजकुमार भी वहाँ आ जाते हैं तथा दीक्षा उपरान्त घर आकर सुख से समय व्यतीत करने लगते हैं ।

एक दिन राजा सिंहचन्द्र को अपनी माता की याद आती है और इसी के साथ वैराग्य की भावना जाग्रत हो जाती है । तत्पश्चात् पूर्णचन्द्र मुनिराज चर्या हेतु आते हैं । सिंहचन्द्र भक्ति पूर्वक पड़गाहन कर अपने यहाँ लाकर नवधाभक्ति सहित उनको आहार देता है । आहार उपरान्त मुनिराज को उच्चासन पर विराजमान किया । पूजा - अर्चा के बाद विनय पूर्वक प्रार्थना कर कहने लगा - हे भगवन! मुझे मोक्ष प्राप्त करने का उपाय बताइये ? मुनिराज ने कहा - जो आसन्न भव्य है, वे मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं । अभव्य जीव कभी मोक्ष नहीं जाते तथा तप एवं परिग्रह पर उपदेश दिया । सिंहचन्द्र वैराग्य युत होकर छोटे भाई पूर्णचन्द्र को राज्य भार सम्भलाकर दीक्षित हो जाते हैं, एवं तपश्चरण करते हुए चारण ऋद्धि के धारक हो जाते हैं ।

छोटा भाई पूर्णचन्द्र संसार के विषय भोग में लिप्त हो जाता है । धर्म के प्रति अरुचि रखता है । एक समय आर्यिका रामदत्ता उसके पास आती है तथा धर्मोपदेश देती है । किन्तु उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता*। तब आर्यिका रामदत्ता मुनिराज सिंहचन्द्र के पास जाकर पूर्णचन्द्र के विषय में पूछती है । मुनिराज सिंहचन्द्र कहते हैं कि वह भव्य जीव है धर्म मार्ग में लग जावेगा । मुनिराज आर्यिका को एक कथा सुनाते हैं और कहते हैं इसे पूर्णचन्द्र को जाकर सुनाओ ।

इस चतुर्थ अध्याय में गाथा क्रमांक ३५७ से ४५३ तक है, जिसमें पूर्णचन्द्र का राज्य परिपालन का विवेचन है ।

ग्रन्थ के पाँचवें अध्याय में - मुनिराज सिंहसेन आर्यिका रामदत्ता एवं मुनि सिंहचन्द्र का स्वर्ग गमन तथा पूर्णचन्द्र को धर्म रुचि उत्पन्न करने हेतु संबोधन है जो कि गाथा क्रमांक ४५४ से गाथा क्रमांक ५६० तक में वर्णित है ।

ग्रन्थ के षष्ठम अध्याय में - पुनः मध्यलोक में आकर सिंहसेन / रामदत्ता व पूर्णचन्द्र द्वारा पूर्वभव के पुण्य के कारण देवगति को प्राप्त होते हैं । देवसुख को भोगते हुए रामदत्ता का जीव धरणी तिलक नाम के नगर के अधिपति अतिवेग की पटरानी सुलक्षणा के गर्भ में आकर श्रीधरा नाम की पुत्री के नाम से जन्म लिया । श्रीधरा का युवावस्था में अलकापुरी के राजा दर्शक के साथ विवाह हो गया । थोड़े समय पश्चात वैडूर्यप्रभ देव श्रीधरा के गर्भ में आकर यशोधरा नाम की पुत्री के रुप में उत्पन्न हुई । यौवनावस्था पर यशोधरा का विवाह भास्करपुर के सूर्यवर्त्त नामक विद्याधर के साथ हुआ । पूर्व भव में सिंहसेन राजा का जीव श्रीधर देव आयु पूर्ण कर इसी यशोधरा के

गर्भ में आ गया तथा किरणवेग नाम से पुत्र हुआ तथा युवावस्था को प्राप्त कर अनेक राज कन्याओं के साथ विवाह कर सुख भोगने लगा।

एक दिन राजा सूर्यावर्त ने संसार के स्वरुप का विचार किया तथा विजयार्द्ध पर्वत को छोड़कर नीचे भूमि पर आये । वहाँ एक मुनि चन्द्र नाम के तपस्वी तप कर रहे थे । सूर्यावर्त ने उनका उपदेश सुना तथा संसार से विरक्त होकर अपने स्थान गये तथा अपने पुत्र को राज्य देकर मुनिराज के पास आकर विधिपूर्वक जिन दीक्षा ले ली । यह समाचार सुनकर सूर्यावर्त की पुत्री तथा पटरानी ने गुणवती आर्यिका के पास जाकर दीक्षा ले ली। तदन्तर किरणवेग (सूर्यवर्त का पुत्र) ने वैराग्य प्राप्त किया तथा जिनेन्द्र भगवन के दर्शनों हेतु विजयार्द्ध पर्वत स्थित अकृतिम चैत्यालय में गया तथा सभी जिन बिम्बों की भक्ति पूर्वक स्तुति की । उस समय चैत्यालय में हरिकचन्द्र नामक चारण ऋद्धिधारी मुनि विराजते थे । उन्हें देख वह उनके पास बैठ गया और पूछा - हे भगवन् ! धर्म का स्वरुप क्या है ? मुझे बतायें । उत्तर में हरिचन्द्र मुनि ने कहा - सप्त तत्व, षट्द्रव्य सप्तभंगी, नय आदि का स्वरूप समझने से तुम्हारे कर्मों का क्षय होकर मुक्ति प्राप्त हो जायेगी। उपदेश सुनने के बाद उसने संसार से विरक्त होकर जिन दीक्षा लेकर तपश्चरण करते हुए चारण सिद्धि को प्राप्त कर लिया ।

किरणवेग करते हुए कांचन प्रभ गुफा में रहते थे । श्रीधरा व यशोधरा दोनों ने महाराज से धर्म का स्वरुप समझा और घर लौट गई । तदन्तर वह महामुनि उस गुफा में आ गये और वहाँ देखा कि सत्यघोष का जीव अजगर जो वहाँ रहता था ने पूर्वभव के वैर के कारण इन मुनिराज को निगलना प्रारम्भ कर दिया था । मुनि महाराज ने अपने ऊपर घोर उपसर्ग आया समझकर **ॐ नमः सिद्धेभ्यः** बोलना प्रारम्भ कर दिया । आवाज सुनकर दोनों आर्यिकायें वहाँ आ गई तथा मुनिराज का आधा शरीर अजगर को निगला देखकर दोनों ने खींचना शुरु कर दिया । किन्तु अजगर ने अपने बल से मुनिराज के साथ दोनों आर्यिकाओं को भी खा डाला । ये तीनों मरकर कपिष्ठ नाम के स्वर्ग में उत्पन्न होकर चौदह सागर की आयुष्य वाले देव हो गये तथा अजगर मरकर चौथे नरक में गया ।

इस षष्ठम अध्याय में गाथा क्रमांक ५६१ से गाथा क्रमांक ७४८ तक में उपरोक्त कथा वर्णित है।

ग्रन्थ के सप्तम अध्याय में - जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र सम्बन्धी चक्रपुर नाम का नगर है। उस नगर का राजा का नाम अपराजित तथा रानी का नाम वसुन्धरा है । अहमिन्द्र नामके देव ने स्वर्ग से चलकर वसुन्धरा के गर्भ में जन्म लिया । उसका नाम चक्रायुध रखा गया । योवनावस्था में चक्रायुध का विवाह चित्रमाला राजकन्या से हुआ । कुमार अपनी पत्नी चित्रमाला के साथ विषय भोग में मग्न रहा । कापिष्ठ कल्प में रहने वाला देव, किरणवेग का जीव चित्रमाला के गर्भ में आया । जन्म उपरान्त उसका नाम वज्रायुध रखा गया ।

इसी समय पृथ्वी तिलक नाम के नगर का राजा अतिवेग था । उनके प्रियकारिणी नाम की पटरानी थी । रत्नमाला का जीव श्रीधरा था । वह श्रीधर का जीव प्रियकारिणी के गर्भ में आया तथा उसके रत्नमाला नाम की पुत्री हुई जिसका विवाह वज्रायुध के साथ हुआ । तदन्तर रत्नमाला के गर्भ में यशोधरा का जीव स्वर्ग से आया । उसके पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ जिसका नाम रत्नायुध रखा गया । रत्नायुध का विवाह राजकन्या के साथ हुआ । कई दिन पश्चात्

पिहिताश्रव नाम के मुनि उस नगर में आये। राजा अपराजित ने भक्तिपूर्वक नमस्कार कर धर्मोपदेश सुना तथा संसार से विरक्त होकर अपने पुत्र को राज्यभार देकर जिन दीक्षा धारण की। तदन्तर चक्रायुध ने वज्रायुध को राज्यभार सम्भलाकर अपने पिता अपराजित के पास मुनि दीक्षा धारण कर ली।

एक दिन वज्रायुध भी अपने पुत्र रत्नायुध को राज्य भार सौंपकर अपने पिता चक्रायुध से मुनी दीक्षा ग्रहण कर लेत हैं। तदन्तर चक्रायुध केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष पद को प्राप्त कर लेते हैं।

इस सप्तम अध्याय में गाथा क्रमांक ७४९ से गाथा क्रमांक ८१२ तक में चक्रायुध के मोक्ष प्राप्ती सम्बन्धी कथा है।

ग्रन्थ के अष्टम अध्याय में - रत्नायुध का विषयों में रत रहना / मनोहर उद्यान में वज्रदंत मुनि का आना तथा त्रैलोक्य प्रज्ञप्ति ग्रन्थ का उपदेश देना तथा रत्नायुध के हाथी का उपदेश सुनना तथा मांस मिश्रित आहार न करना, रत्नायुध का वज्रदंत मुनि से हाथी के आहार न करने का कारण पूछना तथा मुनिराज द्वारा कथा से समाधान करना तथा वज्रायुध का अनुत्तर विभान में जन्म लेना आदि का भव्य वर्णन है जो गाथा क्रमांक ८१३ से गाथा क्रमांक ८९० तक में वर्णित है।

ग्रन्थ के नवम् अध्याय में - महामेरु पर्वत के पश्चिम भाग में सीतोदा नदी के उत्तरी तट पर गांधिल नाम का देश है। उस देश सम्बन्धी अयोध्या नगर है, जिसका अधिपति अर्हदास है। उसकी सुव्रता एवं जिनदत्ता नाम की दो पटरानी थी। रत्नमाला का जीव जो अच्युत कल्प में था सुव्रता रानी के गर्भ में आया तथा वीतभय नाम से पुत्र उत्पन्न हुआ। जिनदत्ता के गर्भ में रत्नायुध का जीव आया जो विभीषण नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। वीतभय - बलभद्र तथा विभीषण -वासुदेव थे। वासुदेव को देख प्रतिवासुदेव क्रोधित हो युद्ध छेड़ देता है . . . अन्त में वासुदेव - प्रतिवासुदेव को मार देता है। तदन्तर वीतभय एवं विभीषण उन तीन खण्ड में रहने वाले सभी राजाओं को जीत कर सुख से समय व्यतीत करते हैं। कुछ पश्चात बाद विभीषण मर जाता है तथा वीतभय संसार से विरक्त हो जिनदीक्षा धारण कर समाधिपूर्वक मरण कर लांतवनाम के कल्प में देव होता है। तथा अवधिज्ञान से जान लेता है कि विभीषण दूसरे नरक में गया है और वह विभीषण के जीव को सम्बोधन देने हेतु दूसरे नरक में जाता है।

इस नवम् अध्याय के गाथा क्रमांक ८९१ से गाथा क्रमांक ९२९ तक में उपरोक्त कथा रोचकता के साथ वर्णित है।

ग्रन्थ के दशम अध्याय में - नरक में रहने वाले विभीषण को आदित्य देव द्वारा धर्मोपदेश दिया जाने का कथन है जो कि गाथा क्रमांक ९३० से गाथा क्रमांक ९६९ तक में वर्णित है।

ग्रन्थ के ग्यारहवें अध्याय में - वीतभय और विभीषण का मोक्ष जाने का वर्णन है जो गाथा क्रमांक ९७० से गाथा क्रमांक १०१० तक में वर्णित है।

ग्रन्थ के बारहवें अध्याय में - मेरु और मन्दर के जन्म का वर्णन निम्न प्रकार है-

रामदत्ता का जीव आदित्याभ देव हुआ तथा पूर्णचन्द्र का जीव धरर्णेन्द्र हुआ। भरत क्षेत्र में उत्तर मथुरा नगर का अधिपति राजा अनन्तवीर्य था। उसके दो पटरानियाँ मेरु मालिनी तथा अमृतमती नाम की थी। आदित्याभ देव का जीव रानी मेरुमालिनी के गर्भ में आया, जिसका नाम मेरु रखा गया। अमृतमती रानी के गर्भ मे धरणेन्द्र देव ने आकर जन्म लिया जिसका नाम मंदर रखा

→ 173 पर

युक्त्यानुशासन

वात्सल्य रत्नाकार चारित्र शिरोमणी **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** का **हीरक जयन्ती के शुभ** अवसर पर आगम वाणी **की सेवा संकल्प के अन्तर्गत** प्रकाशित यह **ग्रन्थ भारतवर्षीय** अनेकान्त विद्वत परिषद् **सोनागिरि** (दतिया) म.प्र. का ४८ वाँ ग्रन्थ है।

यह ग्रन्थ उन आप्तो अथवा सर्वज्ञ कहे जाने वालों की परीक्षा के बाद रचा गया है, जिनके आगम किसी न किसी रूप में उपलब्ध हैं एवं जिनमें बुद्ध कपिलादि के साथ वीर जिनेन्द्र भी शामिल हैं। परीक्षा युक्ति - शास्त्राऽविरोधि - वाक्त्व हेतु से की गई अर्थात जिनके वचन युक्ति और शास्त्र से अविरोध रूप पाये गये हैं, उन्हें ही आप्त रूप में स्वीकार किया गया है। शेष का आप्त होना बाधित ठहराया गया है।

युक्त्यानुशासन
आचार्य समन्तभद्र विरचित

हिन्दी अनुवाद - पं. जुगल किशोर मुख्तार पृष्ठ संख्या - ३० + १०४ = १३४/प्रकाशन वर्ष - १९८९ - ९०/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बाँसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका लोनी रोड, दिल्ली / मुद्रक - पञ्चित प्रिन्टर्स - जयपुर (राज.)।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -४८

स्वामी समन्तभद्र एक बहुत बड़े परीक्षा प्रधानी आचार्य थे। वे यों ही किसी के सामने मस्तक टेकने वाले अथवा किसी की स्तुति में प्रवृत्त होने वाले नहीं थे। जब वीर जिनेन्द्र की महानता विषयक ये बातें उनके सामने आई कि उनके पास देव आते हैं। आकाश में बिना किसी विमानादिक की सहायता से उनका गमन होता है और चंवर - छत्रादि अष्ट प्रतिहार्यों के रुप में तथा समवशरणादि के रुप मे अन्य विभूतियों का भी उनके निमित्त प्रादुर्भाव होता है तो उन्होंने स्पष्ट कह दिया - **ये बातें तो मायावियों में इन्द्र जालियों में भी पाई जाती है अतः आप हमारे महान पूज्य अथवा आप्त पुरुष नहीं हैं।** ..... और जब शरीरादि के अन्तर्बाह्य महान् उदय की बात बतलाकर महानता का गुणगान किया तो उसे भी अस्वीकार करते हुए उन्होंने कह दिया - **यह महान् उदय रागादि के वशीभूत देवताओं में भी पाया जाता है। अतः इस हेतु से भी महानता सिद्ध नहीं होती।** .... और जब तीर्थकर होने से जब महानता की बात आई तो आपने साफ - साफ कह दिया - **तीर्थंकर तो दूसरे सुगतादिक भी कहलाते हैं और वे भी संसार से पार उतरने अथवा निवृत्ति प्राप्त करने के उपाय रूप आगम तीर्थ के प्रवर्तक माने जाते हैं। तब वे सब भी आप्त सर्वज्ञ ठहरते हैं और बात निर्णय तक नहीं पहुंच पाती क्योंकि तीर्थंकरों के आगमों में परस्पर विरोध पाया जाता है। अतः उनमें कोई एक ही महान हो सकता है अतः कोई दूसरा ही हेतु होना चाहिये।**

इस कृति के श्लोक नं.४ में महानता हेतु स्वामी समन्तभद्र आचार्य ने लिखा है-

त्वं शुद्धि - शक्त्योरुदयस्य काष्ठां
तुला - व्यतीतां जिन ! शान्तिरुपाम्।
अवापिथ ब्रह्मपथस्य नेता
महानितीयत्प्रतिवक्तु मीशाः ॥४॥

उक्त पंक्तियों में वीर की महानता प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि - वे अतुलित शान्ति के साथ शुद्धि और शक्ति को पराकाष्ठा

को प्राप्त हुए हैं । उन्होंने मोहनीय कर्म का अभाव कर अनुपम सुख शान्ति की ज्ञानावरण-दर्शनावरण कर्मों का नाश कर अनन्त ज्ञान - दर्शन - रूप शुद्धि के उदय की और अन्तराय कर्म का विनाशकर अनन्तवीर्य रूप शक्ति के उत्कर्ष की चरमसीमा को प्राप्त किया है । साथ ही ब्रह्मपथ के अहिंसात्मक आत्म विकास पद्धति अथवा मोक्षमार्ग के वे नेता बने हैं । उन्होंने अपने आदर्श एवं उपदेशादि से दूसरों को उस सन्मार्ग पर लगाया है जो शुद्धि, शक्ति तथा शांति के परमोद रुप में आत्म विकास का परम सहायक है ।

ग्र न्थ की ६४ कारिकाओ आप्तता / वीर शासन की महानता / महत्व / वीर जिनेन्द्र की कीर्ति/ वीर शासन वर्णित तत्वज्ञान के मर्म/ एवं स्यात् शब्द का प्रयोग - अप्रयोग/ सर्वोदय तीर्थ आदि का प्रमाणिक आगम रुप वर्णन किया गया है । इस ग्रन्थ की महिमा में **श्री जिनसेनाचार्य** ने अपने हरवंशपुराण में **कृतयुक्त्यनुशासनं** पद के साथ **वचः समन्तभद्रस्य वीरस्येव विजृम्भते** - इस वाक्य की योजना कर यह घोषित किया है कि **समन्तभद्र का युक्त्यानुशासन** ग्रन्थ वीर भगवान के वचन (आगम) के समान प्रकाशमान एवं प्रभावादिक से युक्त है । इससे स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ बहुत प्रमाणिक है, आगम की कोटि में स्थित है और इसका निर्माण बीज पदों अथवा गम्भीरार्थक और बह्वर्थक सूत्रों के द्वारा हुआ है । इस ग्रन्थ की कारिकाएं अनेक गद्य सूत्रों से निर्मित हुई जान पड़ती हैं जो बहुत ही गाम्भीर्य तथा अर्थ गौरव को लिए हुए है ।■

पृष्ठ 71 का शेष

गया। दोनों राजकुमार सभी विधाओं / कलाओं में निपुण हो यौवन को प्राप्त हुए लेकिन दोनों राजकुमारों ने संसार को असार समझकर द्वादशानुप्रेक्षा का चिंतवन किया। एक दिन तीर्थंकर विमलनाथ जी भगवान विहार करते -करते उत्तर मथुरा के निकट उद्यान में पधारे । वनपाल ने दोनों राजकुमारों को इसकी सूचना दी । . . . और दोनों राजकुमार अष्ट द्रव्य लेकर पूजा करने हेतु हाथी पर बैठकर समवशरण देखने अपने उद्यान चले जाते हैं ।

उपरोक्त कथा - गाथा क्रमांक १०११ से गाथा क्रमांक १०४७ तक में वर्णित है।

ग्रन्थ के तेरहवें अध्याय में - तीर्थंकर विमलनाथ भगवान के समवशरण का भव्य वर्णन / मेरु और मंदर का दीक्षा लेना । तदन्तर दस धर्मों में लीन होकर पंच समिति त्रिगुप्ति बाइस परिषहों का निरतिचार पालन करते हुए केवली होकर अनन्त चतुष्टय को प्राप्त होने का वर्णन है जो कि श्लोक क्रमांक १०४८ से १४०५ तक मे वर्णित है ।

ग्रन्थ का अनुवाद सरल एवं बौद्धगम्य भाषा में है जो श्रावकों को अध्ययन करने में सहयोगी है।

सूर्य प्रकाश

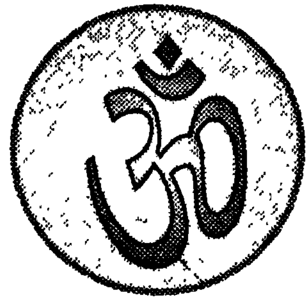
करुणानिधि, तीर्थोद्धारक चूड़ामणि **परम पूज्य आचार्य 108 श्री विमल सगर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मगल प्रसग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा सकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म प्र का 49 वाँ पुष्प है।

सूर्य प्रकाश **ब्रह्मचारी ज्ञानचन्द जी महाराज**
सम्पादन – ब्रह्मचारी ज्ञानचन्द जी महाराज/ पृष्ठ सख्या–10+322=332/प्रकाशन वर्ष–1993/ प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (दतिया) म प्र / प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज सघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया (बासवाडा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर गुलाब बाटिका लोनी रोड दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–49

प्रस्तुत प्रकाशित ग्रन्थ की रचना वर्तमान पचमकाल मे होने वाली जैनधर्म की परिस्थिति पर तथा भेद–प्रभेदों पर प्रकाश डालकर हेयादेय को दिखाने की इच्छा से किया गया है। यद्यपि ग्रन्थ की भाषा सस्कृत के समान है तथापि प्रचलित सस्कृत व्याकरण कोष के अनुसार नहीं है। फिर भी सस्कृत कम समझने वाले भी इसका अध्ययन सरलता से कर सकते है तथा अर्थ भी समझ सकते है।

ग्रन्थ की विषय सामग्री निम्न प्रकार से है–

- कृति के **प्रथम अध्याय** के 14 पृष्ठों मे राजा श्रेणिक महाराज का वर्णन तथा पचमकाल की धर्माधर्म प्रवृत्ति कैसी होगी ऐसे भगवान महावीर से प्रश्न एव समाधान वर्णित है।
- **द्वितीय अध्याय** मे अनेक धर्माचरणों का वर्णन कुन्दकुन्द स्वामी की कथा, विदेह गमन वैष्णव धर्म की उत्पत्ति गिरनार पर श्वेताम्बरों से कुन्दकुन्द स्वामी का वाद–विवाद आदि का वर्णन किया गया है।
- **तृतीय अध्याय** मे अष्टद्रव्य के पूजन की ओर अभिषेक की, स्तवन की जप की, प्रतिष्ठा की महिमा वर्णित है जो श्रावकों को मार्ग दर्शन देती है।



- **चतुर्थ अध्याय** मे – लुक मत की उत्पत्ति स्वरूप एवम् मूर्तिपूजा समर्थन पर ज्ञानवाणी वर्णित है।
- **पचम अध्याय** मे व्रत प्रकरण वर्णित है जिसमे श्रावक के दानादि कर्तव्य तथा सम्यक्त्व स्वरूप तथा महिमा पर दिशाबोध वर्णित है।
- **कृति का छटॅवा अध्याय** मे बीस तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर के बारे मे विस्तृत वर्णन है।
- **सातवे अध्याय** मे कर्म आस्रव तथा कर्मफल के तथा विधवा होना आदि दु खों के सम्बन्ध मे प्रश्न–उत्तर दिये गये है।
- **आठवे अध्याय** मे गिरनार पर्वत का वर्णन तथा वहाँ पर श्रीधरसेन मुनि का वर्णन तथा श्रुतावतार कथा वर्णित है।
- **ग्रन्थ का अंतिम (नवमा) अध्याय** मे ग्रन्थ प्रशस्ति दी गई है जिसके अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इस ग्रन्थ की रचना सवत् 1909 के वैसाख मास मे रविवार को हुई थी।

ब्रम्हचारी ज्ञानचन्द जी महाराज ने इस ग्रन्थ का सम्पादन पूर्ण विद्वता के साथ किया है। ग्रन्थ का स्वाध्याय मानव जीवन की अनेक शकाओं के समाधान कराने में अद्वितीय है।

भाव संग्रह

युगप्रमुख चरित्र-शिरोमणि, सन्मार्ग-दिवाकर आचार्य श्री विमल सागर महाराज हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित पुष्प नं. 50

भाव संग्रह (आचार्य श्री वामदेव विरचित)
हिन्दी अनुवादक- डा. रमेशचंद्र बिजनौर/ सानिध्य- उपाध्याय मुनि श्री भरतसागर महाराज/ निर्देशन- पू. आर्यिका स्याद्वाद मति माताजी/ प्रकाशक- भारत वर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद् सोनागिरि/ पृष्ठ स 26 + 172 = 198/ प्राप्तिस्थान- 1. आचार्य विमल सागर जी संघ। 2. अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राजस्थान (3)श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या-50



भाव संग्रह संज्ञक दो कृतियाँ उपलब्ध हैं। **पहली के रचियता आचार्य देव सेन थे।** वे विमल सेन गणी के शिष्य थे और उन्होंने यह रचना वि.सं. 990 के आसपास की होगी। **आचार्य वामदेव ने द्वितीय भावसंग्रह की रचना की।** प्रथम भावसंग्रह प्राकृत गाथामय है। यह द्वितीय भाव संग्रह 782 संस्कृत पद्य में है। आ.वामदेव अपनी रचना के लिए भाव, भाषा, विषयानुक्रम, प्रतिपाद्य विषय आदि सभी दृष्टि से आचार्य देवसेन के ऋणि हैं। किन्तु परिवर्तन एवं परिवर्द्धन भी हैं। गीता आदि के उदाहरण उक्तिरूप लिये गये हैं। इन्होंने नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती के त्रिलोकसार को देखकर त्रैलोक्य दीपक ग्रंथ की रचना की थी, तथा इनके अन्य ग्रंथ हैं **प्रतिष्ठा सूक्तिसंग्रह, तत्वार्थ सार, त्रैलोक्यदीपक, श्रुतज्ञानोद्यापन, त्रिलोकसार पूजा और मंदिर संस्कार पूजा।**

प्रस्तुत ग्रंथ मे जीवों के भिन्न भिन्न परिणामो या भावों का विवरण भावसंग्रह में है। यहाँ मिथ्यात्व भाव मे वेदान्त, क्षणिकत्व सशयवाद आदि को लेकर विवरण दिया गया है। इसी प्रकार धर्म विपरीतता के अनेक उदाहरण दिये हैं- जल स्नान से आत्मशुद्धि, मांस भक्षण से पितृकर्म की तृप्ति, पशुओं का वधकरने वा पशुओं का होम करने से स्वर्ग प्राप्ति आदि। वे कहते हैं- **यह जीव मरकर तत्क्षण अन्य देह को धारण कर लेता है तो पितृत्व किसके उत्पन्न हुआ। अत: पितरों की उत्पत्ति कहना व्यर्थ है।** गाथा 52॥ वामदेव के अनुसार जो यज्ञ के लिए मारा जाता है, उसका मांस खाने वाले और वह ये सब यदि स्वर्ग जाते हैं तो पुत्र, वधु आदि यज्ञ से क्यों नहीं कटते हैं। ताकि सब स्वर्ग चले जायें। भाव संग्रह गा 61-62। पुन: भाव.सं. 114-115 में प्रश्न किया है- सबको अपने उदर के मध्य में स्थित कर विष्णु संरक्षण करता है तो वह विष्णु कहाँ ठहरता है? यदि रुद्र तीनों लोकों को भस्म करता है तो वह गंगा और गौरी के साथ कहाँ रहते हैं (गा.122) नित्य क्षणिक वादियों के सयम, नियम, दान, करुणा, व्रत भावना सर्वथा घटित नही होती। (गा.136) क्षणिकवाद मे बंध, मोक्ष घटित नहीं होते (गा.137) जब तुम्हारे और शिव में समानता है तो कौन किसके द्वारा वन्दना योग्य होगा? (गा. 160-61) इसी प्रकार श्वेताम्बर मान्यताओं को भी प्रश्नों द्वारा समीक्षित किया गया है। हिन्दी अनुवादक ने वस्तुत: अत्यंत सरल भाषा मे पादटिप्पण देते हुए अत्यंत बोधमय अनुवाद प्रस्तुत किया है।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार प्रश्नोत्तरी टीका



युग प्रमुख, चारित्र शिरोमणि, वात्सल्य रत्नाकर **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का 52 वाँ पुष्प है।

आचार्य समन्त भद्र जी द्वारा रचित यह ग्रन्थ जैनागम ग्रन्थों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। यद्यपि **आचार्य समन्त भद्र जी** की प्राय: सभी उपलब्ध कृतियाँ गम्भीर/ दुरुह और दुखगाह है तथापि आपका यह ग्रन्थ रत्नकरण्ड श्रावकाचार एक ऐसी कृति है जो सरलता से ओतप्रोत है...और यह एक सिद्धान्तिक रचना है अत. इसका सरल होना स्वाभाविक भी है।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार
आचार्य समन्त भद्र कृत

अनुवादिका एवं प्रश्नोत्तरी टीका – आर्यिका 105 श्री स्याद्वादमती माता जी/ पृष्ठ संख्या– 16 + 266 = 282 प्रकाशन वर्ष – 1994/ प्रकाशक – भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाडा) राज. (3) श्री दिगम्बर जैन मदिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–52

कृति का आरम्भ रचनाकार **आचार्य समन्त भद्र जी ने श्री 1008 वर्द्धमान स्वामी** को नमस्कार कर किया है। सात परिच्छेदों में विभक्त 150 श्लोकों की यह रचना, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र, अनुयोग, गुणव्रत, शिक्षाव्रत, सल्लेखना लक्षण एवं विधि एवम् ग्यारह प्रतिमाओं के वर्णन के साथ आगम वाणी का प्रतिनिधित्व करने मे अपना महत्वपूर्ण स्थान रखने मे सफल है।

ग्रन्थ के नाम से स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ रत्नों का पिटारा है। जैनागम मे रत्न का आशय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र से है और ये तीनों रत्न ही मानव जीवन का मोक्षमार्ग प्रशस्त करने में अनिवार्य है। इनका पालन श्रावक कैसे करें इस हेतु ग्यारह प्रतिमाओं का वर्णन है जो श्रावकों का मार्ग प्रशस्त करता है। अत: ग्रन्थ में समाहित विषय वस्तु इस कृति के नाम का स्वत: अभिवादन करते है।

निमित्तज्ञानी, सन्मार्ग दिवाकर प्रात: स्मरणीय **आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघस्थ आर्यिका श्री स्याद्वादमती माता जी** ने श्रावकोपयोगी कृति का हिन्दी प्रश्नोत्तरी टीका कर श्रावकों पर उपकार किया है। टीका का प्रस्तुतीकरण सरल, सहज, सुयोग्य भाषा में हुआ है। ग्रन्थ के मध्य में कई कथानक हैं जो ग्रन्थ के मूल भावों को समझाने में अपना योगदान प्रदान कर कृति को अमरता प्रदान करते है।

अमरसेणचरिउ

चारित्र शिरोमणि तेजस्वी अमर पुञ्ज **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मंगल अवसर पर जिनागम साहित्य प्रकाशन संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह कृति भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिर (म.प्र.) का ५३ वाँ पुष्प है।

अमरसेणचरिउ
कवि माणिकराज कृत

सम्पादक एवं अनुवादक - डॉ. कस्तूरचन्द जैन 'सुमन' /प्रकाशन वर्ष - १९९१ पृष्ठ संख्या - १०+२८६ =२९६/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री १०८ विमल सागर संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज० (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, लोनी रोड़, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -५३

अमरसेणचरिउ की मूल पाण्डुलिपि अपभ्रंश भाषा में लिखी गई है, जो कि आमेरशास्त्र भंडार-जयपुर में सुरक्षित है। **इस अप्रकाशित ग्रन्थ का यह प्रथम प्रकाशन है**। इस ग्रन्थ में कुल सात सन्धियाँ, एक सौ चौदह कडवक तथा एक हजार सात सौ इकतालीस यमक-पद है। ग्रन्थ में सधियों का आरम्भ ध्रुवक छन्द से तथा अन्त छत्ता छन्द से हुआ है। मूल ग्रन्थ ९६ पत्रों में पूर्ण हुआ है लेकिन प्रथम पत्र न मिलने से अब कुल ९५ पत्र रह गये हैं, जिन्हें विद्वान अनुवादक - डॉ. कस्तूरचन्द "सुमन" ने अथक प्रयास से हिन्दी में अनुवाद एवं सम्पादित कर प्रकाशनार्थ सहयोग दिया है। इस प्रकार अनुवादक ने जैनागम में एक अप्रकाशित ग्रन्थ को और जोड़कर अभिवंदनीय कार्य किया है जो सदैव स्मरणीय रहेगा।

ग्रन्थ रचनाकार ने इस कृति में जिनेन्द्र देव की पूजा का महत्व विभिन्न उद्धरण एवं कथानक के माध्यम से वर्णित किया है। जैन दर्शन के अनेक शब्दों का विश्लेषण भी ग्रन्थ में समाहित है। यथा -

• कवि ने ४ गतियों का उल्लेख किया है - देव/मनुष्य/तिर्यंच/नरक।

• सांसारिक स्थिति/चेतन और शरीर/श्रावक धर्म/ मुनि धर्म/कर्म व्यवस्था/अर्हन्त की द्रव्य पूजा/आराध्य देव/भूत-वर्तमान-भविष्य के तीर्थंकरों का उल्लेख/जिनेन्द्र वन्दना/आहार दान-फल आदि का महत्व आदि।

अमरसेनचरिउ में केवल कथा मात्र नहीं है। कथा के अन्तर्गत तत्कालीन सामाजिक स्थिति को दर्शाने हेतु प्रसंगानुसार राजनैतिक, सामाजिक, दार्शनिक, धार्मिक, भौगोलिक और साहित्यिक विधाओं की भी प्रस्तुति ग्रन्थ में कवि ने सुन्दर/सरस शब्दों के माध्यम से की है।

जिनेन्द्र अर्हन्त की पूजा में कवि ने निज द्रव्य पर विशेष जोर दिया है। उन्होंने पूजा से होनेवाले पुण्य की प्राप्ति उसे बताई है जिसकी द्रव्य पूजा में व्यवहृत होती है - उसे नहीं जो पूजा करता है। यथा -

ते भणहि जस्स हम फुल्ल लेहि
लहु पुण्णु होइ इमि तं ण तेहि ॥ १/२१/६

रस, अलंकार, गुण-दोष आदि काव्य के उपकरण होते हैं। कवि ने अपनी रचना में नगर/वन / नर-नारी के सौन्दर्य चित्रण में **श्रृंगार रस**/ इष्ट वियोग जनित अवस्था में **करुण रस/रौद्र रस/ वीर रस** /वन वर्णन प्रसंग में वन की स्वाभाविक स्थिति का चित्रण **भयानक रस /अद्भुत रस/शान्त रस एवं वात्सल्य रस** का सुन्दर प्रयोग किया है। कृति में अनुप्रास/उपमा/स्मरणालंकार/ रूपक/उत्प्रेक्षा/स्वभावोक्ति/यमक एवं श्लेष अलंकार का प्रयोग सुन्दरता से किया है। अमरसेणचरिउ नामक इस ग्रन्थ की भाषा संस्कृत और अपभ्रंश मिश्रित है। कवि माणिकराज की लेखन शैली रोचक है जिससे ग्रन्थ पढ़ते समय आगे की विषय वस्तु जानने की अभिलाषा बनी रहती है।

प्रमेय रत्नमाला

वात्सल्य रत्नाकर, अतिशय योगी **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसंग पर जैन साहित्य प्रकाशन संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित उक्त कृति भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का ५६ वाँ पुष्प है?

प्रमेय रत्नमाला श्री मल्लघु अनन्तवीर्य विरचिता
हिन्दी व्याख्याकार - डॉ० रमेश चन्द जैन /मूल्य-रुपय /प्रकाशन वर्ष - १९९२/ पृष्ठसंख्या ८ + २३६ = २४४/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद-सोनागिरि (म.प्र.) प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमलसागर संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) (३)श्री दिगम्बर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ दिल्ली/मुद्रक-वर्द्धमान मुद्रणालय, वाराणसी (उ.प्र.)
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -५६

प्रस्तुत कृति की, प्रमाण और प्रमाणाभास विषय वस्तु है । इसकी रचना का उद्देश्य परीक्षामुख नामक सूत्रात्मक ग्रन्थ का कथन स्पष्ट करना था । कृति के प्रथम समुद्देश के अन्त में ग्रन्थकार लघु अनन्तवीर्य ने कहा है -

देवस्य सम्मतम पास्तसमस्त दोषं
वीक्ष प्रपञ्चरुचिरं रचितं समस्या।
माणिक्यनन्दिविभुना शिशुबोधहेतो -
मनिस्वरुपममुना स्फुटमभ्यधायि ॥६॥

अकलंक देव द्वारा सम्मत, समस्त दोषों से रहित विस्तृत और सुन्दर प्रमाण के स्वरुप को माणिक्यनन्दि स्वामी ने देख करके शिशुओं की जानकारी के लिए (परीक्षामुख में) संक्षेप रुप से रचा, उसी को इस (अनन्तवीर्य) ने स्पष्ट रुप से कहा है ।

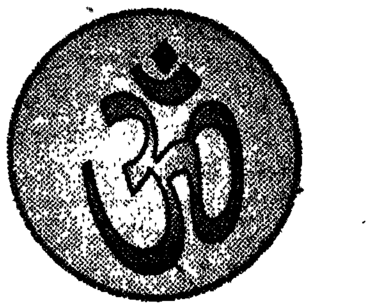
प्रमेयरत्नमाला के प्रथम समुद्देश में प्रमाण का स्वरुप -१३ सूत्रों में/ द्वितीय समुद्देश में प्रत्यक्ष प्रमाण -१२ सूत्रों में/तृतीय समुद्देश में परोक्ष प्रमाण -९७ सूत्रों में/ चतुर्थ समुद्देश में प्रमाण का विषय -९ सूत्रों में/पंचम समुद्देश में प्रमाण का फल -३ सूत्र में एवं षष्टम समुद्देश में प्रमाणभाष आदि का ७४ सूत्रों में विशद विवेचन किया गया है ।

इस कृति में कृतिकार ने विभिन्न दर्शनों के ग्रन्थों का उद्धरण देकर पूर्व पक्ष को स्पष्ट कर विभिन्न वादों की समीक्षा की है।

प्रमेय रत्नमाला जैन दर्शन के न्याय विषय पाठ्यक्रम में अनेक स्थानों पर निर्धारित है । विगत कई वर्षों से यह कृति बाजार में अनुपलब्ध थी, एवं विद्यार्थी अध्यापन में कठिनाई का अनुभव कर रहे थे। विद्यार्थियों को इस कृति के प्रकाशन होने पर न्याय विषयक पाठ्यक्रम अध्ययन में वांछित सहयोग मिले इस हेतु परम **श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री विमल सागर जी महाराज** की दूरगामी दृष्टि एवम् **उपाध्याय श्री भरत सागरजी** का मार्गदर्शन सदैव वन्दनीय रहेगा।

यशस्तिलक चम्पू महाकाव्य (उत्तरखण्ड)

युग प्रमुख, चारित्र शिरोमणि **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मांगलिक प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का 57 वॉं पुष्प है।



यशस्तिलक चम्पू महाकाव्य श्री मत्सोमदेव सूरि - विरचित
अनुवादक – स्व.पं. सुन्दरलाल शास्त्री/ पृष्ठ सख्या 38 + 482 = 520/ प्रकाशन वर्ष – 1989–1990/ प्रकाशक – भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म प्र./ प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज सघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–57

ग्रन्थकार सोमदेव सूरि जी के प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना 959 ईसवीं में हुई। **यशस्तिलक** कृति में उज्जयिनी के सम्राट **यशोधर का चारित्र** वर्णित होने से, यह कृति यशोधर महाराज चरित के नाम से भी जाना जाता है। वस्तुतः प्रस्तुत ग्रन्थ में यशोधर नामक राजा की कथा को आधार बनाकर व्यवहार, राजनीति, धर्म, दर्शन, और मोक्ष सम्बन्धी अनेक विषयों की सामग्री प्रस्तुत की गई है।

यशस्तिलक चम्पू महाकाव्य का यह द्वितीय भाग/उत्तर खण्ड है जिसमें चतुर्थ, पंचम, षष्ठम, अष्ठम आश्वास में यशोधर राजा का चारित्र एवम् गृहस्थोपयोगी धर्मोपदेश वर्णित है। यथा–

ग्रन्थ के चतुर्थ आश्वास में –

एक दिन यशोधर राजा, राज–कार्य, शीघ्र समाप्त कर रानी अमृतमति के महल में जाता है। वहाँ उसके साथ विलास करने के बाद जब वह लेटा हुआ था तब रानी इसे सोया जानकर पलंग से उतरकर गजशाला में जाती है जहाँ महावत सो रहा था। राजा भी चुपके से पीछे–पीछे गया। रानी महावत को जगाकर उसके साथ विलास करती है। राजा यह देखकर क्रोध से उन्मत्त हो जाता है तथा दोनों का वध करने का विचार करता है। किन्तु कुछ विचार कर वह महल लौट आता है तथा संसार की असारता का विचार मन में करने लगता है। राजसभा मे उसकी माता चन्द्रमति यशोधर से उदासी का कारण पूछती है तो वह कहता है कि मैंने स्वप्न देखा है कि राजपाट अपने राजकुमार यशोमति को देकर मैं वन में चला गया हूँ तो जैसा मेरे पिता ने किया मैं भी उसी कुलरीति को पूरी करना चाहता हूँ। यह सुनकर माँ चिन्तित हो जाती है तथा कुलदेवी को बलि चढ़ाकर स्वप्न को शान्त करने का उपाय बताती है किन्तु राजा यशोधर बलि नहीं करता है तब माँ कहती है – हम आटे का मुर्गा बनाकर उसकी बलि चढ़ाऐंगे और उसी का प्रसाद गृहण करेगें। राजा यह बात मान लेता है तथा अपने पुत्र यशोमति के राज्याभिषेक की आज्ञा दे देता है। यह जानकर रानी मन ही मन प्रसन्न होती है तथा ऊपरी मन

से दिखावा करती हुई राजा यशोधर से साथ में वन में जाने की प्रार्थना करती है। कुलटा रानी की इस ढ़िठाई पूर्ण वार्ता से राजा के मन में गहरी चोट लगती है लेकिन वह मन्दिर में जाकर आटे के मुर्गे की बलि चढ़ाता है। इससे माँ चन्द्रमति बेहद प्रसन्न होती है किन्तु रानी को यह भय हो जाता है कि कहीं यह वैराग्य क्षणिक तो नहीं है, अतएव वह आटे के मुर्गे में विष मिला देती है। उसके खाने से चन्द्रमति और यशोधर दोनों तुरंत मर जाते है।

ग्रन्थ के पाँचवें आश्वास में–

राजमाता चन्द्रमति एवं राजा यशोधर ने आटे के मुर्गे की बलि का संकल्प करके जो पाप किया उसके फलस्वरूप तीन जन्मों तक उन्हें पशु योनि में उत्पन्न होना पड़ा। पहली योनी मे यशोधर मोर एवं चन्द्रमती कुत्ता/ दूसरी योनी में उज्जैन की क्षिप्रा नदी में मछली/ तीसरी योनी में वे दो मुर्गे हुए जिन्हे पकड़कर एक जल्लाद उज्जयिनि के कामदेव के उद्यान में होने वाले वसन्तोत्सव में कुक्कट युद्ध का तमाशा दिखाने ले गया, जहाँ उन्हें आचार्य सुदत्त के दर्शन हुए। उनके उपदेश सुनकर दोनों मुर्गों को पूर्वजन्म का स्मरण हो जाता है। अगले जन्म में वे यशोमति राजा की रानी कुसुमावली के उदर से भाई–बहिन के रूप में उत्पन्न हुए तथा उनका नाम अभयरुचि तथा अभयमती रखा गया। एक बार राजा यशोमति आचार्य सुदत्त के दर्शनार्थ जाता है तथा अपने पूर्वजों के परलोक के बारे में प्रश्न करता है तब आचार्य सुदत्त कहते है – तुम्हारे पितामह यशोर्ध स्वर्गलोक में इन्द्रपद भोग रहे है। तुम्हारी माता अमृतमति नरक में है तथा यशोधर व चन्द्रमती ने इस प्रकार तीन बार ससार का भ्रमण किया है। वृतान्त को सुनकर उसे संसार के स्वरूप का ज्ञान हो जाता है तथा वह डरा हुआ सोचता है कि कहीं हम बड़े होकर इस भवचक्र में न फंस जाये अतः बाल्यावस्था में ही दोनों ने आचार्य सुदत्त के संघ में दीक्षा ले ली।

इतना कहकर अभयरुचि ने राजा मारिदत्त से कहा – हे राजन्! हम वे ही भाई बहिन है। हमारे आचार्य सुदत्त भी नगर से बाहर ठहरें है। उनके आदेश से हम भिक्षा के लिए निकले थे कि तुम्हारे चाण्डाल हमें यहाँ पकड़ लाए।

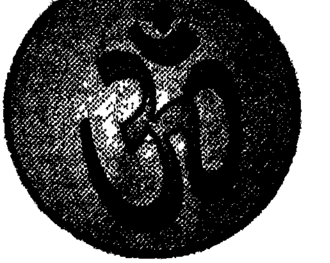
भव भ्रमण वर्णन नामक पाँचवें आश्वास की कथा यहाँ समाप्त हो जाती है। वस्तुतः यशस्तिलकचम्पू का कथाभाग यहीं समाप्त हो जाता है। प्रस्तुत कृति का छह, सात एवं आठवाँ आश्वास का नाम उपासकाध्ययन है। इसमें उपासक या गृहस्थों के लिए छोटे–बड़े छियालीस कल्प या अध्यायों में गृहस्थोपयोगी धर्मों का उपदेश आचार्य सुदत्त के मुख से कराया गया है। इनमें जैनधर्म का बहुत ही विशद निरूपण हुआ है। छटवें आश्वास में भिन्न–भिन्न नाम से 21 कल्प है। सातवें आश्वास में 22 वें कल्प से 33 वें कल्प तक मद्य प्रवृति दोष, मद्य निवृत्ति गुण, स्तेय, हिंसा, लोभ आदि के दुष्परिणामों को छोटे–छोटे उपाख्यानों में बताया गया है। आठवें आश्वास में कल्प 34 से 46 तक में उपाख्यानों का वर्णन है। ग्रन्थ के अन्त में ग्रन्थ समापन की सूचना है तथा आचार्य सुदत्त का उपदेश सुनकर राजा मारिदत्त और उसकी प्रजा प्रसन्न होकर श्रद्धा से धर्म पालन की प्रतिज्ञा करती है जिससे सारा यौधेय देश सुख एंव शान्ति से भर जाता है।

सोमदेव सूरि का यह विशिष्ट ग्रन्थ जैन धर्मावलम्बियों के लिए कल्पवृक्ष के समान है। ग्रन्थ मे एक ओर जहाँ जैनधर्म और दर्शन का परिचय होता है वहीं दूसरी ओर भारतीय संस्कृति के विविध अंगो का भी सविशेष परिचय परिलक्षित होता है।

ग्रन्थ की अनुवाद भाषा सहज, सुलभ ज्ञानोपयोगी है जो जन सामान्य को सहजता से ग्राह्य होती है। ग्रन्थ अनुवादक स्व.पं. सुन्दरलाल शास्त्री जी का यशस्तिलक चम्पू महाकाव्य पर किया गया सदैव वन्दनीय कार्य उनके पाण्डित्य को सदैव जैनागम साहित्य में स्मरण किया जायेगा, इस हेतु उनकी शसक्त लेखनी को श्रद्धानवत वंदन...। ❑

अर्थ प्रकाशिका तत्वार्थ टीका

चारित्र चक्रवर्ती, सन्मार्ग दिवाकर, आचार्य शिरोमणी परमपूज्य आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज के हीरक जयन्ती मंगल प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारत वर्षीय विद्वत परिषद्–सोनागिरी (दतिया) म प्र का 58 वाँ पुष्प है।



अर्थ प्रकाशिका पण्डित सदासुख जी
प्रणेता – पण्डित सदासुख जी/ पृष्ठ संख्या– 8 + 382 = 390 / प्रकाशन वर्ष – 1989–90 / प्रकाशक– भारत वर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र / प्राप्ति स्थान – आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (2) अनेकात सिद्धान्त समिंत लोहारिया (बांसवाड़ा) राजस्थान (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन पुष्पमाला संख्या–58

तत्वार्थ सूत्र जैनागम का अत्यन्त प्राचीन शास्त्र है जिसके मूल रचनाकार **श्री उमा स्वामी जी** है। मानव जीवन का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है। इस ग्रन्थ में मोक्षमार्ग के पथ पर किस प्रकार चला जाय/जाना चाहिये इस हेतु दिशा निर्देश है। मूल ग्रन्थकार **आर्चाय श्री उमास्वामी जी** ने पथभ्रात संसारी पुरुषों को सच्चा मार्ग बताते हुए ग्रन्थ का आरम्भ ही **सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्ग:** सूत्र लिखकर किया है। अर्थात् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवम् सम्यक् चारित्र तीनों ही मोक्ष मार्ग हेतु प्रथमतः अनिवार्य है। वस्तुतः ग्रन्थ, मोक्षमार्ग का प्रारूपण करता है अतः कई विद्वानों/ रचनाकारों ने इसे **मोक्षशास्त्र** के नाम से भी रचा है।

ग्रन्थ के मूल रचनाकार आचार्य प्रवर श्री उमा स्वामी तत्वार्थसूत्र नामक ग्रन्थ के कारण अजर–अमर है। **यह ग्रन्थ जैनों का बाईबल भी कहा जाता है। संस्कृत भाषा का प्रथम ग्रन्थ होने का भी गौरव इस कृति को प्राप्त है।** सच तो यह है कि **आचार्य श्री उमास्वामी जी** ने ही जैन सिद्धान्त को प्राकृत से संस्कृत भाषा में प्रकट करने का श्री गणेश किया था। इसके पश्चात ही अनेक आचार्यों ने संस्कृत भाषा में ग्रन्थ रचे है। आचार्य श्री उमा स्वामी जी की, जैनों के दोनें सम्प्रदायों दिगम्बरों और श्वेताम्बरों में समान मान्यता है।....... और उनका यह ग्रन्थ भी दोनों सम्प्रदायों में विशिष्ट श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है।

दिगम्बर शास्त्रों में **आचार्य श्री उमास्वामी जी** के गृहस्थ जीवन का कुछ भी ज्ञान प्राप्त नहीं होता। साधु के रूप में वह **कुन्दकुन्दाचार्य** के पट्ट शिष्य बताये गये है।

प्रकाशित सम्पूर्ण ग्रन्थ दस अध्यायों में वर्णित है। इस ग्रन्थ में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र तथा उनके विषयभूत जीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्षतत्व का वर्णन किया गया है।

तत्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पर अनेक टीकायें प्रकाशित हो चुकी है जो एक से एक उत्तम रूप में बनी है। इन्हीं में से एक पंडित श्री सुदासुख दास जी की प्रस्तुत टीका है जो ढूढारी भाषा में है। पं. श्री सदासुख दास जी अपने समय के बहु प्रतिष्ठित विद्वान है। प्रस्तुत ग्रन्थ में विस्तार से विषय वस्तु को समझाया गया है जो इस कृति की विशेषता है। ❑

यशःस्तिलक चम्पू महाकाव्य (पूर्वखण्ड)

करुणानिधि, वात्सल्य रत्नाकर, धर्मयोगी, **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मगल प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का 60 वाँ पुष्प है।

यशस्तिलक चम्पू महाकाव्य
श्री मत्सोमदेव सूरि - विरचित

अनुवादक – स्व प सुन्दरलाल शास्त्री / पृष्ठ सख्या– 32 + 406 + = 438 / प्रकाशन वर्ष – 1992 / प्रकाशक – भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म प्र / प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बासवाडा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर गुलाब बाटिका, लोनी रोड, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–60

सस्कृत के गद्य साहित्य में अनेक कथा ग्रन्थ है। इनमें **बाणभट्ट की कादम्बरी, सोमदेव का यशस्तिलक चम्पू तथा धनपाल की तिलकमजरी**– ये तीनों अत्यन्त विशिष्ट ग्रन्थ है। बाण ने कादम्बरी मे भाषा और कथावस्तु का जिस ऊचाई तक परिमार्जन किया था उसी आदर्श का अनुकरण करते हुए सोमदेव और धनपाल ने अपने ग्रन्थों की रचना की है। सस्कृत भाषा का समृद्ध उत्तराधिकार क्रमश हिन्दी भाषा को प्राप्त हो रहा है इसका उत्कृष्ट उदाहरण कादम्बरी के कई हिन्दी अनुवाद है। **स्व. श्री सुन्दर लाल जी शास्त्री** ने सोमदेव विरचित **यशस्तिलक चम्पू** का भाषानुवाद प्रस्तुत कर हिन्दी साहित्य की विशेष सेवा की है, विशेषकर जैन आगम साहित्य प्रकाशन के क्षेत्र में स्व श्री सुन्दरलाल जी शास्त्री का प्रस्तुत अनुवाद एक कल्पवृक्ष की प्रसिद्धि के समान वदनीय है।

सोमदेव जी की प्रस्तुत कृति यशस्तिलक की रचना का आधार उज्जयिनी नगर के **सम्राट यशोधर** का जीवन चरित्र है और इसी से इसे यशोधर महाराज चरित भी कहा जाता है। इस कृति मे यशोधर सम्राट की कथा को आधार बनाकर व्यवहार राजनीति, धर्म दर्शन, तथा मोक्ष सम्बन्धी अनेक विषयों की सामग्री प्रस्तुत की गई है।

प्रस्तुत कृति के प्रथम आश्वास कथावतार के नाम से है। यथा– प्राचीन समय में यौधेय नाम का जनपद था। यहाँ का राजा मारिदत्त था। उसने वीरभैरव नामक अपने पुरोहित की सलाह से अपनी कुलदेवी चण्डमारी को प्रसन्न करने के लिए एक सुन्दर पुरुष और स्त्री की बलि देने का विचार किया तथा चाण्डाल को ऐसी जोडी लाने की आज्ञा दी। उसी समय **सुदत्त** नाम के एक महात्मा राजधानी के बाहर ठहरे हुए थे। उनके साथ दो शिष्य थे – एक **अभयरुचि** नाम का राजकुमार तथा दूसरी राजकुमार की बहिन **अभयमति।** दोनों ने छोटी आयु मे ही दीक्षा ले ली थी। वे दोनों दोपहर की भिक्षा के लिए निकले हुए थे कि चाण्डाल पकडकर देवी के मन्दिर में राजा के पास ले गया। राजा ने पहले तो उनकी बलि के लिए तलवार निकाली। पर उनके तप प्रभाव से उनके विचार सौम्य हो गए और उसने उनका परिचय पूछा। इस पर राजकुमार ने कहना प्रारम्भ किया। यही इस प्रथम आश्वास का साराश है।

प्रस्तुत कृति का द्वितीय आश्वास की कथासार है – इसी भरतक्षेत्र मे **अवन्ति** नाम का जनपद है। इसकी राजधानी **उज्जयिनी** क्षिप्रा नदी के तट पर स्थित है। यहां **यशोध** नाम का राजा राज्य करता था। उसकी रानी **चन्द्रमति** थी। उनके **यशोधर** नामक पुत्र हुआ। एक बार अपने सिर पर सफेद बाल देखकर राजा को वैराग्य उत्पन्न हो जाता है तथा वह अपने पुत्र यशोधर को राज्य सौंपकर सन्यास ले लेता है। यशोधर का राज्याभिषेक हो जाता है। नये राजा के लिए **उदयगिरि** नामक एक सुन्दर तरुण हाथी तथा **विजयवैनतेय** नामक अश्व लाया जाता है। यशोधर का विवाह **अमृतमति** नाम की रानी से हो जाता है। राजा द्वारा अश्व और हाथी का पट्टबध बहुत धूमधाम से किया जाता है। यही पट्टबधोत्सव नामक द्वितीय आश्वास समाप्त हो जाता है।

यशस्तिलक चम्पू महाकाव्य के पूर्व खण्ड का अतिम आश्वास मे नये राज्य मे राजा का समय विविध आमोद–प्रमोदों तथा दिग्विजयादि के द्वारा सुख से बीतने लगने का वर्णन है। इस आश्वास को **राजलक्ष्मी विनोदन** आश्वास के नाम से ग्रन्थ मे वर्णित है।

ग्रन्थ की अनुवाद भाषा सहज सुलभ एवम् बौद्धगम्य है। अनुवादक की लेखन शैली रोचक है जिससे ग्रन्थ पढते समय आगे की विषय वस्तु जानने की अभिलाषा बनी रहती है।

सुधर्म ध्यान प्रदीप

ॐ

अतिशय योगी, शान्ति–सुधामृत के दानी, ज्योति पुञ्ज **आचार्य108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के पावन प्रसग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा सकल्प के अर्न्तगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म प्र का 62 वाँ पुष्प है।

सुधर्म ध्यान प्रदीप
श्री आचार्य सुधर्म सागर विरचित

हिन्दी अनुवादक – धर्मरत्न प लालाराम जी शास्त्री आगरा/ पृष्ठ सख्या – 20 + 218= 238/ प्रकाशन वर्ष – 1989–90/ प्रकाशक – भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म प्र / प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज सघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति लोहारिया (बास वाडा) राजस्थान (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–62

प्रस्तुत कृति के ग्रन्थकार **आचार्य श्री सुधर्म सागर महाराज** ने परमाराध्य एवम् स्वात्म–चरमोन्नति साधक मुनिपद को धारण कर अपना तो परमहित किया ही है, साथ ही आपके द्वारा धर्म एवं समाज का भी बहुत भारी हित हुआ है।जिस पद्मावती पुरवाल पवित्र सज्जाति मे महाराज ने जन्म लिया है, उसे तो विभूषित किया ही है, साथ ही सप्त परमस्थानों मे पारिव्राज्य (मुनिदीक्षा) परम स्थान को धारणकर अपने विशुद्ध कुल को भी आदर्श एवं मुनिवंश के पवित्र नाम से प्रख्यात किया है।

परमपूज्य लोक–हितकर **दिगम्बर वीतरागी तपस्वी मुनिश्रेष्ठ श्री 108 सुधर्मसागर जी महाराज** का जीवन परम पवित्र और वीतरागी त्यागियों के लिए भी उच्चादर्श है। अपने नियमित षडावश्यक कर्मों तथा सामयिक स्वाध्याय से बचे हुए समय में मुनिमहाराज ने यह महान ग्रन्थ **''सुधर्म ध्यान प्रदीप''** संस्कृत श्लोकों में बनाया है।इस ग्रन्थ की रचना से वीतरागी महर्षियो, विद्वानो एवम् श्रावकों का बहुत बड़ा कल्याण होगा। वर्तमान पंचम काल में ऐसे सर्वोच्च उद्भट विद्वान महर्षि **परम पूज्य सुधर्म सागर जी** ने इस विशाल ग्रन्थ की रचना करके पूर्वाचार्यों की महान कृति को पुन साक्षात् स्मृत पथ में ला दिया है। ***प्रस्तुत ग्रन्थ की विषय वस्तु है–***

अध्याय 1 – मंगलाचरण, शुद्धजीव का लक्षण, ज्ञान के भेद और लक्षण, प्रकारान्तर से जीव का लक्षण और भेद। **अध्याय 2** – आत्मा का स्वरूप, सहानुभूति और सम्यग्दर्शन। **अध्याय 3**– बहिरात्मा का स्वरूप, अन्तरात्मा का स्वरूप। **अध्याय 4**– परमात्मा का स्वरूप। **अध्याय 5**– भावना का स्वरूप। **अध्याय 6**– द्वादश भावना का स्वरूप। **अध्याय 7**– महाव्रतों का स्वरूप, अहिंसा महाव्रत। **अध्याय 8**– सत्य महाव्रत, आचौर्य महाव्रत, ब्रम्हचर्य महाव्रत, परिग्रह त्याग महाव्रत। **अध्याय 9**– इन्द्रिय विजय। **अध्याय 10**– मनोनिग्रह का स्वरूप। **अध्याय 11**– समितियों का स्वरूप, बारह तप का स्वरूप। **अध्याय 12** – अनुक्रमों से कषायों का विजय। **अध्याय 13** – रागद्वेष का त्याग और समता का स्वरूप। **अध्याय 14** – अतिध्यान और रौद्र ध्यान का स्वरूप। **अध्याय 15** – ध्यान की क्रियाएँ। **अध्याय 16** – धर्म ध्यान का स्वरूप। **अध्याय 17** – आज्ञा विचय का स्वरूप। **अध्याय 18** – अपाय विचय का स्वरूप। **अध्याय 19** – विपाक विचय का स्परूप। **अध्याय 20** – सस्थान विचय का स्परूप। **अध्याय 21** – पिण्डस्थ ध्यान और धारणा तत्व का स्वरूप। **अध्याय 22** – पदस्थ ध्यान तथा मन्त्रों के नाम। **अध्याय 23** – रूपस्थ ध्यान अर्हन्त का स्परूप उनके ध्यान का उपाय और साधना की महिमा। **अध्याय 24** – रूपातीत वा सिद्धों का स्परूप। **अध्याय 25**– शुक्ल ध्यान का स्वरूप और उसके भेदों का स्वरूप।

आचार्य श्री सुधर्मसागर विरचित सुधर्म ध्यान प्रदीप का अनुवाद धर्मरत्न पं लालाराम जी शास्त्री, आगरा प्रवासी ने श्रावकोपयोगी सहज भाषा में किया है। ग्रन्थ पठनीय, चिंतन, मनन योग्य एक आदर्श कृति है। ❑

श्रेणिक चरित

अतिशय योगी, तेजस्वी अमरपुंज आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ति के मंगल प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार हेतु संकल्पित अनेकान्त विद्वत परिषद्-सोनागिरि दतिया) म.प्र. का यह ६३वॉ पुष्प है।

श्रेणिक चरित आचार्य शुभचन्द्र स्वामी विरचित
विरचित -आचार्य शुभचन्द्र स्वामी / सम्पादक-ब्र. धर्मचन्द शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य/मूल्य -चालिस रुपय मात्र/पृष्ट संख्या - १४+३७२=३८६/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान -(१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्तसिद्धान्त समिति लोहारिया, (बांसवाड़ा) राज (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका-लोनी रोड़, दिल्ली। मुद्रक शान्ति प्रिन्टर्स-नवीन शाहदरा, दिल्ली ११००३२
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -६३

इस कृति में महाराज श्रेणिक का चरित वर्णित है। जैन क्षत्रिय जाति में महाराज श्रेणिक का नाम परम आदर से स्मरण किया जाता है। राजा श्रेणिक के गुणों का आदर करते हुए जैनधर्म की प्रभावना करते हुए बड़े बड़े आचार्यों का मत है कि यदि महाराज श्रेणिक इस भारतवर्ष में जन्म न लेते तो इस कलिकाल पंचमकाल में जैनधर्म का नामोनिशान भी सुनना दुर्लभ हो जाता। कारण वर्तमान में इस भरतक्षेत्र में कोई सर्वज्ञ रहा नहीं। जितने जैन-सिद्धान्त हैं इनमें जानने का उपाय मात्र आगम ही रह गये हैं और उनका प्रकाश भगवान् महावीर अथवा गौतम गणधर से अनेक विषयो में गूढ़-गूढ़ प्रश्न कर महाराज श्रेणिक की कृपा से हुआ है।

महाराज श्रेणिक कब हुए इस विषय में सिवाय इनके पुराण को छोड़कर कोई पुष्ट प्रमाण उपलब्ध नही होता। जैन सिद्धान्त के आधार पर भगवान महावीर के काल में महाराज श्रेणिक थे। इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि महाराज श्रेणिक और भगवान महावीर समकालीन थे।

यह कृति प्रन्दह सर्गों में महाराज श्रेणिक का चरित पूर्ण करती है। यथा -

प्रथम सर्ग - महाराज उपश्रेणिक को राज्य -प्राप्ति का वर्णन करने वाला विषय।

द्वितीय सर्ग - महाराज उपश्रेणिक के नगर प्रवेश का वर्णन करने वाला विषय।

तीसरा सर्ग - कुमार श्रेणिक का राजगृह से निष्कासन का वर्णन करने वाल विषय।

चौथा सर्ग - श्रेणिक का कुमार नन्दाश्री के साथ विवाह - वर्णन करने वाला विषय।

पॉंचवा सर्ग - श्रेणिक को राज्य प्राप्ति वाला विषय।

छटवॉं सर्ग - अभय कुमार का राजगृह में आगमन - वर्णन करने वाला विषय।

सातवॉं सर्ग - अभय कुमार की उत्तम बुद्धि का वर्णन करनेव वाला विषय।

आठवॉं सर्ग - चेलना के साथ विवाह का वर्णन करने वाला विषय।

नवम् सर्ग - महाराज श्रेणिक को मुनिराज के समागम का वर्णन करने वाला विषय।

दसवॉं सर्ग - मनोगुप्ति, वचनगुप्ति - दोनो गुप्तियों की कथा-वर्णन करने वाला विषय।

ग्यारहवॉं सर्ग - कायगुप्ति कथा वर्णन करने वाला विषय।

बारहवॉं सर्ग - महाराज श्रेणिक को क्षायिक सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति का वर्णन करने वाला विषय।

तेहरवॉं सर्ग - देव द्वारा अतिशय प्राप्ति का वर्णन करने वाला विषय।

चौदहवॉं सर्ग - श्रेणिक -चेलना आदि की गति का वर्णन करने वाला विषय।

पन्द्रहवॉं सर्ग - भविष्यत्‌काल में होने वाले भगवान पद्मनाम के पंच-कल्याण का वर्णन करने वाला विषय।

आगम सम्मत है कि राजा श्रेणिक भविष्यत् काल के चौबीस तीर्थंकरों में प्रथम तीर्थंकर महापद्म जी के नाम से विख्यात होंगे।

ग्रन्थ की भाषा सरल, सुबोध एवं बौद्धगम्य है जिससे आम श्रावक समाज को अध्ययन में कहीं भी कठिनता महसूस नहीं होती है।

मंगलघट के भीतर अमृत

चारित्र शिरोमणि, करुणा निधि आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयंती के पावन प्रसंग पर भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि का यह ६३ का पुष्प है जो आध्यात्मिक उत्कृष्ट कविताओं को अपने में समेटे हुए है।

मंगलघट के भीतर अमृत रचियता - मिश्रीलाल जैन
प्रकाशन वर्षः १९८९-९० / पृष्ठ संख्या ५८+१२= ६०/ प्रकाशक-भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद, सो नागिर (दतिया) म.प्र.प्राप्ती स्थान/आचार्य विमल सागर जी संघ, अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बाँसवाड़ा) राजस्थान, श्री विश्म्भर जैन मंदिर, गुलाब वाटिका दिल्ली/ मुद्रकः वर्द्धमान मुद्रणालय, वाराणसी।
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -६३ (क)

पुस्तक के आरम्भ में लेखन में आत्म निवेदन में लिखा है कि ऋगवेद की ऋचाओं और समयसार की गाथाओं में काव्य यात्रा के शुभारम्भ की अमरगाथा अंकित है। महाकवि वाल्मिकि की करुणा, रामायण के रुप में प्रतिष्ठित एवं पूज्यनीय हुई है। कबीर का अध्यात्म, तुलसी की भक्ति तथा मीरा के समर्पण की भावना ने हिन्दी काव्य को नए आयाम एवं कीर्तिमान दिये है। महाकवि तुलसीदास के समकालीन महाकवि बनारसीदास, भूधरदास, दौलतराम, भागचन्द आदि अनेक कवि हुए है जिन्होंने हिन्दी कविता में आध्यात्म का सफल प्रयोग कर काव्य सृजना को सत्यं, शिवम्, सुन्दरम का रुप प्रदान करने में अपना स्मरणीय योगदान दिया है।

बीसवीं शताब्दी केमध्यकाल बाद विशेष-कर इस शताब्दी के अंतिम तीन दशक में काव्य सृजना में पाश्चात्य शैली का प्रयोग बढ़चढ़कर आने लगा और हिन्दी कविताओं में से भारतीय संस्कृति /आध्यात्म का शनैःशनैः पिछड़ना बढ़ता गया / हिन्दी कविता ने व्यवसायिकता के वस्त्र ओढ़ लिये फलस्वरुप कवि सम्मेलनों में भीड़ की रुचि अनुरुप कविता लिखी और पढ़ी जाने लगी। अतुकांत और अकविता की थकान भरी यात्रा का पढ़ाव अब शनैः शनैः थम गया और पुनः अपनी संस्कृति में हिन्दी कविता / गीत लौटकर आने लगे।

रचियता मिश्रीलाल जैन ने इस संकलन में गीत एवं कविता के माध्यम से भारतीय दर्शन एवं आध्यात्म को पुनः स्थापित करने का सफल प्रयास किया है जो स्वागत योग्य है। भाषा-शैली सरल सुबोध एवं बोधगम्य है, जो आम व्यक्तियों के समझ में आने में पथ की बाधा नहीं है। ऐसे सद् प्रकाशनों को पुनः प्रकाशन गति मिलती रहे इस हेतु पाठकों में रुचि का होना अनिवार्य कही जा सकती है। प्रस्तुत कृति में ४० कविताएं है जो आध्यात्म एवं भारतीय संस्कृति के अनुरुप है। प्रस्तुत कृति में प्रकाशित कुछ रचनाएँ है -

- **अर्हत् दो मुझको अपनी शरण - कविता से**

आयु के पुष्प झरने लगे,
अर्हत् दो मुझको अपनी शरण।
मरघट से आगे क्या जाओगे,
साथ इतना निभा पाओगें।
जन्म मृत्यु का भ्रम ही मिटे,
तेरे पथ का करुँ अनुकरण।
अर्हत् दो मुझको अपनी शरण ।।

- **मंगल मय जीवन है - कविता से**

दबे-दबे पाँव मौत आती है आने दो ,
आहट मिल जाये तो मन मत घबराने दो।
निश्चित ही मृत्यु से जीवन का अन्त नहीं ,
प्राण मुखर होते हैं, देह बदल जाने दो ।।
खेल-खेल में जब खिलौना टूट जाता है ,
बालक रो देता है पर ज्ञानी मुस्काता है।
आत्म के जौहरी को इसका कुछ दर्द नहीं ,
कौन जन्म लेता है, कौन मृत्यु पाता है ?

- **समय की सुरभी बहने दो - कविता से**

वासना और विकारों की
खिड़कियाँ सब बन्द कर लो
युगों से मौन बैठा देवता भीतर
उसे कुछ बात कहने दो,
समय की सुरभि बहने दो।

प्रस्तुत कृति में प्रकाशित - धुँधला-धुधलासा है दर्पण, जन्म समय दिगम्बर आया, ओ मानस के राजहंस, आत्मतत्व अनबूझ पहेली, आत्मा की गहराई, तीर्थंकर महावीर, सर्वज्ञ के चरणों में, निर्वाण दीप, सिद्ध नाम सत्य है, कुन्दकुन्दाचार्य, मोय गोम्मटेश्वर ले चलियो, महावीर कहाँ से आते ? आदि रचनाऐं आध्यात्म को अपने में समेटे है तथा पठनीय है।

मुक्ति सोपान

युग प्रमुख करूणानिधि, सन्मार्ग दिवाकर आचार्य **108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के शुभ प्रसंग पर माँ-जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र.का 64वाँ पुष्प है।

जैन दर्शन में मनुष्य की मनुष्यता प्राप्ती का लक्ष्य मोक्ष है। वर्तमान मानव समाज जानकर भी अनजान बनता हुआ लौकिक जीवन में पारलौकिक पथ पर चलने की पहल नहीं करता हुआ विषय भोगों में लिप्त रहता है। राग-द्वेष विषय भोगों मे लिप्त मानव वर्तमान में सुखी रहने के साधनों में प्रयत्नशील रहता है तथा धार्मिकता से मात्र दिखावा कर धर्माचरण करता है और पर में सुख की प्राप्ति में लग रहता है।

परम पूज्य विदूषी आर्यिका रत्न 105 श्री स्याद्वादमती माताजी ने मानवको मानतवा का लक्ष्य प्राप्ती हेतु अपनी लेखनी से सद्मार्ग उपरोक्त कृति **भक्ति मुक्ति सोपान** में प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत कृति में बारह अध्याय हैं जो कि विभिन्न उद्धरणों के साथ मुक्ति के पथ की आराधना हेतु वर्णित है। यथा स्थान रोचक प्रसंगों का भी समावेश है जो कृति को जनसामान्य के हृदयगम्य होने में पूरी तरह प्रेरणा स्त्रोत बनते हुए भक्त का मन विचलित नहीं होने देते।

प्रस्तुत कृति भक्ति मुक्ति सोपान में श्रावक को भक्ति किस प्रकार करना चाहिये इसका विवरण बारह अध्यायों में निम्न प्रकार है-

भक्ति मुक्ति सोपान

आर्यिका रत्न श्री स्याद्वादमती जी

कृतिकारिका - आर्यिका 105 श्री स्याद्वादमती जी/ प्रकाशक- भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (म.प्र.)/ प्रकाशन वर्ष - 1994/ पृष्ठ संख्या - 16+84 = 100/ प्राप्ती स्थान - (1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज.(3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली-11032/ मुद्रक-सिंघई ऑफसेट, जबलपुर (म.प्र.)

हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या - 64

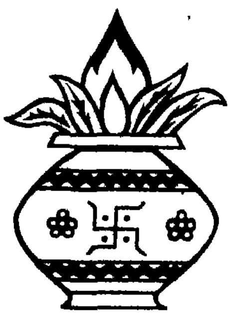
अध्याय 1-	स्तुति, स्त्रोता, स्तुत्य स्तुतिफल
अध्याय 2-	भक्ति सामान्य लक्षण
अध्याय 3-	भक्ति के प्रकार
अध्याय 4-	जिनभक्त के जिनालय में न करने योग्य कार्य।
अध्याय 5-	जिनभक्ति का प्रधान अंग जिनदर्शन
अध्याय 6-	जिनभक्ति का अग जिनपूजा
अध्याय 7-	जिनभक्ति का अंग जाप
अध्याय 8-	भक्ति के विभिन्न प्रारूप
अध्याय 9-	भक्ति के साधक अंग
अध्याय 10-	गुरुभक्ति
अध्याय 11-	हमारे आराध्य नवदेवता
अध्याय 12-	जिनभक्ति कल्पलता

परमपूज्य आर्यिका 105 श्री स्याद्वादमती जी ने अपने भक्ति रस मधुर रस श्रेष्ठी श्रावकों को इस उपयोगी कृति के माध्यम से चखाने का स्तुत्य प्रयास किया है। श्रावक जगत पूज्य आर्यिका जी के इस मधुरस को स्वीकार कर अपने को जिनभक्त बनाने हेतु प्रयत्नशील रहें, यही इसकृति की महत्ता है।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार

संस्कृति पुरुष, श्रमण परम्परा के आदर्श धर्मयोगी **आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मंगल प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अर्न्तगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारतवर्षीय विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का 64 वाँ पुष्प है।

प्रस्तुत ग्रन्थ रत्नकरण्ड श्रावकाचार, ग्रन्थकार **आचार्य समन्तभद्र** की पांचवी कृति है। इस कृति मे मुक्ति के मार्ग के रूप में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं स्मयक् चारित्र का सुबोध वर्णन वर्णित है। चारित्र के विवरण मे गृहस्थों के धर्माचरण का आदर्श विस्तार से स्पष्ट वर्णित किया गया है। इसीलिए इस ग्रथ को **श्रावकाचार** के नाम से भी प्रसिद्धि प्राप्त है।



कृति का आरम्भ रचनाकार आचार्य प्रवर ने **श्री 1008 वर्द्धमान स्वामी** को नमस्कार कर किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में 150 श्लोक प्रमाण है जो सातं परिच्छेद में विभक्त है। **प्रथम परिच्छेद** के 41 श्लोकों में सम्यग्दर्शन का वर्णन है। सम्यग्ज्ञान एवं चार अनुयोग का वर्णन **द्वितीय परिच्छेद** के 5 श्लोक में वर्णित है। **तृतीय परिच्छेद** में 20 श्लोक है जो सम्यक चारित्र का वर्णन प्रस्तुत करते हैं। ग्रन्थ के **चतुर्थ परिच्छेद** में तीन गुणव्रतों का स्वरूप बताया गया है जो कि 24 श्लोकों में वर्णित है। ग्रन्थ का **पंचम परिच्छेद** में 31 श्लोक है जिनमें चार शिक्षाव्रतों का स्वरूप बताया गया है। कृति का **षष्ठम् परिच्छेद** में 14 श्लोक है, जिनमें सल्लेखना का लक्षण एवम् विधि बताई गई है। ग्रन्थ का **अंतिम सप्तम परिच्छेद** में श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का वर्णन है जो 12 श्लोकों में बताया गया है। पश्चात एक श्लोक में श्रेष्ठ ज्ञाता का स्वरूप, एक श्लोक में रत्नत्रय स्वरूप धर्म का माहात्म्य व अन्त के एक श्लोक में अन्त मंगल है।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार
आचार्य समन्त भद्र कृत

हिन्दी टीका – पूज्य आर्यिका 105 श्री आदिवासी माता जी/ पृष्ठ संख्या – 24 + 344 = 368 प्रकाशन वर्ष – 1993/ अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ति स्थान–
(1) आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाडा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड़, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या – 64

प्रस्तुत ग्रन्थ की मूल भाषा, सरल सुबोध एवं सरस संस्कृत भाषा में है। ग्रन्थ की हिन्दी टीका **पूज्य आर्यिका 105 श्री आदिमती माताजी** ने श्रावकोपयोगी हितकर भाषा में किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ प्रकाशन के पूर्व **डॉ. चेतन प्रकाश पाटनी** का संशोधन हेतु सहयोग उपलब्ध हुआ है जिससे ग्रन्थ के अध्ययन में भाषा की सरलता धाराप्रवाह बन गई है। ❑

राजा दशरथ ने राम का निर्वासन और भरत को राज्याभिषेक अपने सत्य वचन के कारण ही किया। राजा दशरथ ने सत्यवाक् का अनुसरण करते हुए श्री कैकयी को दिये वरदान के वचन का पालन किया, ऐसा मुनि वाल्मीकि लिखते हैं। वाणी के पवित्र सत्य रक्षा करने वालों की रक्षा इतिहास ने की है।
—आचार्य विद्यानन्द मुनि।

पार्श्वाभ्युदय

तीर्थोद्धारक चूड़ामणि, जिन भक्ति के अमर प्रेरणा स्रोत आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ति के पावन प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार हेतु संकल्पित अनेकान्त विद्वत् परिषद् - सोनागिरि (म.प्र.) का यह ६६ वाँ पुष्प है।

पार्श्वाभ्युदय भगवज्जिन सेनाचार्य विरचित
हिन्दी अनुवाद एवं सम्पादन - डॉ. रमेशचन्द्र जैन/ प्रकाशन वर्ष - १९८९ -९०/ पृष्ठ संख्या १२ + ३३६ = ३४८ / प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति - लोहारिया (बाँसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मंदिर - गुलाब वाटिका - लोनी रोड़ - दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -६६

पार्श्वाभ्युदय संस्कृत साहित्य की एक उत्कृष्ट रचना है। आचार्य जिनसेन ने संस्कृत के महाकवि कालिदास द्वारा रचित काव्य मेघदूत के श्लोकों के प्रत्येक चरण की और कहीं-कहीं दो चरणों की समस्यापूर्ति के फलस्वरूप ३६४ श्लोकों में "पार्श्वाभ्युदय" ग्रन्थ की रचना की है। इस में जैनधर्म के तेईसवें तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ की तपस्या के काल में अनेक पूर्व भवों के वैरी कमठ के जीव शम्बरासुर द्वारा किये गये उपसर्गों को आधार बनाकर कथा को प्रारम्भ किया गया है।

कृति की कथानक इस प्रकार है। जम्बूद्वीप के दक्षिण भरत क्षेत्र में सुरम्य नामक देश में पोदनपुर नगर था। वहाँ राजा अरविन्द राज्य करता था। उस नगर में विश्वभूति ब्राह्मण के दो पुत्र कमठ और मरुभूति रहते थे। ये दोनों राजा के मन्त्री थे। एक बार जब मरुभूति राज्य कार्य से बाहर गया हुआ था तब कमट ने उसकी पत्नी वसुन्धरा को बलात् अपनी पत्नी बना लिया। राजा को वस्तु स्थिति ज्ञात होने पर कमठ को राज्य निष्कासन कर दिया जाता है। कमठ सिन्धु नदी के तट पर तपस्या करने लगता है। छोटा भाई निष्कासन से दुखी होकर बड़े भाई के पास पहुँचता है। छोटे भाई को आया देखकर कमठ को क्रोध आ जाता है और वह मरुभूति पर पाषाण शिला गिरा देता है। इस प्रकार कई जन्मों तक उन दोनों का आपस में बैर चलता रहता है। अन्त में मरुभूति का जीव वाराणसी के राजा विश्वसेन की रानी ब्राह्मी के गर्भ में पार्श्वनाथ के रूप में जन्म लेता है। देवों ने यथा समय गर्भ/जन्म/तप आदि महोत्सव किये। अन्त में वैराग्य के कारण उन्होंने समस्त परिग्रहों का त्याग कर दीक्षा ले ली। एक बार वे जब तपश्चरण में लीन थे तो आकाश मार्ग से जाते हुए कमठ के जीव शम्बरासुर का विमान रुक गया। उसने विभंगावधि से सब वृत्तान्त जाना तो अपने बैरी को देख कर उसकी क्रोधाग्नि बढ़ गई। उसने उपसर्ग से पार्श्वनाथ की तपस्या भंग करने की चेष्ठा की किन्तु पार्श्वनाथ भगवान् धैर्य से च्युत नही होते है। अन्त में वह उन्हें मारने को पहाड़ उठाता है इसी समय धरणेन्द्र और पद्मावती भगवान की पूजा के लिये आते हैं तथा रक्षा करते हैं। इसी समय उन्हें केवलज्ञान हो जाता है, दिशायें निर्मल हो जाती है। यह देख शम्बरासुर भागने लगता है लेकिन धरणेन्द्र उसे अभय देकर रोकते हैं तथा उसके पूर्व जन्मों की याद दिलाते हैं। शम्बर अपने कृत्यों पर पश्चाताप करता है और

तीर्थंकर का गुणगान करता है।

पार्श्वाभ्युदय काव्य में रामगिरि से अलका तक मेघ के जाने के मार्ग का वर्णन किया गया है । कैलाश पर्वत के अंक में बसी अलकानगरी का वर्णन कवि ने मुक्त कंठ से किया है। यह काव्य विश्व के समस्त काव्यों में अप्रतिम है । आध्यात्मिक शक्ति के सामने संसार की सारी भौतिक शक्तियाँ तुच्छ हैं । वे उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती हैं, यह दर्शाना ही यहाँ कवि का अभिप्रेत है।

सम्पादक एवं अनुवादक डॉ. रमेशचन्द्र जैन संस्कृत साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान हैं तथा अनेक पुस्तकों के सफल लेखक/अनुवादक एवं सम्पादक रहे हैं । उनके द्वारा संस्कृत टीका/हिन्दी अर्थ एवं संक्षिप्त व्याख्या इस ग्रन्थ की लिखी गई है, जो काव्य की काव्यत्व का लाभ लेने वालों के लिये उपयोगी/ज्ञानवर्धक भी है । ■

।। ॐ ह्रीं, णमो अरहंताणं।।

धर्म वीतरागत की सिद्धि करता है (१५–६–९४)

हे आत्मन् ! धर्म (सम्यकदर्शन, सम्यकज्ञान, सम्यक चारित्र) ही वीतरागता का साधन है। जो देव, रागरहित, द्वेष रहित, हितोपदेशी, सर्व पदार्थो का जाननेवाला होता है वहीं देव वीतरागी, सर्वज्ञ हितोपदेशी, निग्ररन्थ नअनत का धारक, देवादिदेव और प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग ही सिद्धान्तशास्त्र है। आचार्य, उपाध्याय, साधु नग्न दिगम्बर साधु, गुरु कहलाता है। अतः देव–शास्त्र–गुरु का ही विनय, पूजन, ध्यान, जप, तप जो श्रद्धा से करता है वही भव्य संसार शरीर भोगों से विरक्त होकर, व्रत संयम धारण कर, परम वीतरागता की सिद्धि कर परम वीतराग बन जाता है। जामन मरण का नाशकर सिद्ध परमात्मा बन जाता है। अतः अहिंसा धर्म के पालक वीतराग बनते हैं।

☆ ☆ ☆

।। ॐ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं।।

धैर्य से ही कर्म की हानी होती है (१० जुलाई ९४)

हे आत्मन् ! सर्वकार्य शान्ति से धैर्यपूर्वक करने से रोग–शोक में शान्ति मिलती है। वहीं पर साता–वेदनी कर्म का पदार्पण है और जहाँ धैर्य–शान्ति नहीं है वहाँ–वहाँ असाता वेदना नचाती है। नाना प्रकार के कार्य कराती है। **श्री 1008 देवाधिदेव भगवान महावीर स्वामी** ने देशना में कहा है कि जितनी शान्ति धारण करोगे उतनी भेद विज्ञान की धनराशि प्राप्त होगी। अतः **हे विमलात्मन!** हर कार्य में धैर्य धारणकर शान्ति से काम लो तो तुम्हें असाता वेदनीय कर्म का नृत्य नहीं देखना है। यथा श्री सनत्कुमार चक्रवर्ती ने एक हजार वर्ष कष्ट व्याधियों का तांडव सहन किया। सुकुमाल को गीदड़ व उनके बच्चों ने खाया धैर्य से काम लिया सर्प की सिद्धि गये। अतः शान्ति धैर्य से नरभव ही का खजाना है। इसे धारण करना परमाशान्ती का साधन है।

☆ ☆ ☆

रयणसार

युग प्रमुख, चारित्र–शिरोमणि, सन्मार्ग दिवाकर, **आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज हीरक जयन्ती के उपलक्ष्य में प्रकाशित रयणसार** कृति भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का 67 वाँ पुष्प है।

रयणसार **आचार्य कुन्द-कुन्द विरचित**
सानिध्य–उपाध्याय मुनिश्री भरत सागर जी महाराज/ निर्देशन आर्यिका स्याद्वाद मती माता जी/ प्रकाशक–भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (म.प्र.) प्रकाशनवर्ष–संवत् 2049/ पृष्ठ सख्या 74+12=86/ प्राप्तिस्थान (1) आचार्य विमल सागर श्री संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया जिला बांसवाड़ा (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाबवाटिका, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या– 67

प्रस्तुत ग्रंथ **आचार्य श्री कुन्दकुन्दचार्य** विरचित कहा जाता है। यद्यपि इस सम्बन्ध मे विवाद है। दिगम्बर जैनाचार्यों में कुन्दकुन्द का नाम सर्वोपरि रहा है तथा अनेक मूर्तिलेखों, शिला लेखों एवं ग्रंथप्रशस्तियों में उनका नाम मिलता है। उनका महत्वसूचक– मंगल यह है–

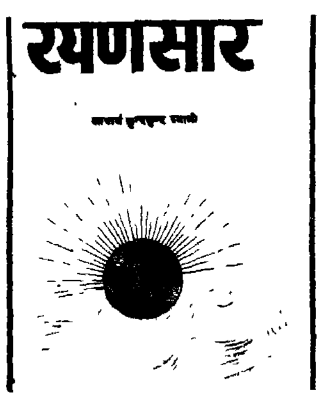
"मङ्गलं भागवान्वीरो मङ्गलं गौतमोगणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दार्यो जैन धर्मोऽस्तु मङ्गलम्।।

उनके विषय मे यह भी उक्ति प्रसिद्ध है,

"विशुद्धि बुद्धि वृद्धिदा प्रसिद्ध ऋद्धि सिद्धिदा।
हुए न हैं न होंयेंगे मुनिंद कुन्दकुन्द से।।

यह ग्रथ मुनियों एवं श्रावकों के धर्म का निरूपण करने वाला सरल अनुवाद सहित सुबोध ग्रथ है। यह ग्रंथ मात्र 168 प्राकृत गाथाओं में है जो विशाल सागर को गागर मे लाकर रत्नत्रय निधि को सम्मुख उपस्थित कर देता है। श्रवकों के धर्म को विशद रूप से प्रदर्शित करने वाला यह ग्रंथ सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन की विशेषता बतलाता है। इसके पश्चात् मुनिधर्म के सम्बन्ध में विवेचन है। पूजा और दान के सम्बन्ध में, विघ्नादि डालने पर, मिथ्यात्व का पोषणादि करने पर क्या फल होता है? इसका संक्षेपसार रूप विवरण 52 वीं गाथा तक दिया गया है। आगे शुभ, अशुभ भावों, ध्यानों छहद्रव्य, पंचास्तिकाय, सप्ततत्व नवपदार्थ, बंध, अनुप्रेक्षादि का वर्णन करते हुए अन्तरात्मा, बहिरात्मा का तथा संयमी–असंयमी का, विरति–अविरति आदि का विवरण है जो गाथा 7 तक आता है। इसके पश्चात–सम्यग्ज्ञान को महिमा वर्णित है। पतिभक्ति, स्वामी भक्ति, गुरुभक्ति का वर्णन करते हुए आत्म स्वरूप की प्राप्ति का उपदेश है जो ज्ञान, ध्यान पर विशेष बल देता है। आगमाम्यति, आधारना तथा अनुशासित प्रवृत्ति पर भी बल दिया गया है मुनि चर्या, संयम, तप, ध्यान की सिद्धि के अर्थ हैं। अत में श्रावको के मूलगुण, सम्यक् दर्शनादि का तथा मुनि धर्म का विवरण देते हुए आत्मा ही को समय बतलाया गया है। इत्यादि।

प्रस्तुत प्रकाशन में सर्वप्रथम प्राकृत गाथा का अन्वयार्थ दिया गया है।



तत्पश्चात् अर्थ दिया गया है। अन्वयार्थ देने के कारण यह ग्रन्थ महत्वपूर्ण बन गया है तथा पाठ्य पुस्तक के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

श्री मल्लि पुराण

सन्मार्ग दिवाकर, अतिशय योगी, बीसवीं सदी के युग प्रमुख परमपूज्य आचार्य 108 श्री विमल सागर जी महाराज की हीरक जयन्ती के मांगलिक प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ (भारतवर्षीय विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र.का 67 वाँ पुष्प है।



श्री मल्लि पुराण **पूज्य श्री सकल कीर्ति जी**
हिन्दी अनुवाद – पं. गजाधरलाल जी न्यायतीर्थ/ पृष्ठ संख्या–8+138=146/ प्रकाशन वर्ष 1989–90/ प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र / प्राप्ती स्थान – (1) आचार्य श्री 108 विमल सागर महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राजस्थान (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनीरोड़, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–67

पूज्य श्री सकलकीर्ति जी के प्रस्तुत ग्रन्थ में उन्नीसवें तीर्थंकर **मल्लिनाथ जी** के चारित्र का संक्षिप्त वर्णन है। ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद **पं.गजाधर लाल जी न्यायतीर्थ** ने किया है। अनुवाद भाषा श्रावकों के अध्ययन की दृष्टि से सुबोध / सरल है जिससे कथानक प्रवाह में कहीं अवरोध परिलक्षित नहीं होता है।

ग्रन्थ के सात परिच्छेदों में **तीर्थंकर प्रभु मल्लिनाथ भगवान** का जीवन वृत्तान्त वर्णित है। ग्रन्थ के आरम्भ में ग्रन्थकार एवम् भाषाकर का मगला चरण है।

प्रथम परिच्छेद में 116 श्लोक है जिनमें रत्नत्रय का वर्णन किया गया है **द्वितीय परिच्छेद** में 102 श्लोक हैं जिनमें रत्नत्रय प्रति का वर्णन है। **तृतीय परिच्छेद** में 104 श्लोक है जिसमे अहमिंद्र का भव वर्णन किया गया है।

गर्भ और जन्म इन दो कल्याणकों का वर्णन है **चतुर्थ परिच्छेद** के 53 श्लोक में। **पाँचवे परिच्छेद** में **भगवान मल्लिनाथ जी** की वैराग्य उत्पत्ति का वर्णन है जो कि 108 श्लोक में वर्णित है। ग्रन्थ के **छटवें परिच्छेद** में 155 श्लोक है जिनमें **भगवान मल्लिनाथ जी** का दीक्षा कल्याण एवम् केवल ज्ञान कल्याण का भाव मयि, ज्ञानमयि वर्णन किया गया है। **ग्रन्थ का अन्तिम परिच्छेद** (सातवाँ) में **तीर्थकार मल्लिनाथ जी** के धर्मोपदेश तथा निर्वाण गमन का वर्णन है जो कि 163 श्लोकों में किया गया है। ❑

धार्मिक आचरण राष्ट्रीय चारित्र को उन्नति देने वाला है। व्यक्ति–व्यक्ति से राष्ट्र बनते हैं और उनके ही आचरणों से राष्ट्र का निर्माण होता है। जैसे तन्तु होते हैं, वैसे ही पट बनता है। यदि राष्ट्र के लोग धर्मप्रिय होंगे तो राष्ट्र धर्ममय होगा। आखिर राष्ट्र व्यक्तियों से ही है। व्यक्ति-सत्ता -विहीन भूखण्ड राष्ट्र नहीं कहा जा सकता। **– आचार्य विद्यानन्द मुनि**

श्री विमल पुराण-भाषा

युग प्रमुख, सन्मार्ग दिवाकर, निमित्तज्ञानी परमपूज्य **आचार्य 108 श्री विमल सागर महाराज** की हीरक जयन्ती के मंगल प्रसंग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारत वर्षीय विद्वत परिषद्, सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का 68 वाँ पुष्प है।

श्री विमल पुराण भाषा
श्री ब्रम्हचरीश्वर कृष्णदास विरचित

हिन्दी अनुवाद– पं. श्री लाल जैन काव्यतीर्थ/पृष्ठ संख्या 8 + 110 = 118/ प्रकाशन वर्ष– 1989-90/ प्रकाशन– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरी (दतिया) म.प्र.। प्राप्ति स्थान– (1) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका लोनीरोड़, दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–68



इस ग्रन्थ में जैन तीर्थंकरों में तेरहवे तीर्थंकर **श्री 1008 विमलनाथ जी भगवन्** के जीवन चारित्र का वर्णन दस सर्गों मे किया गया है। ग्रन्थ का सांक्षिप्त हिन्दी अनुवाद प श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ ने किया है। ग्रन्थ के अनुवादक ने इस बात का ध्यान रखा है कि ग्रन्थ अध्ययन में सामान्य श्रावक की रुचि बनी रहे। इसीलिए प्रस्तुत ग्रन्थ की भाषा सरलता, सहजता को लिए हुऐ कथानक को आरम्भ से समापन तक ले जाने में सक्षम है। श्रावकों की रुचि उसमें सदैव बनी रहती है।

ग्रन्थ का आरम्भ समस्त तीर्थंकर भगवान को नमस्कार करते हुए ग्रन्थकार ने किया है। इस पुराण में बहुत से भव्य जीवों की कथाये है, धर्म नामक बलभद्र और स्वयंभू नामक नारायण और प्रतिनारायण का चरित्र भी कृति में वर्णित है इसीलिए ग्रन्थ समुद्र के समान गम्भीर भी है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के **प्रथम सर्ग** में राजा श्रेणिक का चारित्र पृष्ठ 27 में वर्णित किया गया है। **द्वितीय सर्ग** मात्र 5 पृष्ठों में है जिसमें पद्मसेन राजा के जीव सहस्त्रारेन्द्र के सुख का वर्णन है। **तृतीय सर्ग** में भगवान के जन्माभिषेकोत्सव का वर्णन है जो 6 पृष्ठो में किया गया है। कृति के **चौथे सर्ग** में 21 पृष्ठ है जिनमें श्री विमल नाथ जी के दीक्षा, ज्ञान कल्याणक, मधु प्रतिनारायण, स्वयंभू नारायण एवम् धर्म बलभद्र की ऋद्धि का वर्णन किया गया है। **पाचवें सर्ग** मे मंदर और मरु नामक राजपुत्रों को दिया गया धर्मोपदेश का वर्णन 7 पृष्ठों में किया गया है। **छटवें सर्ग** में वैजयंत, संजयंत, जयत का दीक्षा गृहण, संजयंत का उपसर्ग सहकर मुक्तिगमन, जयत का धरणीन्द्र पद प्राप्ति तथा गमन एवम् आदित्यान का समागम का वर्णन है। **सातवें सर्ग** की कथानक 10 पृष्ठों में है जिसमें सिहसेन के जीव श्री धरदेव, की उत्पत्ति का वर्णन है। कृति का **आठवां सर्ग** 12 पृष्ठों का है जिसमें रामदत्ता के जीव रत्नमाला का एवं पूर्णचन्द्र के जीव रत्नायुध का अच्युत देव होने और सिहंसेन के जीव वज्रायुध का सर्वार्थसिद्धि मे अहमिन्द्र होने की कथानक है। **नवाँ सर्ग** में मेरु मंदर की दीक्षा तथा भगवान, विमलनाथ जी के मोक्ष कल्याण का वर्णन है। कृति का अतिम **दसवाँ सर्ग भगवान, विमलनाथ जी** के निर्वाण कल्याणक मेरु गणधर का ध्यान और उपसर्ग तथा मेरु और मंदर गणधरों के निर्वाण प्राप्त हाने की कथानक समेटे हुए है। एवम् अन्त में अनुवादक का परिचय दिया गया है। ❑

श्री नेमिनाथपुराण

सन्मार्ग दिवाकर **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मांगलिक अवसर पर माँ जिनवाणी की सेवा संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित **श्री नेमीनाथ पुराण** भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्-सोनागिरि, दतिया (म.प्र.) का ६९वाँ पुष्प है जो अपनी सुवास से आध्यात्म जगत के श्रावको को, आध्यात्म की सुवास से सराबोर करने में सक्षम है।

श्री नेमिनाथ पुराण **स्व. श्रीमद् ब्रह्म. नेमिचन्द्र विरचित**
हिन्दी अनुवाद-उदयलाल कासलीवाल/ प्रकाशन वर्ष १९८९-९०/पृष्ट संख्या २४०+१२ =२५२ / प्रकाशन - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्-सोनागिरि,दतिया (म.प्र.)/प्राप्ति स्थल - आचार्य विमल सागर जी संघ अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बाँसवाड़ा) राज.
हीरक जयन्ती प्रकाशनमाला पुष्प संख्या -६९

आर्ष परम्परा की रक्षार्थ एवं अन्तिम तीर्थंकर महावीर का शासन निरन्तर अवाध गति से चलता रहे, इस हेतु प्रयास करना प्रत्येक जिन अनुनायी का प्रथम कर्तव्य है। इस क्रम में श्री नेमिनाथ पुराण का पुनः वास्तविक रुप मे आगमानुसार प्रकाशन होना एक सुखद वातावरण बनाता है।

महाभारत काल का एक भाग श्री नेमिनाथ पुराण का एक हिस्सा है जो जिनागम संस्कृति की प्राचीनता को प्रकाश में लाता है। इसके प्रकाशन से स्पष्ट हो जाता है कि जिन आगम के **२२वें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ जी** का जन्म महाभारत काल में श्री कृष्ण के समकक्ष हुआ था और श्रीकृष्ण तीर्थंकर नेमिनाथ के चचेरे भाई थे। इस प्रकार जिन आगम के शेष आरम्भिक २१ तीर्थंकर इस काल के पूर्व में हुए थे जो जैनागम की प्राचीनंता को स्वतः ही स्पष्ट करते हैं।

प्रस्तुत पुराण १६ अध्यायों में तैयार किया गया है जिसमें नेमिनाथ जी के पूर्वभव से लेकर निर्वाण तक का वर्णन है। इस ग्रन्थ के १६ अध्याय निम्नानुसार है।

पहला अध्याय - मंगलाचरण एवं प्रस्तावना

दूसरा अध्याय - नेमिनाथ और इनके पूर्वभव।

तीसरा अध्याय - हरिवंश का वर्णन।

चौथा अध्याय - वसुदेव का देशत्याग और स्त्री लाभ सहित आगमन।

पाँचवा अध्याय - कंस व कृष्ण का जन्म, कृष्ण द्वारा चाणुरभल्ल की मृत्यु।

छटँवा अध्याय - जरासंघ की मृत्यु और नेमिजिन का गर्भावतरण।

सातवाँ अध्याय - देवों द्वारा नेमिजिन का जन्मोत्सव।

आठवाँ अध्याय - कृष्ण, बलदेव की दिग्विजय यात्रा।

नौवाँ अध्याय - नेमिजिन का तपकल्याण।

दसवाँ अध्याय - नेमिजिन को केवल - लाभ व समवशरण निर्माण।

ग्यारहवाँ अध्याय - नेमिजिन का उपदेश।

बारहवाँ अध्याय - कृष्ण को नेमिजिन का तत्वोवदेश।

तेरहवाँ अध्याय - देवकी, बलदेव और कृष्ण के पूर्व भव।

चौदहवाँ अध्याय - कृष्ण की आठ पटरानियों के पूर्वभव।

पन्द्रवाँ अध्याय - प्रद्युम्न हरण, विद्यालाभ और मातृ-समागम।

सोलहवाँ अध्याय - कृष्ण की मृत्यु, पाण्डव और नेमिजिन का निर्वाण।

इस प्रकार यह ग्रन्थ, जैनागम इतिहास का परिचय कराने में एक उपयोगी ग्रन्थ है। जैन इतिहास का वर्तमान मे (लौकिक शिक्षा में) प्रचलित शिक्षा में सही तथ्यों का समावेश हो सके इस दिशा में भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म.प्र. द्वारा किया गया यह प्रयास स्वागत योग्य तो है ही किन्तु इसका समुचित प्रसार हो सके इस हेतु स्व स्वाध्याय एवं ऐसे प्रकाशनों को इतिहास विज्ञों तक पहुँचाना भी अनिवार्यता के क्रम में आना चाहिये। इस हेतु द्रव्यदाता / अर्थ सम्पन्न महानुभावों को चाहिये कि देश के प्रसिद्ध इतिहासकारो तक इस कृति को उपलब्ध कराने के सफल सार्थक प्रयास के लिये योजना बनाकर नये इतिहास के निर्माण में अपना सहयोग प्रदान करें।

सिद्धिप्रियस्तोत्रम्

परम तपस्वी, शान्ति-सुधामृत के दानी **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मांगलिक प्रसंग पर भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद, सोनागिरि (दतिया) म.प्र. द्वारा माँ जिनवाणी की सेवा संकल्प के अन्तर्गत प्रकाशित यह ग्रन्थ प्रकाशन माला का ७३ वाँ पुष्प है ।

सिद्धिप्रियस्तोत्रम्
श्री देवनन्दी मुनि प्रणीतम्

सम्पादक - डॉ. श्रेयांसकुमार जैन एवं डॉ. जयकुमार जैन/पृष्ठ संख्या ४+४८=५२ / प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् - सोनागिरि (दतिया) म.प्र./प्राप्ति स्थान - (१) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बांसवाड़ा) राज. (३) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ - दिल्ली।

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -७३

भारतीय वाङ्मय में स्तोत्र की परम्परा आदिकाल से चली आ रही है । संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्र रूप से तो, स्तोत्र साहित्य की बहुलता से रचना हुई ही है किन्तु महाकाव्यादि में भी मंगलाचरण के रूप मे अथवा मध्य में भी स्तोत्र दिये गये हैं । जैन साहित्य में स्तोत्र को थुदि (स्तुति), स्तव, स्तवन आदि अनेक संज्ञायें दी गई हैं । जैन स्तोत्रों में चौबीस तीर्थंकरों के गुणगान पर विरचित स्तोत्र अधिक हैं ।

जैनधर्म के प्राचीन स्तोत्र प्राकृत भाषा में हैं । ये जैन स्तोत्र दार्शनिक/ तार्किक/ आलंकारिक आदि बहुमुखी धारा में प्रवाहित हैं। देवनन्दी मुनि की प्रस्तुत कृति आलंकारिक शैली में सर्वातिशायी है । जैनशास्त्र भण्डारों में उसकी अनेकों हस्त लिखित प्रतियाँ आज भी उपलब्ध हैं ।

देवनन्दी मुनि की इस कृति में चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति एक-एक पद्य में की गई है । पद्यों में, यमक की छटा में वसन्त तिलका छन्द का मधुर प्रयोग किया गया है । स्तोत्र का प्रारम्भ सिद्धिप्रिय शब्द से हुआ है अत: इसी नाम से इसकी प्रसिद्धि भी है । प्रस्तुत कृति में कुल २६ पद्य हैं ।

कृति के अन्त में मन्दालसा स्तोत्र दिया गया है जिसमें कुल १० गाथायें हैं ।

कृति का हिन्दी अनुवाद सरल/सुबोध एवं बोधगम्य भाषा में है जिससे श्रावकों को कृति अध्ययन करने में रुचि बनी रहती है । ■

सुदर्शन चरितम्

वात्सल्य रत्नाकर **आचार्य १०८ श्री विमल सागर जी महाराज** की हीरक जयन्ती के मंगल अवसर पर जिनागम साहित्य प्रकाशन संकल्प के अन्तरगत प्रकाशित सुदर्शन चरितम् कृति भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (दतिया) म.प्र. का ७४ वाँ पुष्प है।

सुदर्शन चरितम् विद्यानन्दि
हिन्दी अनुवाद : डॉ. रमेशचन्द्र जैन बिजनौर (उ.प्र.) प्रकाशन वर्ष : १९९२/- पृष्ठ संख्या २८+२२० = २४८/ प्रकाशक - भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिरि (दतिया) म.प्र./ प्राप्ती स्थान - (१) आचार्य विमल सागर जी संघ (२) अनेकान्त सिद्धान्त सुमिति लोहारिया (बाँसवाड़ा) (३) श्री दिगम्बर मन्दिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड़ दिल्ली। मुद्रक - वर्धमान मुद्रणालय वाराणसी
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या -७४

श्री विद्यानन्दी जी ने सुदर्शन चरित में मुनिश्री सुदर्शन का चरित्र संस्कृत काव्य के रुप में प्रस्तुत किया है। जैन परम्परानुसार सुदर्शन भगवान महावीर के पाँचवें अन्तकृत केवली हुए है। उन्होंने कठिन तपश्चरण किया, घोर उपसर्ग सहे और अन्त में मोक्ष की प्राप्ती की।

पञ्च नमस्कार मन्त्र के माहात्म्य को दर्शाने हेतु महामुनि सुदर्शन का चरित्र प्रायः कथा ग्रन्थों में वर्णन किया जाता है। उस मन्त्र की साधना से सभी प्रकार की ऋद्धि -सिद्धियाँ प्राप्त की जा सकती है। यह मन्त्र आत्मिक शक्ति का विकास करता है तथा उसकी साधना से लौकिक और परलौकिक सभी कार्य सिद्ध हो जाते है।

चरितकाव्य के लक्षणों से परिपूर्ण यह सुदर्शन चरित १३६२ पद्यों में द्वादश अधिकोश में सम्पूर्ण हुआ है। कवि का उद्देश्य कवित्व शक्ति प्रदर्शन न होकर मुनि सुदर्शन के श्रेष्ट एवम् निष्कलुष चारित्र का सरलभाषा में प्रतिपादन करना था। सम्पूर्ण ग्रन्थ में शान्ति रस की धारा प्रवाहित है। ग्रन्थ में कहीं -कहीं मनोहारी और अर्थगाम्भीर्य की विशेषता लिये सुभाषितों का प्रयोग सहज समावेश है।

ग्रन्थ के चतुर्थ अधिकार में विद्या महत्ता दर्शाते हुए कवि ने लिखा है -

विद्या लोकद्वये माता विद्या शर्मप्रकाशकरी।
विद्या लक्ष्मीकरा नित्यं विद्या चिन्तामणिर्हितः ॥१२॥

ग्रन्थ में कहीं -कहीं थोड़े से शब्दों में बड़ी बात कह दी गई है। यथा -

कामिनां क्व विवेकता ॥६।७४
परोपदेशने नित्यं सर्वोऽपि कुशलो जनः ॥६।९२

नवम् अधिकार में द्वादशानुप्रेक्षाओं का सुन्दर विवेचन हुआ है। द्वादश अधिकार में २७ से ३६ वें पद्य तक नमस्कार मन्त्र की महिमा का वर्णन करते हुए उसे सुख प्राप्ती का साधन/ स्वर्ग और मोक्ष का एक मात्र कारण/ विघ्नों का निवारक तथा महाप्रभावक वर्णित किया गया है।

ग्रन्थ के प्रत्येक अधिकार में जैन धर्म के विशिष्ट पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग हुआ है। जो कि जैन अध्येताओं के लिये प्रायः सुगम है। अभयमती की श्रृंगारिक चेष्टाओं के समाने सुदर्शन का निर्विकार रहना, उनकी धीरता / गम्भीरता और व्रत के प्रति दृढ़ निष्ठा को अभिव्यक्त करता है। अनुप्रेक्षा अधिकार को छोड़कर कथा अपने प्रवाह से चलती है। बीच-बीच में धार्मिक चर्चाओं का समावेश भी है जिनसे पाठकों में ऊब पैदा नही होती है अपितु आदर्श जीवन पथ पर चलने की प्रेरणा प्राप्त होती है।

प्रस्तुत ग्रन्थ निम्न द्वादश अधिकारों में पूर्ण किया गया है -

अधिकार १- महावीर समागम / अधिकार २- श्रावकाचार तत्वोपदेश / अधिकार ३- सुदर्शन जन्म महोत्सव / अधिकार ४- सुदर्शन मनोरमा विवाह/ अधिकार ५- सुदर्शन की श्रेष्ठी प्राप्ती / अधिकार ६- कपिल का प्रलोभन तथा रान्री अभयमती का व्यामोह अधिकार ७- अभयाकृत उपसर्ग निवारण व शील प्रभाव वर्णन/ अधिकार ८- सुदर्शन व मनोरमा का पूर्वभव वर्णन / अधिकार ९- द्वादश अनुप्रेक्षा वर्णन/ अधिकार १०- सुदर्शन का दीक्षा ग्रहण और तप/ अधिकार ११- केवलज्ञानोत्पत्ति/ अधिकार १२ - सुदर्शन मुनि की मोक्ष प्राप्ति।

अमृता शीतिः

युगप्रमुख चारित्रशिरोमणि सन्मार्ग दिवाकर पूज्य आचार्य श्री विमल सागर जी महाराज श्री हीरकजयन्ती पर प्रकाशित–पुष्प संख्या–75

अमृता शीतिः (श्रीयोगीन्दु देव विरचित)
हिन्दी अनुवाद–श्री 105 आर्यिका विजयमती माताजी/ प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद सोनागिर, दतिया/ सस्करण–सन् 1989–90/ पृष्ठ 14–80 = 98/ प्राप्ति स्थान–(1) आचार्य श्री विमलसागर सघ। (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया, बांसवाडा (राज)। (3) श्री दि जैन मदिर, गुलाबवाटिका, दिल्ली।
हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या:–75

प्रस्तुत ग्रथ योगिन्द्र देव द्वारा विरचित है। उनके अन्य ग्रथों की भाति यह ग्रंथ भी ध्यान, धारणा, प्राणायाम, वायुसचार, नाद श्रवण, आदि योगविद्याओं का युक्ति–युक्त वर्णन करता है। यह स्वानुभूतिकी कुजी ही है। ध्यानकी आधारशिला है। सुख का निधान और आनन्द की निधि है। परमानन्द प्राप्ति का सुगम, सरल, सुस्पष्ट मार्ग प्रकाशित करता है। साधुजीवन ही क्या, मानवमात्र का कर्त्तव्य समाधि सिद्धि है। निर्विकल्प मन जिस स्वानुभाव को पा जाता है, उसी हेतु ये उपदेशप्रद रचना है। 82 पद्य सस्कृत मे है जो विभिन्न छन्दों में रचित हैं। इसमें जैन धर्म के अनेक विषयों की चर्चा है। प्रस्तुत ग्रथ मे अंतिम पद में योगींद्र शब्द आया है जो श्री चन्द्रप्रभु भगवान का विशेषण भी होसकता है। इस ग्रन्थ मे विद्यानन्दि, जहासिहनन्दि और अकलक देव के भी कुछ पद्य हैं। कुछ पद्य भर्तृहरि के शतकत्रयसे मिलते–जुलते हैं। पद्मप्रभमल्लधारी ने अपनी नियमसार की टीका में इसके तीन पद्य 57,58, 59 उद्धत किये है। इस के धर्म ध्यान प्रकरण में रचयिता ने श्लोक 39 से 55 पर्यन्त पवनंजय, विन्दु प्रवेश आराधना, मूलानाहत अराधना, अनाहत आराधन, नादोप्रत्ति स्थान, ज्योति अपाहत, समुद्र घोषोत्पत्ति, नादाकवर्णन, प्रभृति विषयों का विशद विवरण दिया है। प्राणायाम की साधना स्पष्ट है तथा शोधार्थियों के लिए महत्वपूर्ण है। आर्त्तरोद्र का परित्यागकर धर्म ध्यान, शुक्लध्यान में स्थिरता हेतु आत्मानुभूति या परमसमाधि की ओर बढाने हेतु प्रेरणा स्पद ग्रंथ है।

सर्वप्रथम मोहमाया से निर्लिप्त कर, शरीर व्यामोह को दूर करने का उपदेश है। फिर परिषह जय, साम्यभाव, आदि की ओर ले जाते हुए समाधि मे आत्मानन्द की प्राप्ती हेतु ऐसा ग्रथ अप्रातिम है। भाषा मे दुरूहता होते हुए भी विषय की सुलभ प्रतीति है।

पू आर्यिका विजयमती जी ने अन्यार्थ के साथ सरलार्थ भावार्थ तथा विशेष आगमोक्त उकृतियॉ देते हुए, इसे भव्य जीवो को अभूतपूर्व रूप से कल्याण कारी बना दिया है। जैसे–

धर्म सुखस्य हेतु हैतुर्न विराधक: स्वकार्यस्य।
तस्मात्सुखमंगलिया माभूर्धर्मस्य विमुखस्त्वम्॥



योगीन्दु देव

मोक्षशास्त्र

चारित्र चक्रवर्ती, सन्मार्ग, दिवाकर, निमित्त ज्ञान शिरोमणि **आचार्य 108 श्री विमल सागरजी महाराज** की हीरक जयन्ती पावन प्रंसग पर जिनवाणी प्रसार की सेवा सकल्प के अन्तरगत प्रकाशित यह ग्रन्थ भारत वर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद् सोनागिरि (दतिया) म प्र का 77 वाँ पुष्प है।

मोक्ष शास्त्र
श्री उमा स्वामी विरचित

टीकाकार– पं.पन्नालाल जैन साहित्याचार्य/ पृष्ठ सख्या–272/प्रकाशन वर्ष–1994/ प्रकाशक– भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत परिषद्, सोनागिरी (म.प्र.) प्राप्ती स्थान–(1) आचार्य श्री विमल सागर महाराज संघ (2) अनेकान्त सिद्धान्त समिति, लोहारिया (बासवाडा) राज (3) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, गुलाब बाटिका, लोनी रोड, दिल्ली/ मूल्य रु 20/-

हीरक जयन्ती प्रकाशन माला पुष्प संख्या–77

तत्वार्थसूत्र जैनागम का अत्यन्त प्राचीन शास्त्र है। इसकी रचना शैली ने तात्कालिक तथा उसके बाद के समस्त विद्वानों को अपनी ओर आकृष्ट किया है। यही कारण है कि **पूज्यपाद, अकलंक स्वामी, विद्यानन्द** आदि आचार्यों ने भी इस ग्रन्थ पर महाभाष्य रचे हैं। इस ग्रन्थ में **आचार्य उमास्वामी** ने पथभ्रात संसारी पुरुषों को मोक्ष का सच्चा मार्ग बतलाया है– **सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः**" अर्थात सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यकचारित्र इन तीनों की एकता ही मोक्ष का मार्ग है। ग्रन्थ मोक्षमार्ग का प्ररूपण करता है इसीलिए इसे मोक्षशास्त्र भी कहा जाने लगा है।

ग्रन्थ में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवम् सम्यक् चारित्र का विशद विवेचन किया गया है। सम्पूर्ण शास्त्र दस अध्यायो मे आगम सूत्रों को समेटे हुए है। **प्रथम अध्याय** में सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान का विवेचन 33 सूत्रों मे है। **दूसरे अध्याय** के 53 सूत्रो मे सम्यग्दर्शन के विषयभूत जीवतत्व के असाधारण भाव, लक्षण, इन्द्रियाँ, योनी, जन्म तथा शरीरादि का वर्णन है। **तीसरे अध्याय** में जीवतत्व का निवास स्थान बतलाने हेतु नरकलोक और मध्यलोक का सुन्दर प्ररूपण है-- 39 सूत्र में। **चतुर्थ अध्याय** मे 42 सूत्र है, जिनमें ऊर्ध्वलोक तथा चार प्रकार के देवो के निवास स्थान, भेद, आयु, शरीर आदि का वर्णन है। **पाचवें अध्याय** में अजीव तत्व का वर्णन है जो कि 42 सूत्र मे समाहित है। **छटवें अध्याय** मे 27 सूत्र है जिनमे आस्त्रव का वर्णन करते हुए आठो कर्मों के आस्त्रव के कारण बताए गए है। **सातवें अध्याय** मे 39 सूत्र है जिनमे शुभाश्रव का वर्णन है। बन्धतत्व का वर्णन है **आठवें अध्याय** के 26 सूत्रो मे। **नवमें अध्याय** मे सवर और निर्जरा तत्व का वर्णन किया गया है। इस अध्याय मे 47 सूत्र है। **दसवें अध्याय** मे 9 सूत्र हैं जिसमें मोक्षतत्व का सक्षिप्त विवेचन किया गया है। **प्रत्येक अध्याय** के अन्त मे प्रश्नावली दी गई है।

ग्रन्थ के **दसवें अध्याय** के बाद **शंका–समाधान** दिया गया है। जो कि प फूलचन्द जी जैन सिद्धान्तशास्त्री द्वारा प्रतिपादित है। इसके बाद लक्षण सग्रह मुद्रित है। कृति के अन्त मे परीक्षा बोर्ड के प्रश्न पत्र दिये गए हैं।

ग्रन्थ के टीकाकार पं पन्नालाल साहित्याचार्य जी ने शिक्षार्थियों को विषय समझने में कठिनाई न हो इस हेतु कृति मे यथा स्थान टिप्पणी, नोट, चार्ट, नक्शा तथा आवश्यक भावार्थ आदि देकर कृति को सरल एवम् रोचक बनाने का सुन्दर सुफल प्रयास किया है। इस हेतु वयोवृद्ध पण्डित जी साधुवाद के पात्र है। ❑

ॐ



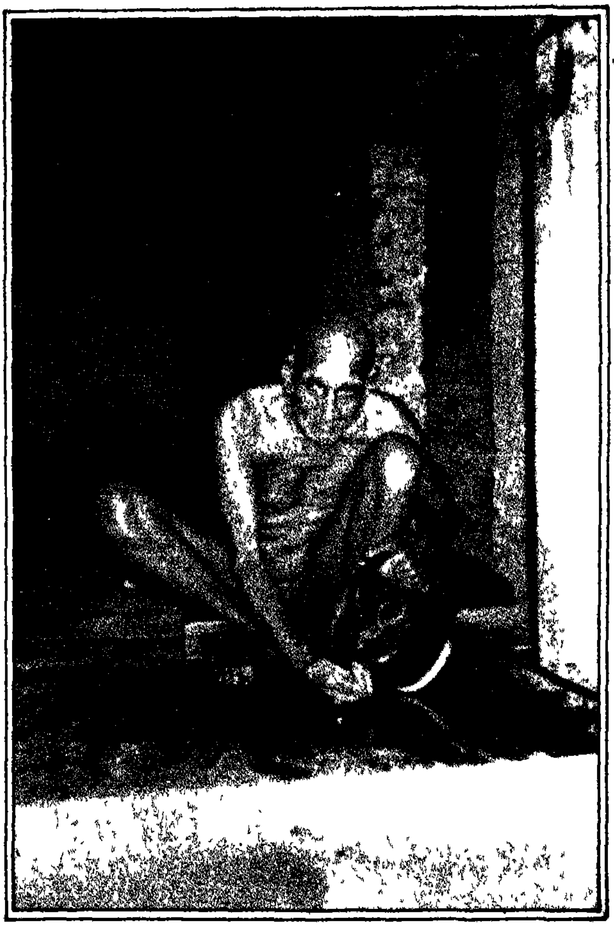
आचार्य श्री विमल सागर महाराज

परमपूज्य आचार्य 108
श्री विमल सागर जी महाराज
के 79 वें जन्मोत्सव पर
पावन युगल चरणों में
सविनय नमोऽस्तु

विनीत

जयपाल जैन
1984 – गली नं. 4
कैलाश नगर
दिल्ली

बोलते चित्र



ॐ



ॐ



बोलते चित्र

बोलते चित्र



मंदिर का शिलान्यास–

सहारनपुर मल्हीपुर रोड पर भरत विहार कालोनी में श्री दि.जैन मंदिर का शिलान्यास किया गया।

गुना में जैन विज्ञान गोष्ठी–

मुनि श्री क्षमासागर जी, ऐलक श्री उदार सागर जी एवं सम्यक्त्व सागर जी का चार्तुमास श्री पार्श्वनाथ दिग.जैन मंदिर में हो रहा है। उन्हीं के सान्निध्य में यहाँ 26 से 28 अगस्त तक अखिल भारतीय जैन विज्ञान विचार संगोष्ठी हुई।

टूण्डला में धर्म प्रभावना–

यहाँ श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में बालाचार्य मुनि श्री नेमिसागर जी (ससंघ) तथा ऋषभपुर चौराहा में मुनिश्री अमितसागर जी का ससघ चार्तुमास हो रहा है।

मानकपुर में बूचड़खाने का विरोध–

यहाँ खोले जा रहे यान्त्रिक बूचडखाने का समाज सेवियों ने कड़ा विरोध किया और चेतावनी दी कि बूचडखाना खुलने पर जन आंदोलन किया जायेगा।

दिल्ली। दिगम्बर जैन मन्दिर धर्मपुरा गाँधी नगर से श्री रमेश चंद जैन एवं श्रीमती शशिबाला जैन ने धर्मप्रभावना हेतु सत्यवती कुटी से साहिबाबाद तक की पद यात्रा की।

●**भीलवाड़ा** में सुभाष नगर स्थित दिगम्बर जैन मंदिर से अज्ञात चोर अष्ट धातु की निर्मित छह मूर्तियाँ चुरा कर ले गये।

● **तिजारा** 16 अगस्त को यहाँ श्री चंद्राप्रभु देहरा का वार्षिक मेला प्रगट तिथि के रुप में सम्पन्न हो गया, हजारों श्रद्धालुओं ने भाग लिया।

तीर्थंकर पार्श्वनाथ निर्वाणोत्सव पर प्रदेश भर में श्री सम्मेदशिखर जी दिवस सम्पन्न

● **भगवान पार्श्वनाथ** का निर्वाण दिवस मुकुट सप्तमी को देश भर में **सम्मेद शिखर दिवस** के रुप में मनाया गया जिससे जैन समाज ने यह स्पष्ट कर दिया कि शिखर जी के प्रश्न पर समस्त जैन समाज एक है।

धर्मसार समाचार

❑ *सिंघई आनन्द जैन प्रधान उप संपादक*

(1) **दिल्ली** में आयोजित अभूतपूर्व मौन रैली अहिंसक सत्याग्रह और केन्द्र को दिये जाने वाले ज्ञापन पर हजारों जैनों के हस्ताक्षर इस बात के प्रतीक हैं कि धार्मिक आस्था के चरम बिन्दु **शिखर जी** के प्रति देश भर की जैन समाज में एक व्यापक चेतना उत्पन्न है।

(2) **इन्दौर** में पार्श्वनाथ निर्वाण दिवस पर एक अंभूतपूर्व रैली निकाली गई। संभागायुक्त को 25 हजार जैनियों से हस्ताक्षरित ज्ञापन दिया गया।

(3) **उज्जैन** में मुकुट सप्तमी का दिन सम्मेद शिखर दिवस के रुप में मनाया गया 2540 हस्ताक्षर वाले ज्ञापन को सम्पूर्ण जैन समाज ने ए.डी.एम.को भारत के राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री व गृहमंत्री को भेजने के लिए दिया।

(4) **मुजफ्फरपुर** नगर मे 14 अगस्त को जिला मुख्यालय को सम्मेद शिखर जी बाबत् ज्ञापन सौंपा।

(5) **देहरादून** में 18 अगस्त को सम्मेद शिखर जी के सम्बन्ध में समस्त जैन समाज की ओर से जिलाधीश महोदय को ज्ञापन दिया।

(6) **खण्डवा** में समस्त दिगम्बर जैन समाज की ओर से ,भारत सरकार के गृहमंत्री के नाम एक ज्ञापन भेजने हेतु अपर कलेक्टर श्री पाडे जी को समाज के लोगों द्वारा ज्ञापन दिया गया।

(7) **जबलपुर** में पार्श्वनाथ निर्वाण दिवस के दिन जैन समाज द्वारा कमानिया गेट

आत्म हितैषी—इन्द्र व
चक्रवर्ती के भोगों को
भी रोग समझाता है।

— विमल वाणी

ॐ

परमपूज्य आचार्य 108
श्री विमल सागर जी महाराज
के
79 वें जन्मोत्सव पर
पावन युगल चरणों में
सविनय नमोऽस्तु

विनीत

वीरेन्द्र कुमार जैन बड़जात्या
49 ए— स्ट्रांग रोड— दो तल्ला
कलकत्ता— 6

दूरभाष— आफिस— 2480699 & 2489769
निवास— 302049

से एक रैली निकाली गई जिसने जिलाध्यक्ष कार्यालय पहुचकर जिलाध्यक्ष एम डी.उपाध्याय को सम्मेदशिखर जी में व्याप्त कुव्यवस्था को समाप्त करने के लिए ज्ञापन दिया।

(8) **ललितपुर** में सम्मेदशिखर जी के बारे मे जिलाधिकारी को जैन समाज द्वारा ज्ञापन दिया गया जिस पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर उन्होंने गृहमत्री भारत सरकार को भेजने का आश्वासन दिया।

(9) **पाटन** जैन समाज ने सम्मेद शिखर जी की पवित्रता बनाये रखने तथा तीर्थस्थल के आसपास फैले हुए क्षेत्र और जनजातियो के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए वहाँ के प्रभारी अधिकारी को ज्ञापन सौंपा।

(10) **नवादा** जैन समाज द्वारा भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा का निर्वाण दिवस सम्मेदशिखर दिवस के रुप मे मनाया गया। 250 व्यक्तियो के हस्ताक्षर युक्त ज्ञापन स्थानीय अधिकारी को दिया गया।

● **शिखरजी (मधुवन)**। दि.15 जुलाई से 23 जुलाई तक वृहद सिद्धचक्र मडल एव विश्वशांति यज्ञ **108 सन्मार्ग दिवाकर आचार्य श्री विमलसागर जी एवं उपाध्याय भरत सागर जी महाराज तथा 105 गणिनी सुपार्श्वमति माता जी** के सानिध्य मे धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

● 23 जुलाई को वीर शासन जयन्ती वर्ष मनाया गया। आगामी सितम्बर 26, 27 28 को 108 आचार्य विमल सागर जी महाराज का जन्म दिवस सन्मार्ग दिवाकर वर्ष के रुप में मनाने की घोषणा समस्त दिगम्बर जैन समाज शिखर जी (मधुवन) ने की। **जैनेन्द्र कुमार जैन फिरोजाबाद**

जयपुर में सर्वतोभद्र

27 सितम्बर से 9 अक्टूबर तक जयपुर मे **आचार्यश्री दर्शनसागर जी** के ससंघ सानिध्य मे **पूज्य श्री ज्ञानमती** माता **जी** द्वारा लिखित सर्वतोभद्र मण्डल विधान का व्यापक स्तर पर आयोजन है। लगभग 2500 इन्द्र-इन्द्राणी सम्मिलित होंगे।

सल्लेखन पूर्वक समाधि

सत शिरोमणि 108 विद्यासागर जी का ससंघ चार्तुमास अतिशय क्षेत्र रामटेक मे हो रहा है स्थापना के दिन ब्रह्म. श्री धर्मचन्द्र जी जैन ने आचार्य श्री के समक्ष सल्लेखना की भावना के साथ क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। दिनाँक 19.8.94 दिन शुक्रवार को शाम 7.05 पर शात परिणाम से णमोकार मत्र का उच्चारण करते हुए नश्वर शरीर का त्याग किया।

दीक्षा दिवस सम्पन्न

पूज्य आर्यिका श्री चंदनमती माता जी का टिकैत नगर मे 5 वाँ दीक्षा दिवस मनाया गया।

शिखर जी पर जैनों को अधिकार मिलेगा—

नई दिल्ली 4 सितम्बर को केन्द्रीय गृह राज्य मत्री श्री राजेश पायलट ने आज यहाँ घोषणा की कि श्री सम्मेदशिखर जी तीर्थ पर दिगम्बर जैन समाज को उसका अधिकार मिलेगा। इस अवसर पर देश भर से लाखो व्यक्तियों द्वारा दिये गये हस्ताक्षर युक्त ज्ञापन का एक बडल श्री पायलट को प्रतीक रुप मे दिया गया। सभी ने एक स्वर मे कहा सम्मेद शिखर जी हमारा शाश्वत तीर्थ है उसकी रक्षा हो।

जयपुर—

श्री 105 श्रद्धामती माताजी का केंशलोच सम्पन्न हुआ। 21 अगस्त को दि जैन मंदिर मौंसा में **भगवान श्रेयाँस नाथ** का निर्वाण लाडू चढाया गया। **आचार्य श्री सन्मति सागर जी महाराज** ने आर्शीवचन मे कहा कि स्वर्ग मोक्ष की प्राप्ति शरीर से ममत्व छोडने से होती है। **प.पू. चरित्र चक्रवर्ती मुनिवर सम्राट आचार्य आदिसागर जी** ने दिगम्बर जैन धर्म के विरुद्ध कुरीतियों का उन्मूलन किया।

दिगम्बर जैन सम्मेदाचल विकास कमेटी

सभी को कमेटी **यह सूचना दे रही है कि तीर्थराज के लिए दान राशि सीधे "श्री दिगम्बर जैन सम्मेदाचल विकास कमेटी"** के नाम से ड्राफ्ट चैक या किसी बैंक शाखा के नाम ही भेजे या कमेटी के अध्यक्ष भागचन्द पाटनी सस्थापक राजेन्द्र जैन उपाध्यक्ष पुखराज ठोल्या या प्रचार मत्री श्री पवन कुमार को ही दान दें **अन्य किसी को नहीं देवें।**

वर्षायोग (कर्नाटक) –

पेटर वार जिला बोकारो मे उपाध्याय ज्ञान सागर जी का पावन वर्षायोग सम्पन्न हो रहा है।

बेलगाम–

श्री नेमिनाथ दि जैन मदिर मे श्रेयास नाथ निर्वाण दिवस एव रक्षाबधन पर्व सानद सम्पन्न हुआ।

आचार्य श्री विद्यासागर जी के परम **शिष्य 108 श्री सुखसागर जी मुनिराज का चार्तुमास बेलगाम नगरी में हो रहा है।**

गणेश प्रसाद वर्णी स्मृति पुरस्कार

स्याद्वाद महाविद्यालय भदैनी वर्णी जी की स्मृति मे जैन साहित्य की विविध विधाओं पर मौलिक· सृजनात्मक चिन्तन, शोध·परक लेखन कार्य के प्रोत्साहन हेतु प्रत्येक वर्ष ससम्मान पॉच हजार रुपये के पुरस्कार का घोषणा की गई है। 1994 के पुरुस्कार हेतु 30 दिसम्बर 1994 तक लेखक अपनी कृति की चार प्रतियॉ सयोजक श्री गणेश वर्णी साहित्य पुरस्कार समिति श्री स्याद्वाद महाविद्यालय भदैनी वाराणसी 221001 को भेज सकते है। नियमावली इसी पते से प्राप्त करे। **बाबूलाल**

श्रावस्ती तीर्थ पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा

श्रावस्ती जिला बाइराइच (उ.प्र.) मे दिनाक 7 दिसम्बर 94 से 12 दिसम्बर 94 तक नवीन चौबीसी व विशाल भव्य मदिर की पचकल्याणक प्रतिष्ठा होने जा रही है। जिसमे राष्ट्रपति प्रधानमत्री के साथ अन्य मत्रिगणो के पधारने की पूर्ण सम्भावना है।

सर्वोदय तीर्थ अमरकंटक में

- कार्तिक पूर्णिमा दिनांक 18–11–94 (शुक्रवार) को शान्ति विधान एव वार्षिक मेले का आयोजन हो रहा है। श्रावक गण इस महोत्सव में पधार कर धर्मलाभ अर्जित करते हुऐ नव निर्माणाधीन तीर्थक्षेत्र के विकास मे स्वेच्छानुसार अर्थ सहयोग प्रदान कर स्वजीवन मगलमय बनावे।
- सर्वोदय तीर्थक्षेत्र अमरकण्टक में **अन्नपूर्णा योजना** प्रारम्भ की गई है। इस योजना के अर्न्तगत क्षेत्र पर आने वाले यात्रिगणों को नि:शुल्क भोजन की व्यवस्था उपलब्ध है। इस योजना के अध्यक्ष है **श्री बाबूलाल जी जैन** एव महामत्री है **श्री महावीर प्रसाद जी सेठी।**
- सर्वोदय तीर्थक्षेत्र अमरकण्टक में निकट भविष्य मे एक **विकलांग केन्द्र** की स्थापना की जा रही है। योजना को क्रियान्वित करने हेतु 4 सदस्य विगत तीन माह से जयपुर (राज) मे प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे है।
- सर्वोदय तीर्थ अमरकण्टक में आदिवासियों के स्वास्थ्य कल्याण हेतु एक **चलित चिकित्सालय** लगभग 6 माह में प्रारम्भ हो रहा है। इस चिकित्सालय हेतु एक 407 टाटा गाड़ी का आर्डर दिया जा चुका है।
- सर्वोदय तीर्थ अमरकण्ट मे 21 कमरों का निर्माण तो विगत वर्षों में हो ही चुका है वर्तमान मे सुविधायुक्त 12 कमरों का निर्माण भी पूर्ण हो चुका है। इसी के साथ एक बड़ा हाल भी तैयार हो चुका है।

धर्मानुरागियों से विनम्र निवेदन है कि इस नव निर्मित क्षेत्र पर पधार कर धर्मलाभ लें तथा क्षेत्र विकास में अपना स्नेह प्रदान करने की अनुकम्पा करे। – स्वरुप चन्द जैन सोगानी।



आचार्य श्री विमल सागर जी
महाराज
जन्म जयंती महोत्सव

अवलोकित पथ

वर्णीभूषण प्रतिष्ठाचार्य पं. पारसमल जैन शास्त्री, भोपाल (म.प्र.)

आपका **जून–जुलाई 94 अंक कुन्दकुन्द वाणी मासिक** का प्राप्त हुआ। आपने इस अंक में **विद्याष्टकम् स्तोत्र**, मुनि परम्परा (श्री कुन्दकुन्दाचार्य की परम्परा के **आचार्य विद्यासागर जी महाराज** के सम्बंध में **मुनिश्री 108 श्री नियम सागर जी** ने चित्रबंध शैली में रचनाकार बीसवीं सदी में भी मुनि परम्परा जीवित रखने का जो वन्दनीय प्रयास किया उसे आपने कुन्दुन्दवाणी में प्रकाशित कर जैन समाज को मुनियों के प्रति आदर भाव/ आस्था व्यक्त करने मे पुनीत कार्य किया है। अंक पठनीय प्रशंसनीय एव जैन मन्दिरों में तथा जैन सस्थाओं में रहने योग्य है।

श्री छोटेलाल जैन, सीपरी बाजार, झांसी (उ.प्र.)

आपका **आचार्य विद्यासागर दीक्षा विशेषांक** (जून–जुलाई 94) अक जैन समाज के लिए धरोहर है। विश्वास है आपके द्वारा किया गया यह अद्वितीय प्रयास सदियो–सदियों तक याद किया जायेगा। श्री सम्मेद शिखर के ऊपर जो आजकल विवाद चल रहा है उस पर भी आप एक अक प्रकाशित करेंगे, ऐसी अपेक्षा करता हू

सन्ध्या जैन ''श्रुति'' जबलपुर (म.प्र.)

आपके प्रकाशन एव सम्पादन मे प्रकाशित **कुन्दकुन्द वाणी मासिक का आचार्य श्री विद्यसागर जी महाराज** दीक्षा विशेषांक (जून–जुलाई 94) पढा। अंक बहुत अच्छा लगा। सारगर्भित सम्पादकीय तो इस पत्रिका की गरिमा और भी बढा देती है। आश्चर्य तो तब होता है जब आप कामर्स विषय मे ग्रेजुएट होने के बाद हिन्दी इतनी सुन्दर लिखते हैं। निश्चित ही यह पत्रिका जैन साहित्य जगत मे एक विशिष्ट स्थान बनायेगी।

प्रगति प्रतीक बने कुन्दकुन्दवाणी।
हो यह जन–मन की कल्याणी।।

राजेन्द्र ''रतन'' जबलपुर (म.प्र.)/ अध्यक्ष धार्मिक एवं सास्कृतिक समिति (श्री दिगम्बर जैन पंचायत सभा, जबलपुर)

जून–जुलाई 94 पावन अंक, –कुन्दकुन्द वाणी के प्रति

शब्द नहीं कोई जिव्हा मे, कहने को कुछ शेष नही।
कैसे करुं वन्दना तेरी, कोई ऐसी सूझ नही।
विद्याष्टकम अमूल्य निधि है, जिसका कोई मूल्य नहीं।
विद्या की यह पावन निधि है ज्ञान भरा पावन भण्डार।
जो अनुशरण करेगा उसका, भव सागर से होगा पार।
कुन्दकुन्द वाणी परिभाषा, छन्दों की पूरी गाथा।
सदा बहे पावन सरिता सी, निर्झर निर्मल यह गंगा सी।
''रतन'' कामना यही हमारी, घर घर पहुचे कुन्दकुन्द वाणी।।

शलभ 748 गढ़ा– जबलपुर (म.प्र.)

आपके प्रकाशन एवं मार्गदर्शन में प्रकाशित **कुन्दकुन्द वाणी मासिक का जून–जुलाई 94 आचार्यश्री विद्यासागर महाराज विशेषांक** में समाविष्ट सामग्री इतनी रोचक लगी कि बयान नहीं कर सकता। वैसे मैंने इससे पूर्व के अको को भी सरसरी दृष्टि से देखा लेकिन यकीन मानिये यह पहला अक है जिसे मैने आदि से लेकर अत तक पढा। विद्याधर से विद्यासागर तक की यात्रा का सक्षिप्तीकरण, अनेक विद्वानों, सन्तो, कवियो की लेखनी एवम् आपकी सम्पादकीय का जादू इन सभी विषय सामग्री का एक साथ एक ही अक मे समाविष्ट करने का आपका प्रयास निश्चित ही सदैव याद किया जाता रहेगा। आगामी अकों के लिए मेरी शुभामनाएँ स्वीकारें।

श्री वीरेन्द्र जैन, चीचली (नरसिंहपुर) म.प्र.

भाई जी। **जून–जुलाई 94 का प्रकाशित अंक कुन्दकुन्द वाणी विशेषांक प्राप्त हुआ।** अंक देखकर बेहद प्रसन्नता हुई। रगीन पृष्ठों में मुद्रित चित्रो ने मन मोह लिया। **मुख पृष्ठ पर आचार्य विद्यासागर जी** का चित्र पूज्यनीय बन गया है। आपके इस पत्रिका के बारे में हमारा विचार यह है कि सूर्य को यदि दीपक का प्रकाश दिखा कर किसी से रोशनी के बारे में सलाह ली जाये तो वह कैसा लगेगा? **कुन्दकुन्द वाणी** तो चमकते सूर्य के समान है। और चन्द्रमा के समान शीतल है। आपके प्रकाशन में यह उच्च स्तर पर सदैव बनी रहे यही कामना है।